इकाई-1-समावेशन एवं अपवंचन (Inclusion and Marginalisation)

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 समावेशी शिक्षा का अर्थ
1.4 अपवंचन का अर्थ
1.4.1 अपवंचन के आधार
1.5 समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांत
1.5.1 पहुँच
1.5.2 समानता
1.5.3 भागीदारी
1.5.4 प्रासंगिकता
1.5.5 सशक्करण
1.6 प्रमुख योजनाएँ
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 स्वमूल्यंकित प्रश्नों के उत्तर
1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

शिक्षा में समावेशन का अर्थ है कि सभी बच्चों की शिक्षा एक साथ एक ही विद्यालय में हो। कक्षा में प्रत्येक बच्चा बहुत विशिष्ट ढंग से सीखता है। कक्षा एक छोटा सा समाज होता है, जहाँ सभी प्रकार के बच्चे होते हैं। जैसे :बुद्धिमान, सुस्त, भावात्मक रूप से बुद्धिमान, प्रतिभाशाली, मानसिक व शारीरिक रूप से अक्षम आदि। यदि हम एक ही प्रकार के दृष्टिकोण को अपनाएँ तो कक्षा का एक बड़ा भाग वंचित रह जाता है और बाद में पिछड़ जाता है। व्यक्तिगत विभिन्नताओं से युक्त एक कक्षा में शिक्षण कार्य करना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है। समावेशन के दर्शन को न केवल एक कक्षा विशेष के

अध्यापक द्वारा बल्कि पूरे विद्यालय द्वारा अपनाया जाना चाहिए, जिससे कि पूरा शिक्षण कार्यक्रम प्रत्येक बच्चे के लिए सार्थक और प्रासंगिक बन सके। सभी वर्गों के छात्रों को शिक्षा का लाभ मिल सके। इस इकाई में आप अपवंचित वर्ग तथा समावेश का अर्थ व परिभाषा और समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांतों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

1. समावेशी शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कर उसे परिभाषित कर सकेंगे।
2. अपवंचित वर्गों का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
3. समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे।
4. अपवंचित वर्गों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का वर्णन कर सकेंगे।

1.3 समावेशी शिक्षा का अर्थ- (Meaning of Inclusive Education)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात यदि हम शिक्षा प्रणाली की उपलब्धियों पर ध्यान दें तो हमें कुछ संतोषजनक आंकड़े प्राप्त होते हैं। आज भारत चीन के पश्चात विश्व की दूसरी सबसे बड़ी शिक्षा व्यवस्था है, जहाँ 10 लाख विद्यालय में 2025 लाख बच्चों को पढ़ाने का कार्य 55 लाख शिक्षक कर रहे हैं। 85 प्रतिशत रिहायशी इलाकों में एक किलोमीटर की परिधि के अंदर एक प्राथमिक और 75 प्रतिशत रिहायशी इलाकों में तीन किलोमीटर के अंदर उच्च प्राथमिक पाठशाला है। सरकार ने शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए कई योजनाएँ चलाई हैं। लेकिन इन सबके पश्चात भी वर्तमान में लाखों बच्चे शिक्षा की मुख्य धारा से वंचित हैं और हमारे विद्यालय भी इसे बच्चों के लिए साधनहीन नजर आते हैं, जिनकी विभिन्न ज्ञानेंद्रीय, शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक तथा आर्थिक कारणों से कुछ विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताएँ हैं।

समावेशन एक ऐसी अवधारणा है जो अक्षम बच्चों को अपने पड़ोस के विद्यालयों और समुदायों में पूर्ण प्रतिभागियों और सदस्य के रूप में देखता है। (नाईट1999)

Inclusion ia a concept that sees children with disabilities as full time participants in and as members of their neighborhood schools and communities.(Knight 1999)

समावेशी शिक्षा का अर्थ है सभी बच्चों के लिए शिक्षा। प्रत्येक कक्षा में जहाँ 40-60 बच्चे होते हैं, प्रत्येक बच्चे की अलग अलग आवश्यकताएँ होती हैं। समावेशी शिक्षा दर्शन के अनुसार

प्रत्येक बालक विशिष्ट है और उसे कक्षा में विविध प्रकार के शिक्षण की आवश्यकता हो सकती है। बच्चों की योग्यताएँ भी अलग अलग हो सकती हैं। इस प्रकार प्रत्येक कक्षा में विभिन्नता का होना आम बात है। भारत में कई विद्यालय ऐसे हैं, जहाँ एक ही शिक्षक विभिन्न विषयों को पढाता है। तब प्रश्न ये उठता है कि क्या हम विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को विशिष्ट सामग्री, विधि, विषय वस्तु प्रदान कर रहे हैं? समावेशी शिक्षा का सिद्धांत भी यही है कि एक सामान्य शिक्षक अपनी कक्षा में सभी प्रकार के बच्चों के लिए एक मार्गदर्शक बने। उसका उत्तरदायित्व न सिर्फ कक्षा के भीतर हो बल्कि बाहर भी अनंत तक हो। समावेशी शिक्षा इस बात को भी लागू करती है कि सामान्य विद्यालयों में प्रत्येक बच्चे की आवश्यकता पूरी हो। कक्षा में प्रत्येक छात्र की विशिष्ट आवश्यकता की पूर्ति करना ही समावेशी शिक्षा है। जिस प्रकार हमारे संविधान में सभी को समानता का अधिकार प्राप्त है, उसी प्रकार समावेशी दर्शन में भी सभी छात्रों को एक समान माना जाता है, उनके साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाता है।

NCF-2005- "समावेशन शब्द का अपने आप में कुछ खास अर्थ नहीं होता है। समावेशन के चारों ओर जो वैचारिक, दार्शनिक,सामाजिक और शैक्षिक ढाँचा होता है, वही समावेशन को परिभाषित करता है।समावेशन की प्रक्रिया में बच्चे को न केवल लोकतंत्र की भागीदारी के लिए सक्षम बनाया जा सकता है, बल्कि यह सीखने एवं विश्वास करने के लिए भी सक्षम बनाया जा सकता कि लोकतंत्र को बनाए रखने के लिए दूसरों के साथ रिश्ते बनाना, अंतर्क्रिया करना भी सामान रूप से महत्वपूर्ण है"।

समावेशी शिक्षा, समावेशित कक्षा में विविधताओं को स्वीकार करने की मनोवृत्ति है, जिसके अंतर्गत शिक्षा से वंचित बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ा जाता है, ताकि वे भी समाज का एक हिस्सा बन सकें और राष्ट्र के निर्माण में अपना योगदान दे सकें। समावेशी शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक बच्चे की आवश्यकता को बाल केंद्रित विधियों द्वारा विकसित किया जाना है और विद्यालय, घर व समाज में अच्छा सम्बन्ध स्थापित करना है। समावेशी शिक्षा की परिकल्पना इस संकल्पना पर आधारित है कि सभी बच्चों को विद्यालयी शिक्षा में पहुँच की इस कदर आवश्यकता है कि उन्हें क्षेत्रीय, सांस्कृतिक,सामाजिक परिवेश और विस्तृत सामाजिक,आर्थिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं में संदर्भित करके समझा जाय।क्योंकि भारतीय संविधान में समता, स्वतंत्रता,सामाजिक न्याय एवं व्यक्ति की गरिमा को प्राप्य मूल्यों के रूप में निरुपित किया गया है। जिसका इशारा समावेशी शिक्षा की तरफ ही है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न: भाग 1

1. समावेश का क्या अर्थ है?
2. समावेशी शिक्षा से आप क्या समझते हो?

1.4 अपवंचन का अर्थ (Meaning of Marginalisation)

समाज में कुछ ऐसे लोग होते हैं, जो सामान्य लोगों के स्तर के अनुरूप उत्थान नहीं कर पाते हैं, वे पिछड़ जाते हैं। पिछड़ने के पीछे समुचित साधन,सुविधाएँ एवं अवसरों से विमुख होना है। ऐसे लोगों को अपवंचित वर्ग कहते हैं। अपवंचन का समानार्थी शब्द उपेक्षित है।

पोलमैन – "वंचन निम्न स्तरीय जीवन दशा या विलगाव की ओर संकेत करता है, जो कि कुछ व्यक्तियों को उनके समाज की सांस्कृतिक उपलब्धियों में भाग लेने से रोक देता है"।

अपवंचित वर्ग वह वर्ग है जो समाज की मुख्य धारा से नहीं जुड़ पाया अथवा जिसे समाज के लोगों ने अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए ऊपर उठने नहीं दिया। इसलिए संविधान में ऐसे लोगों के लिए कानून बना, ताकि ये लोग भी समाज की मुख्य धारा से जुड़ सकें।

अपवंचन एक ऐसा अनुभव है, जिससे पूरे विश्व में करोड़ों लोग प्रभावित हैं। अपवंचित वर्ग के लोगों का रहन सहन निम्न स्तर का होता है, जिसका परिणाम यह होता है कि वे समाज में अपना योगदान नहीं दे पाते हैं और मानव विकास में अवरोध होता है। यदि हम विकास की बात करते हैं तो एक राष्ट्र का विकास तभी होता है जब उस राष्ट्र के सभी लोग एक सृजनात्मक सोच रखें और एक दूसरे का बराबर सहयोग करें। जब अपवंचित वर्ग के लोग विकास की इस धारा में अपना सहयोग नहीं दे पाते हैं तो एक जटिल समस्या हमारे सामने आ जाती है। प्राचीन समय से ही वह वर्ग जो समाज के विकास में अपना सहयोग दे सकता था पर उस वर्ग को कमजोर और शक्तिहीन घोषित करके शक्तिशाली लोगों ने समाज में अपना वर्चस्व कायम रखा। इन शक्तिशाली लोगों ने उन्हें किसी भी कार्यक्रम का हिस्सेदार

नहीं बनाया,चाहे वह धार्मिक हो, राजनैतिक हो, आर्थिक हो अथवा सामाजिक हो। उन्हें उपेक्षित कर दिया गया और इस प्रकार इन उपेक्षित समूहों को ही अपवंचित समूह कहा गया। हमारे समाज में कुछ अपवंचित वर्ग है, जिनका वर्णन निम्नलिखित तरह से किया जा रहा है :

1.4.1 अपवंचन के आधार

- लिंग के आधार पर
- जाति के आधार पर
- क्षेत्र के आधार पर
- अक्षम व्यक्तियों के आधार पर

लिंग के आधार पर: लिंग के आधार पर हमारा समाज दो भागों में बँटा है। पुरुष एवं महिला वर्ग। प्राचीन काल से अब तक भारत में महिलओं की स्थिति सदैव एक सामान नहीं रही है। वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ थी, तथापि ऋग्वेद में कुछ ऐसी युक्तियाँ दिखती हैं जो महिलाओं के विरोध में है। मैत्रयी संहिता में महिलाओं को झूठ का अवतार कहा गया है। ऋग्वेद में अन्य कथन में स्त्रियों को दस की सेना का अस्त्र- शस्त्र कहा गया है। स्पष्ट है कि वैदिक काल में भी कहीं न कहीं स्त्रियाँ नीची दृष्टि से देखी जाती थी। मध्यकाल में इनकी दशा और भी शोचनीय हो गई पर्दा प्रथा,सती प्रथा, बाल विवाह आदि ने तो स्त्रियों के लिए कठोर नियम बना दिए। इस काल में अशिक्षा और स्तरीय जकड़ती गई। स्त्री घर की चाहरदीवारी में कैद होती गई और वह एक अबला, रमणी,और भोग्य बनकर रह गई। उसकी दशा ऐसी हो गई कि पुरुष वर्ग उन्हें उपेक्षित करने लगा और वह समाज में अपवंचित वर्ग की श्रेणी में गिनी जाने लगी।

स्वतंत्रता के पश्चात महिलाओं के लिए भी संविधान में कानून बना। अनुच्छेद19 में महिलाओं को यह अधिकार दिया गया है कि वह देश के किसी भी हिस्से में नागरिक की हैसियत से स्वतंत्रता के साथ आ- जा सकती है, रह सकती है। महिला होने के नाते किसी भी कार्य के लिए उनको मना करना उनके मौलिक अधिकारों का हनन होगा। ऐसा होने पर वह कानून की मदद ले सकती है।

- अनुच्छेद 23 नारी की गरिमा की रक्षा करते हुए उनको शोषण मुक्त जीवन जीने का अधिकार देता है।
- 2005 में घरेलु हिंसा अधिनियम बना, जिसके अनुसार यदि महिला को घर पर किसी तरह प्रताड़ित किया जाता है तो वह पुलिस में F I R करवा सकती है।
- दहेज निवारक कानून के तहत दहेज लेना व देना दोनों ही दंडनीय अपराध है।

- अनुच्छेद 16 में स्पष्ट है कि हर महिला को कामकाज के बदले वेतन प्राप्त करने का अधिकार पुरुषों के बराबर है। केवल महिला होने के नाते उसे रोजगार से वंचित करना लैंगिक भेदभाव माना जाएगा।
- अनुच्छेद 21 व 22 में हर व्यक्ति को इज्जत के साथ जीने का मौलिक अधिकार संविधान द्वारा प्रदान किया गया है।
- महिला व बच्चे किसी भी देश की वास्तविक पूंजी हैं। उनके विकास से देश की प्रगति होती है, इस तथ्य से हमारे संविधान निर्माता अवगत थे। यही कारण है कि संविधान में कई जगह वे ऐसी चर्चा करते हैं।

जाति के आधार पर : जाति शब्द संस्कृत की 'जनि' (जन) धातु में 'क्तिन्' प्रत्यय लगाकर बना है। एक गाँव में स्थित परिवारों का ऐसा समूह जो वास्तव में अपनी बड़ी जातीय इकाई का अंग होता है, जिसका संगठन क्रियात्मक सम्बंधों की दृष्टि से एक सीमित क्षेत्र होता है, जिसकी परिधि सामान्यतः 20 -25 मील होती है। उस क्षेत्र में उस जाति की एक विशिष्ट आर्थिक व सामाजिक मर्यादा होती है, जो उनके सदस्यों को पीढ़ी दर पीढ़ी प्राप्त होती है। यह मर्यादा धार्मिक संस्कार,सांस्कृतिक परिष्कार,आर्थिक स्थिति, पेशा तथा राजनीतिक सत्ता से निर्धारित होती है।

इतिहास हमें यही बताता है कि समाज में सर्वोच्च स्थिति पर केवल दो ऊपरी जातियों का ही अधिपत्य था। धन शक्ति और विशेषाधिकारों के कारण दो उच्च वर्ग ब्राह्मण और क्षत्रियों ने अपनी स्थिति को पूरी तरह सुनिश्चित और एकाधिकार जमाने के लिए दूसरे धर्मों का प्रयोग शुरु कर दिया। चार वर्णों में सबसे निम्न स्तर था शूद्र। ये मजदूर गरीब किसान, और नौकर होते थे, इनके पास कोई विशेष योग्यता नहीं थी और ये केवल ऊपरी तीनों वर्गों की एक दास के रूप में सेवा करने के योग्य थे। उन्हें कोई विशेषधिकार प्राप्त नहीं थे और किसी भी धार्मिक क्रियाकलापों में उन्हें अनुमति नहीं थी। यहाँ तक कि उन्हें मंदिर में प्रवेश करने और धार्मिक परम्पराओं को निभाने की भी आजादी नहीं थी।

इन चार वर्णों के अलावा एक अन्य वर्ग जो सभी से नीचे माना जाता था, वे थे 'अस्पृश्य', बाहरी जाति। अस्पृश्यों के कार्य थे: शौचालय और मरे हुए पशुओं की खाल साफ करना। ये सबसे ज्यादा भेदभाव और शोषित करने वाला कार्य है। इन्हें 'अछूत' की श्रेणी में रखा जाता था। इस प्रकार इन दोनों ही वर्गों को समाज ने तिरस्कृत किया और ये जातियाँ अपवंचित श्रेणी में गिनी जाने लगी।

क्षेत्र के आधार पर : जब किसी क्षेत्र को ही समाज की मुख्य धारा से वंचित रखा जाता है ,तो उसे क्षेत्र के आधार पर अपवंचन कहते है जैसे – पिछड़ी जातियाँ। इनके साथ अनुसूचित जातियों जैसा ही व्यवहार किया जाता है लेकिन इन्हें 'अस्प्रश्यता' की श्रेणी में नहीं रखा जाता है। ये जाति सामाजिक व शैक्षिक रूप से पिछड़ी है। बढ़ई, कुम्हार, दस्तकारी, सुनार तथा गैर खेतिहर उत्पादक (मछुआरे) इस जाति में शामिल किए गए हैं।

1928 में मुंबई प्रान्त के गवर्नर ने स्टार्ट नाम के एक अधिकारी की अध्यक्षता में पिछड़ी जातियों के लिए एक कमेटी नियुक्त की थी इस कमेटी में डॉ० बाबा साहेब अम्बेडकर ने ही शूद्र वर्ण से जुड़ी जातियों का लिए 'अन्य पिछड़ा वर्ग' शब्द का उपयोग सर्वप्रथम किया था। इसी शब्द का संक्षिप्त रूप OBC जिसको सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ी हुई जाति के रूप में आज हम पहचानते हैं और उनको पिछड़ी जाति या ओबीसी कहते हैं। जो जातियां उच्च जाति और पिछड़ी जाति के बीच में आती थी अतः ऐसी जातियों के लिए 'अन्य पिछड़ा वर्ग' शब्द का प्रयोग किया गया, जिसे आज हम OBC कहते हैं

अक्षमता के आधार पर : इतिहास के पन्ने पलटकर यदि देखा जाए तो प्राचीन काल में अक्षम होना अक्षम्य अपराध माना जाता था। अक्षम व्यक्तियों के माता पिता भी अपने आपको हीन समझते थे। यूनान और स्पार्टा में तो इस तरह के बच्चों के पैदा होते ही उन्हें अंधे कुएँ में डाल दिया जाता था और इस प्रका उन्हें समाज में आने ही नहीं दिया जाता था। यूनान और स्पार्टा की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य सैनिकों को तैयार करना था और उनका विश्वास था कि अक्षम बच्चे समाज के लिए अभिशाप हैं। उन्हें सफल सैनिक नहीं बनाया जा सकता है। भारत में भी अक्षमता को अभिशाप माना जाता था।'यह व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता' की मानसिकता ने उन बच्चों को समाज की मुख्य धारा से अलग-थलग कर दिया और इस प्रकार उन्हें हर जगह उपेक्षित किया जाने लगा।

अक्षमता के कारण स्वतः ही आत्मविश्वास का अभाव हो जाता है व अक्षमता उन बच्चों की पहुँच को सीमित कर देती है। उन्हें अपने सपने साकार करने के लिए अपने ही साथियों का प्रोत्साहन नहीं मिल पता है। वे इतने मजबूर हो जाते हैं जिससे उन्हें दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसी कारण वे भेदभाव का अनुभव करते हैं। उन्हें ये एहसास बार बार होता है कि वे 'कोई कार्य नहीं कर सकते हैं', जिसके परिणामस्वरूप उनको किसी काबिल न होने के भाव, हताशा, शर्मिंदगी आदि का अहसास होता है, जो उनके व्यक्तिगत तथा सामाजिक विकास को प्रभावित करता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 2

1. अपवंचन का समानार्थी अर्थ .... है।
2. घरेलू हिंसा अधिनियम................ में बना।
3. जीने का अधिकार अनुच्छेद .... में दिया गया है।
4. चार वर्णों में सबसे निचला स्तर .... था।
5. 'अन्य पिछड़ा वर्ग' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम................. ने किया था।
6. यूनान और स्पार्टा की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ....था।
7. अक्षमता के कारण व्यक्ति........... का अनुभव करता है।

समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्दांत : (Main principles of inclusive education)

एक बच्चे को बड़े होने और सीखने के लिए ऐसे वातावरण की आवश्यकता होती है, जहाँ उसकी सामाजिक तथा भावनात्मक जरूरतें पूरी होती हैं। ऐसा सहायक वातावरण निर्मित करने के लिए यह बेहद जरूरी है कि समुदाय के हर उस सदस्य को जो समावेश की प्रक्रिया में संलग्न है,समान प्रभाव वाला समझा जाए। विद्यालय का परिवेश बच्चे के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। समावेशी शिक्षा क्यों दी जाए? इस पर विचार करना बहुत आवश्यक है। शिक्षा सभी तक सामान रूप से पहुँचे, सबकी समान भागीदारी हो, शोषित वर्ग का अन्त हो और एक समता मूलक समाज की स्थापना हो।

अतः समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांत हैं: पहुँच, समानता, भागीदारी, सशक्तिकरण और प्रासंगिकता।

पहुँच (शिक्षा तक सब पहुँचें): शिक्षा प्राप्त करना किसी विशेष जाति या समुदाय का ही अधिकार नहीं है, वरन् प्रत्येक बच्चा चाहे वह किसी भी वर्ग का हो उसे शिक्षा प्राप्त करने से कोई नहीं रोक सकता है। NCF 2005 ने नया दृष्टिकोण प्रदान किया है, जिसमें सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण समावेशी शिक्षा प्रदान करने के तरीके शामिल किए गए हैं। शिक्षा तक सबकी पहुँच हो इसके लिए NCF 2005 में शिक्षकों द्वारा निम्नलिखित कार्यों को करने की जरूरत को स्पष्ट किया गया है :

- हर बच्चे की जरूरत के प्रति संवेदनशील होना।
- बच्चे पर सामाजिक रूप से प्रासंगिक और न्यायोचित पढ़ाने / सीखाने की प्रक्रिया प्रदान करना।
- सामाजिक और सांस्कृतिक सन्दर्भों में उनकी विविधता को समझना।

RTE 2009 भी लिंग और सामाजिक श्रेणी पर ध्यान दिए बिना सभी छात्रों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने के इस निर्णय को अधिक मजबूत और सुदृढ करता है। विभिन्न शोधों द्वारा यह स्पष्ट हो गया है कि शिक्षक अपने कौशल, रवैये और प्रोत्साहन द्वारा सुविधाहीन व अधिकारहीन समुदाय के बच्चों की संलिप्तता, प्रतियोगिता व उपलब्धि उल्लेखनीय ढंग से बढ़ा सकते हैं। इन बच्चों तक शिक्षा की पहुँच बनानी होगी : कार्यशील बच्चे, श्रमिकों के बच्चे, सडकों पर पाए जाने वाले बच्चे, शारीरिक व मानसिक रूप से अक्षम और अन्य सभी प्रकार के बच्चे।

विद्यालयों की व्यवस्था को अच्छा बनाना होगा। विद्यालय भवन में शौचालय, पीने का पानी, खेल का मैदान, शिक्षक तथा अन्य भौतिक संसाधन उपलब्ध कराने होंगे। शिक्षकों को अधिक से अधिक अभिभावकों के संपर्क में रहना होगा और बच्चों की कमियों को दूर करने का प्रयास करना होगा।

समानता : राष्ट्रीय शिक्षा नीति में (1986) में स्पष्ट उल्लेख है कि समानता के उद्देश्य को साकार बनाने के लिए सभी को शिक्षा का समान अवसर उपलब्ध करना ही पर्याप्त न होगा वरन् ऐसी व्यवस्था भी होना आवश्यक है, जिससे सभी को शिक्षा में सफलता प्राप्त करने के अवसर मिल सके। इस कारण नई शिक्षा नीति विषमताओं को दूर करने पर विशेष बल देगी और अब तक वंचित रहे लोगों की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के सामान अवसर प्रदान करने का प्रयास करेगी । समानता एक ऐसी दशा या अवस्था है जिसमें सभी व्यक्ति सामान परिस्थितियों में समान व्यवहार का अधिकार रखते हैं । यह एक अधिकार है । दूसरे शब्दों में समानता बिना किसी भेदभाव के व्यक्ति को सभी संसाधानों पर सामान रूप से पहुँच प्राप्त करने का अधिकार है । संविधान में शिक्षा तथा कार्य के लिए सबको समान अधिकार प्राप्त हैं । **अनु. 46 स्पष्ट करता है कि** – राज्य विशिष्ट रूप से कमजोर वर्ग, मुख्यतः अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों के शैक्षिक व आर्थिक हितों कों ध्यान में रखेगा तथा उनकी सभी प्रकार के सामाजिक अन्याय तथा शोषण से रक्षा करेगा । **अनु.45 स्पष्ट करता है कि** - राज्य इस संविधान के लागू होने के दस वर्ष के भीतर सभी 6-14 वय वर्ग के बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा देने के लिए प्रबंध करने का प्रयास करेगा"। **अनु0 23** में बाध्य मजदूरी तथा शोषण को समाप्त किया गया है और **अनुच्छेद16** अवसर की समानता की बात करता है ।

भागीदारी: समावेशी शिक्षा का मुख्य लक्ष्य है कि छात्रों को सार्थक शिक्षा अनुकूल पर्यावरण में उपलब्ध कराई जाए जिससे वे जीवन मार्ग में सफल हो सकें । हर छात्र को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिले और इसमें योग्यता, शारीरिक अक्षमता,भाषा संस्कृति,पारिवारिक पृष्ठभूमि, उम्र, लिंग आदि अवरोध पैदा न करे । प्रत्येक बच्चा जो विद्यालय में प्रवेश लेता है उसकी विद्यालयी गतिविधियों में सम्पूर्ण भागीदारी हो । जब सबकी भागीदारी होगी तो तभी गुणवत्ता में भी वृद्धि होगी ।

शिक्षा में भागीदारी का अर्थ होता है कि बच्चे तक शिक्षा को पहुँचाना, उन्हें सुनना और जितना सम्भव हो सके विद्यालयी जीवन से उन्हें जोड़े रखना । इसका अर्थ यह है कि अधिगम कराने के साथ-साथ छात्रों की राय और विचारों को भी महत्व देना । प्रत्येक छात्र को महत्व देना अनिवार्य है । क्योंकि इससे छात्रों में आत्मविश्वास बढ़ता है, शिक्षण अभ्यास में सुधार होता है, अनुशासन व छात्रों के व्यवहार में सुधार होता है तथा छात्रों में सुनने की शक्ति का विकास होता है । शिक्षा में सबकी भागीदारी क्यों हों? क्योंकि बुनियादी आवश्यकताएँ कठिन और विविध होती हैं । इसमें बच्चों के साथ-साथ उनके परिवार, समाज, सरकार, संगठन,तथा संस्थानों की भी सक्रिय भूमिका की भी आवश्यकता होती है । यदि बच्चे विद्यालायी जीवन तक नहीं पहुँच पाते हैं तो उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है । जैसे वह अपने निर्णय स्वयं नहीं ले पाता है, वह स्वयं और समाज के विकास के बारे में नहीं सोच पता है, वह नवाचारी विधियों को प्रयोग नहीं कर पाता है और इस प्रकार वह किसी भी समस्या का समाधान नहीं कर पाता है ।

विद्यालय वह स्थान है जहाँ बच्चों का सर्वांगीण विकास होता है। विद्यालय में मनो-सामाजिक वातावरण छात्र के स्वास्थ्य के लिए उत्तम माना जाता है। इसलिए बच्चे के मनिसमाजिक विकास के लिए उसका विद्यालय में प्रवेश लेना अत्यंत आवश्यक है। प्रवेश लेने के पश्चात उसे कक्षा की समस्त गतिविधियों में शामिल करना भी आवश्यक है। छात्रों को कक्षा कक्ष की गतिविधियों में शामिल करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण बिंदु निम्नांकित हैं :

- प्रत्येक छात्र को कक्षा में उत्तरदायित्व सौंप देना चाहिए।
- कक्षा में कुछ गतिविधि कराई जानी चाहिए जैसे- रोल प्ले, अन्ताक्षरी, वादविवाद, कविता वाचन, भाषण, सांस्कृतिक कार्यक्रम, बागवानी आदि।
- छात्रों को समूह कार्य या प्रोजेक्ट कार्य में संलग्न रखना चाहिए।
- प्रत्येक महीने स्वछता कार्यक्रम भी रखना चाहिए, इससे बच्चों में वातावरण को स्वच्छ रखने की भावना का विकास होगा।
- छात्रों को स्वमूल्यांकन करने के लिए कहना चाहिए और इसके पश्चात उनके साथी का भी मूल्यांकन करने के लिए कहना चाहिए।

प्रासंगिकता : समावेशी शिक्षा प्रत्येक बच्चे के लिए उच्च और उचित उम्मीदों के साथ, उसको व्यक्तिगत लक्ष्यों पर काम करने के लिए अभिप्रेरित करती है। यह बच्चों व उनके अभिभावकों को विद्यालयी गतिविधियों में शामिल करने की वकालत करती है। सही मायने में यह सर्व शिक्षा जैसे शब्द का ही रूपांतरित रूप है, जिसके कई उद्देश्यों में से एक उद्देश्य है 'विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा'। हम सब भी इसका अर्थ 'विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा' से ही लगते हैं जो कि सर्वथा अनुचित है। समावेशी शिक्षा का एक अर्थ तो 'विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा'से हो सकता है पर इसका सम्पूर्ण उद्देश्य यह कदापि नहीं हो सकता है। इसका उद्देश्य तो सभी वर्गों के बच्चों को एक ही छत के नीचे शिक्षा देना है। इसमें बच्चों को सामाजिक, जातिगत, आर्थिक, वर्गीय, लैंगिक, शारीरिक और मानसिक दृष्टि से भिन्न देखे जाने के बजाय एक स्वतंत्र अधिगमकर्ता के रूप में के रूप में देखा जाता है, जिससे लोकतांत्रिक समाज में बच्चे के समुचित समावेशन हेतु वातावरण का सृजन किया जा सके। शिक्षा समावेशन की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण औजार है। शिक्षा ही वह प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से बच्चा लोकतंत्र में अपनी भूमिका सुनिश्चित करता है और समावेशन में बाधक तत्वों से निपटने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। शिक्षा में समावेशन का वैचारिक और दार्शनिक आधार यह है कि:

- समावेशन में प्रत्येक बच्चा स्वाभाविक रूप से सीखने के लिए अभिप्रेरित होता है।

- बच्चे के सीखने के तौर तरीकों में विविधता होती है। जैसे बच्चे अनुभव, अभ्यास, प्रयोग, पढ़ने व चर्चा करने, प्रश्न करने, सुनने, सोचने, चिंतन, अभिव्यक्त, छोटे व बड़े समूहों में गतिविधियों द्वारा सीखते हैं।
- बच्चों को सीखने के लिए उचित वातावरण अवसर देने की आवश्यकता है।
- सीखने-सिखाने की प्रक्रिया विद्यालय में ही नहीं वरन् विद्यालय के बाहर भी चलती रहती है। अतः सीखने सिखाने की प्रक्रिया इस प्रकार संचालित की जानी चाहिए कि बच्चे में समझ की भावना का विकास हो न कि रटने की प्रवृति का।
- सिखाने से पहले बच्चे के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य को समझना और उसके प्रति आदर रखना बहुत आवश्यक है।

समावेशी शिक्षा की प्रासंगिकता आज बहुत है। **NCF(2005 पृ 96) में भी इस बात की पुष्टि की गई है : "समावेशन की नीति को हर स्कूल एवं सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की आवश्यकता है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में चाहे वह स्कूल हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की जरूरत है। स्कूलों को ऐसे केन्द्र बनाए जाने की आवश्यकता है, जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चे खासकर शारीरिक एवं मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को इस क्षेत्र में सबसे ज्यादा फायदे मिल सकें** ।इसी पृष्ठ में सभी बच्चों को समान अवसर देने की बात भी कही गई है :

सामान्यतः विद्यालय कुछ गिने चुने बच्चों को विभिन्न गतिविधियों में प्रदर्शन के अवसर देते रहते हैं। यद्यपि इन बच्चों को तो इससे फायदा होता है परन्तु अन्य बच्चे बार बार उपेक्षित महसूस करते हैं। प्रशंशा हेतु श्रेष्ठता एवं योग्यता को आधार बनाने में प्रत्यक्षतः कोई बुराई भी नहीं दिखाई देती है, परन्तु अवसर तो सभी बच्चों को मिलने चाहिए। इन बच्चों की विशिष्ट क्षमताओं को पहचाना जाना चाहिए और इन विशिष्ट क्षमताओं की भी तारीफ होनी चाहिए। यह संभव है कि इन बच्चों को अपना काम पूरा करने के लिए अतिरिक्त मदद या समय की जरूरत होगी। इसके लिए अपेक्षित धैर्य, समावेशन की प्रक्रिया के लिए आवश्यक है।

सशक्तिकरण : समावेशन का एक सिद्धांत सभी वर्गों के बच्चों को सशक्त बनाना भी है। जब उपर्युक्त सभी सिद्धांतों को शिक्षा प्रक्रिया में पूर्ण रूप से लागू कर दिया जाएगा तो निश्चित ही अपवंचित वर्ग सशक्त हो जाएँगे। विद्यालय स्तर पर प्रत्येक बच्चे को सशक्त बनाने के लिए हम निम्नलिखित उपाय कर सकते हैं :

- बच्चे को समझना आवश्यक है।
- बच्चे को शारीरिक व मानसिक दंड से दूर रखना आवश्यक है।

- विद्यालयी निर्णयों व गतिविधियों में प्रत्येक बच्चे की भूमिका आवश्यक है।
- अध्यापक की बच्चे के प्रति सकारात्मक सोच आवश्यक है।
- प्रत्येक बच्चे का सम्मान करना आवश्यक है।
- छात्रों को भी कभी शिक्षक की भूमिका निभाने का अवसर मिलना चाहिए।
- प्रत्येक छात्र को उसके उत्तरदायित्व का एहसास करना जरूरी है।

सिम्मी पिछड़े वर्ग की बालिका है। वह पास के ही सरकारी विद्यालय में कक्षा 3 में पढ़ती है। विद्यालय के ही पास उसकी झोपड़ी है। उसके माता-पिता दोनों ही मजदूरी करते है। पांच भाई-बहनों में सिम्मी चौथे नंबर की है। विद्यालय के निकट रहने के बाद भी वह रोज विद्यालय नहीं जाती है। क्योंकि अध्यापिका उससे कहती है कि 'उसे कुछ नहीं आता है वह जीवन में कुछ नहीं कर सकती है'। सिम्मी उदास और निराश रहती है। कुछ दिन पश्चात एक नई अध्यापिका विद्यालय में आ जाती है। वह अध्यापिका सिम्मी की उदासी एवं हताशा का कारण जानकर उसके माता-पिता से मिलती है और उन्हें सिम्मी की स्थिति से अवगत करती है। धीरे-धीरे वह अध्यापिका सिम्मी के बहुत करीब आ जाती है और उसे विद्यालय की गतिविधियों में शामिल करने लगती है। सिम्मी कला बहुत अच्छा बनाती है। अध्यापिका हर स्थिति में सिम्मी का उत्साहवर्धन करती है,जिससे सिम्मी का मनोबल और आत्मविश्वास बढ़ता है। अन्त में ऐसी स्थिति आती है कि सिम्मी प्रतिदिन विद्यालय आती है, पूरे आत्मविश्वास के साथ अपनी नई अध्यापिका से सीखने।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न :भाग 3

1. सिम्मी की इस कहानी में समावेशन के कितने सिद्दांतों को समाहित किया गया है ?
2. समावेशी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य क्या है?
3. बाह्य मजदूरी एवं शोषण को किस अनुच्छेद में समाप्त किया गया है ?

1.6 सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाएँ

बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए सरकार प्रयत्नशील है। जनजातीय लड़कियों व लड़कों की शिक्षा हेतु उनको बेहतर आवासीय सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से छात्रावास योजना तीसरी पंचवर्षीय योजना में शुरु की गई। इस योजना के तहत निर्माण कार्य हेतु राज्यों को लगत का 50% तथा संघ राज्य क्षेत्रों को 100% केन्द्रीय सहायता प्रदान की जाती है। अन्य योजनाएँ जैसे गौरा देवी कन्या धन, बालिकाओं को साइकिल या एफ़.डी. वितरण की योजनाएँ चलाई जा रही हैं।

अपवंचित वर्गों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए छात्रवृत्ति, निःशुल्क पोषाक एवं पाठ्य-पुस्तकें, मध्याह्न भोजन योजना, सर्व शिक्षा अभियान तथा शिक्षा का अधिकार अधिनियम लागू किया गया है। 1986 की शिक्षा नीति और 1992 की संशोधित नीति ने भी यही सुझाव दिया कि जब तक बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में कठोर कार्य योजना नहीं बनाई जाएगी तब तक देश के हर बच्चे को साक्षर नहीं कराया जा सकता है। इसलिए शिक्षा का सार्वभौमिकरण किया गया ताकि घर- घर शिक्षा का द्वीप जल सके। सर्वशिक्षा अभियान का एक उद्देश्य विशेष समूहों की शिक्षा भी है – "अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, धार्मिक एवं भाषाई अल्पसंख्यकों, वंचित वर्गो के बच्चों और दिव्यांग बच्चों की शैक्षिक सहभागिता पर विशेष ध्यान दिया जाएगा"। RAMSA और SSA योजना ने शिक्षा की तस्वीर को बहुत बदला है। अब RTE लागू होने के पश्चात तो सुधार की अधिक संभावनाएं दिख रही हैं।

2009-10 में माध्यमिक स्तर पर दिव्यांग बच्चों के लिए समावेशी शिक्षा की योजना प्रारंभ की गई। यह योजना 2013 से RAMSA के अंतर्गत सम्मिलित कर ली गई है। इस योजना का उद्देश्य दिव्यन्गता वाले सभी छात्रों को प्रारंभिक शिक्षा के पहले आठ वर्ष पूरे करने के पश्चात आगे के चार वर्षों की 9 से 12 वीं तक की मा. शिक्षा अनुकूल वातावरण में प्रदान करना है। राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना में दिव्यांग छात्रों को आर्थिक सहायता दी जाती है ताकि वे मान्यता प्राप्त संस्थानों से पेशेवर या तकनीकी पाठ्यक्रमों में शिक्षा प्राप्त करके नौकरी हासिल कर सकें या अपना व्यवसाय आरंभ कर सकें व इसमें 30% छात्रवृत्तियाँ लड़कियों के लिए आरक्षित है।

1.6 सारांश

कक्षा में सभी प्रकार के बच्चे होते हैं। एक सफल अध्यापक वही होता है जो इन बच्चों की आवश्यकताओं को समझ कर उन्हें पढ़ाता है। इसके लिए वह समावेशी शिक्षा के दर्शन को अपनाता है। समावेशी शिक्षा का अर्थ है, सभी बच्चों की शिक्षा। कक्षा में सभी बच्चों की आवश्यकता की पूर्ति करना समावेशी शिक्षा है। जिस प्रकार हमारे संविधान में सभी को समानता का अधिकार प्राप्त है, उसी प्रकार समावेशी दर्शन में भी सभी छात्रों को एक समान माना जाता है। हमारे समाज में आज भी कुछ लोग ऐसे हैं जो शिक्षा से वंचित हैं। शिक्षा के प्रचार प्रसार होने के बावजूद भी कई वर्ग समाज की मुख्य धारा से नहीं जुड़ पाए हैं। ऐसे लोगों तक शिक्षा को पहुँचाना आवश्यक है। समावेशी शिक्षा क्यों दी जानी चाहिए ? क्योंकि आज ऐसी ही शिक्षा की आवश्यकता है, जिसके द्वारा भेदभाव की भावना को खत्म किया जा सकता है। सभी वर्गों के बच्चों को सशक्त भी समावेशी शिक्षा द्वारा किया जा सकता है। अपवंचित वर्गों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए सरकार द्वारा कई योजनाएँ चलाई जा रही हैं। जैसे बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए गौरा देवी कन्या योजना, साइकिल या एफ़.डी. वितरण आदि। अन्य वर्गों के लिए भी कई योजनाएँ चलाई जा रही हैं।

1.7 शब्दावली

समावेशी शिक्षा : समावेशी शिक्षा, समावेशित कक्षा में विविधताओं को स्वीकार करने की मनोवृत्ति है, जिसके अंतर्गत शिक्षा से वंचित बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ा जाता है, ताकि वे भी समाज का हिस्सा बन सके।

अपवंचन : अपवंचन एक ऐसा अनुभव है, जिससे विश्व में करोड़ों लोग प्रभावित हैं।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग 1 :

1. समावेश का सामान्य अर्थ है सबको समाहित करना।

2. समावेशी शिक्षा, समावेशित कक्षा में विविधताओं को स्वीकार करने की मनोवृत्ति है, जिसके अंतर्गत शिक्षा से वंचित बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ा जाता है, ताकि वे भी समाज का हिस्सा बन सके।

भाग 2 :

1. उपेक्षित
2. 2005
3. 21
4. शूद्र
5. भीमराव अम्बेडकर
6. भेदभाव

भाग 3 :

1. सभी सिद्धांतों को समाहित किया गया है।
2. समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी वर्गों के बच्चों को एक ही छत के नीचे शिक्षा देना है। इसमें बच्चों को सामाजिक, जातिगत, आर्थिक, वर्गीय, लैंगिक, शारीरिक और मानसिक दृष्टि से भिन्न देखे जाने के बजाय एक स्वतंत्र अधिगमकर्ता के रूप में के रूप में देखा जाता है, जिससे लोकतांत्रिक समाज में बच्चे के समुचित समावेशन हेतु वातावरण का सृजन किया जा सके।
3. अनुच्छेद 23

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- www. Google.com- Inclusive Education
- Sharma, khaushal,Mahapatra,B.C,(2007),Emerging Trends in Inclusive Education
- अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,लर्निंग कर्व समावेशी शिक्षा, नवम्बर 2015

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. समावेशी शिक्षा से आप क्या समझते हैं? समावेशी शिक्षा के मुख्य सिद्धांतों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. अपवंचित वर्गों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए कौन- कौन सी योजनाएँ चलाई जा रही हैं ? विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. आपके विद्यालय में विभिन्न प्रकार के बच्चे शिक्षा प्राप्त करने आते हैं। आप इन बच्चों को समावेशी शिक्षा प्रदान करने के लिए क्या करोगे ?

इकाई 2 - दिव्यांग बच्चों की शिक्षा में परिवर्तन (Changing Practices in Education of Children with Disabilities)

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 पृथक्करण

2.4 एकीकरण

2.5 समावेशन

2.5.1 सलमंका सम्मेलन के अनुसार समावेशित शिक्षा

2.5.2 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005

2.5.3 परम्परागत शिक्षा तथा समावेशित शिक्षा

2.6 कक्षा कक्ष की विविधताएं/अनेकताएं

2.6.1 अधिगम प्रक्रिया

2.6.2 सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता

2.6.3 भाषागत विविधता तथा बहुलता

2.7 समावेशित शिक्षा के अवरोध तथा चुनौतियाँ

2.7.1 सोच तथा द्रष्टिकोण

2.7.2 दोषपूर्ण आधारभूत ढाँचा

2.7.3 संदर्भ शिक्षकों तथा विशेषज्ञों का अभाव

2.7.4 संसाधनों की कमी

2.7.5 जागरूकता, परामर्श तथा अभिमुखीकरण कार्यक्रमों की कमी

2.7.6 गरीबी

2.7.7 शिक्षकों की व्यवहारिक प्रशिक्षण का अभाव

2.8 सारांश

2.9 शब्दावली

2.10 स्वमूल्यंकित प्रश्नों के उत्तर

2.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.12 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

शिक्षा मानव संसाधन विकास का महत्वपूर्ण घटक है। शिक्षा के न्यूनतम अपेक्षित विकास के वगैर किसी भी राष्ट्र अथवा समाज की आर्थिक प्रगति अपूर्ण है। अतः विश्व के समस्त राष्ट्र तथा समाज अपने नागरिकों तथा भावि पीढ़ी के शैक्षिक विकास के प्रति सजग है। मानसिक चुनौतियों से जूझ रहे है, ये चुनौतियां तथा संघर्ष जन्मजात मां हो सकती हैं। और अनेकों मामलों में जन्म के कुछ समय बच्चों उपरान्त भी उत्पन्न हुई हो सकती है। इन को अलग अलग नामों से संवोधित किया जाता है जैसे

- दिव्यांग बच्चे
- अक्षम बच्चे
- विशेष योग्यता वाले बच्चे
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चे
- दिव्यांग बच्चे

लेकिन कुछ बातें स्पष्ट है जिनमें कोई मतैक्य नही है, जैसे थे बच्चे भी सामान्य बच्चों के समान है, उनमें भी प्रतिभा तथा क्षमता है, यर्थोचत न्यायसंगत अवसर तथा उत्साहजनक वातावरण मिलने पर ये बच्चे भी समान्य बच्चों के समान ही राष्ट्र तथा समाज के निर्माण में बहुमूल्य योगदान कर सकते है।

अतः इन बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा में शामिल करना एक परिष्कृत समाज का दायित्व है, साथ इस क्षेत्र में होने वाले विभिन्न शोध अध्ययनों, अनुभवों तथा तकनीक के निरन्तर विकास ने दिव्यांग बच्चों की शिक्षण पद्धति तथा अधिगम प्रक्रिया में दूरगामी प्रभाव डाला।

पिछले कुद दशकों में दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के विकास में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, लेकिन विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा का इतिहास सदा से एक समान नही रहा है। इंसान की सोच में परिवर्तन के साथ ही दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के तरीकों में भी बदलाव होता रहा। प्रस्तुत इकाई में हम दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के लिए अपनाई गई विभिन्न/तरीको का अध्ययन करेंगे। हम यह भी अध्ययन करेंगे कि शैक्षिक समावेशन क्या है। इसकी आवश्यकता क्यों है ? समावेशित शिक्षा के मार्ग में कौन कौन से अवरोध है तथा उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है।

2.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

1. पृथक्करण को समझ पाएंगे।
2. एकीकरण को समझ पाएंगे।
3. समावेशन को समझ पाएंगे।
4. कक्षा कक्ष की विविधताओं को समझ पाएंगे।
5. समावेशित शिक्षा की की चुनौतियों तथा अवरोधों को समझ पाएंगे।

2.3 पृथक्करण (segregation)

एक समय वो भी थी जब आधुनिक तकनीकी विकास के प्रवर्तक पश्चिमी राष्ट्र में भी दिव्यांग बच्चों को जन्म के समय या उनकी शैशवकालीन अवस्था में ही मार दिया जाता था, यद्यपि ये प्राण एतिहासिक काल की बाते है। लेकिन वक्त में तब्दीती आयी और वक्त के साथ-साथ लोगों की सोच भी बदलनी प्रारंभ हुई, इतिहास में दृष्टि डालें तो सर्वप्रथम 12 वीं सदी में ब्रितानी राजा हेनरी द्वितीय ने दिव्यांग बच्चों के लिए अलग से कानून बनाया। और दिव्यांगों की शिक्षा के लिए भी पश्चिती देशों में प्रयास प्रारंभ हुए। लेकिन प्रायः तत्कालीन शिक्षाविदों तथा समाज की सोच भी शायद यही थी कि दिव्यांग बच्चों के लिए शिक्षा तथा अध्ययन की व्यवस्था पृथक से की जाए। ऐसा समझा गया क्यांेकि दिव्यांग बच्चों की अथवा मानसिक अथवा दोनों परिस्थितियॉ शेष बच्चों से सर्वथा भिन्न है। अतः उनका शिक्षण भी अलग से किया जाना चाहिए। ऐसा करने की पृष्ठभूमि में कोई ठोस मनोवैक्षानिक अथवा समाजशास्त्रीय अध्ययन, शोध या सर्वे नही था। वैसे तो यह मान लिया गया कि दिव्यांग बच्चें सामान्य बच्चों के साथ अध्ययन नही कर सकते है। क्योंकि उनकी शारीरिक/मानसिक कार्य करने की सीमाएं सामान्य बच्चों के साथ शिक्षण कराने में बाध बन जाएगी। दोनों के एक ही शिक्षण संस्था में सहशिक्षण तथा सहअधिगम से दोनों दिव्यांग तथा सामान्य बच्चों की शैक्षिक प्रगति नकारात्मक रूप् से प्रभावित होगी। साथ ही ऐसे विद्यालय में शिक्षकों, विद्यालय प्रवंधकों तथा अन्य स्टाफ को भी समस्याएं आयेगी क्योंकि उनके पास ऐसे समस्त बच्चों को एक साथ शिक्षण कराने का न तो प्रशिक्षण है और न ही योग्यता। और ऐसा भी संभव है कि इसके पिदे कुछ लोगों के अपने निहित स्वार्थ रहे हो तथापि दिव्यांगों के प्रति मैती मानसिकता से यह कदम आगे थे। क्योंकि अब कम से कम उनकी शिक्षा के बारे में सोचने की शुरूआत तो हुई।

16 सदी में श्रवण बाधित के लिए नियमित शिक्षण प्रशिक्षण प्रारंभ हुआ। यह दिव्यांगों की शिक्षा का प्रारंभिक प्रयास था। स्पेन के पेडों पॉस डि त्रियोन ने 1555 ई0 में श्रवण बाधितों की शिक्षा के लिए शिक्षण कार्यक्रमों की शुरूआत की। 1767 ई0 में थॉसम ब्रेड बूड ने श्रवण बाधितों हेतु प्रथम शिक्षण संस्थान की स्थापना इंग्लैड में की। वेलेंटाएन हौवे ने फ्रांस में दृष्टिबाधितों के पहले शिक्षण संस्थान की

स्थापना की। मानसिक अक्षमताओं की चुनौतियों से जूझने वाले बच्चों की शिक्षा का पहला व्यवस्थित प्रयास सन् 1800 ई0 में फ्रं ास के चिकित्सक जिन मार्क इटार्ड ने किया।

दिव्यांग बच्चों को प्रचलित शैक्षिक व्यवस्था के अन्तर्गत ही अलग शैक्षिक परिदृश्य में रखा गया। जहॉ उनकी शिक्षा की विशेष व्यवस्था की गयी। अर्थात उनकी शिक्षा के लिए उनकी अक्षमता के दृष्टिगत अलग से विद्यालय तथा शिक्षण संस्थान खोले गये जहॉ उनके लिए उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप् अलग शिक्षक नियुक्त किये गये। उनकी पुस्तकें, पाठ्यचमी, पाठ्यक्रम, संबोध तथा अधिगम की व्यवस्थाएं भी मुख्यधारा की शिक्षा व्यवस्था से अलग रखी गयी।

निःसदेह विशेष शिक्षा उस जड़वत सामाजिक सोच के परिप्रेक्ष्य में मील की पत्थर कही जा सकती है। जिसमें दिव्यांगों के प्रति परम्परावादी दकियान्सी मैती मानसिकता अधिकाश लोगों के मनोमस्तिष्क में घर कर गयी थी। लेकिन शैक्षिक पृथक्करण की अपनी सीमाएं थी जिसने विशेष शिक्षा के औचित्य तथा उपादेयता पर प्रश्नचिह्र कर दिये।

2.4 एकीकरण (Integration)

जैसा कि हम समझ चुकें है कि विशेष विद्यालयों में पृथक / अलग से दिव्यांग बच्चों की शिक्षा की अपनी सीमाऐं भी थी और कमजोरियं ा भी। विशेष शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत शिक्षकों तथा विशेषज्ञों ने इसका अनुभव किया और समय के साथ साथ पृथक्करण अर्थात दिव्यांग बच्चों के लिए पृथक से विशेष विद्यालयों की अवधारणा समेकित विद्यालयों की अवधारणा में परिवर्तित हो गई मनोवैज्ञानिकों के अध्ययनों तथा शिक्षण तकनीक के कारणों से इसे बल मिला।

अतः धीरे धीरे कुछ प्रारम्भिक सीमित उपायों के साथ यह प्रयास किया जाने लगा कि यथासंभव दिव्यांग बच्चों को भी मुख्य धारा कि शिक्षा-जिसमें सामान्य बच्चें अध्ययन करते है- के साथ जोड़ा जाए, अतः दिव्यांग बच्चों को भी सामान्य विद्यालयों में नामांकित किया गया। उनकी शिक्षा भी सामान्य बच्चों की भं ाति ही होने लगी। जैसे अल्प दृष्टिबाधित, मूक तथा बधिर, अस्थि दिव्यांगता, कम सीमा तक स्वलिनता.।नजपेउ, प्रमस्तिक आघात ब्मतमइतंस च्ंसेल अधिगम अक्षमता तथा मानसिक चुनौतियों से जूझने वाले बच्चों को भी सामान्य विद्यालय में प्रवेश दिया जाने लगा।

अर्थात जब तक कि अक्षमता की प्रतिशत तथा तीव्रता अत्यधिक न हो (विशेष रूप प्रमस्तिष्क अघात स्वलनित बहुयोगी दिव्यांगता डनसजपचसम क्पेंइपसपजल मानसिक मन्दता डमदजंस त्मजंतकंजपवदआदि जैसे मामलों) में दिव्यांग बच्चों को भी सामान्य बच्चों के साथ ही सामान्य विद्यालयों में नामांकित कराकर उनकी शिक्षा की व्यवस्था समेकित शिक्षा के अन्तर्गत की गयी।

पूर्ण दृष्टिबाधित, अल्पदृष्टिबाधित, श्रवणबाधित, मूक तथा अस्थि दिव्यांगता से सम्बन्धित दिव्यांग बच्चों के कम से कम विद्यालयों में प्रवेश में कोई विशेष समस्या भी नही थी। अतः पूर्व की तुलना में अब बड़ी संख्या में दिव्यांग बच्चें भी सामान्य शिक्षा व्यवस्था तथा सामान्य विद्यालयों के अंतर्गत आ गये।

किन्तु दिव्यांग बच्चों के सामन्य विद्यालयों में प्रवेश कराने मात्र से ही कोई उद्देश्य परिर्वतन नही आया। उनका प्रवेश तो करा दिया गया किन्तु दिव्यांग बच्चों की आवशयकताओं के अनुरूप शिक्षण अधिगम की परिस्थितियों में कोई सुधार तथा परिर्वतन नही किया गया। सरकारों तथा व्यवस्था ने दिव्यांग बच्चों को विद्यालयों में प्रविष्ट कराकर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर ली। और एक प्रकार से दिव्यांग बच्चों पर ही यह दायित्व भी डाल दिया कि वे व्यवस्था अर्थात सामान्य विद्यालयों के अनुरूप अपना अनुकूलन कर लें जो कि लगभग असंभव था। जैसे पूर्ण दृष्टिबाधित बच्चे का प्रवेश तो सामान्य विद्यालय में किया गया। किन्तु उस बच्चे को ब्रेल लिपि में अध्ययन सामग्री नही मिली, न ही ब्रेल लिपि की समझ रखने वाले शिक्षक मिले। इसी प्रकार विद्यालय के आधारभूत ढ़ाँचे ;ब्पअपस ब्वदेजतनबजपवदद्ध जैसे विद्यालय भवन में रैम्प तथा रैलिगं, कक्षाकक्ष, शौचालय व्यवस्था आदि में भी कोई परिर्वतन नही किया गया। पुनः शिक्षा व्यवस्था को नियंत्रण करने वाले प्रशासकों तथा शिक्षकों की दिव्यांगों के प्रति मानसिकता में भी ऐसा कोई उल्लेखनीय परिर्वतन नही आया जो कि दिव्यांग बच्चों को प्रोत्साहित करता। अतः स्वभाविक रूप से दिव्यांग बच्चे विद्यालयों से विमुख होने लगे। और इससे समेकित शिक्षा की अवधारणा अपने धरातलीय परीक्षण. में असफल हो गयभ्

2.5 समावेशन (Inclusion)

समावेशित शिक्षा- समेकित शिक्षा की असफलता ने समावेशित शिक्षा की अवधारणा का विकास किया। समावेशित शिक्षा के अंतर्गत समाज तथा शिक्षा व्यवस्था में सिद्धान्तः यह स्वीकार किया कि दिव्यांग बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन तथा सुधार करना अपरिहार्य है। क्योंकि दिव्यांग बच्चों का सामान्य विद्यालयी व्यवस्था में समेल्लन करने मात्र से किसी भी सारगर्मित लक्ष्य की प्राप्ति नही होगी। दिव्यांग बच्चे को उसकी अक्षमता के दृष्टिगत जरूरी सुविधाएं तथा साधन के साथ ऐसा मनोवैज्ञानिक तथा उत्साहजनक शैक्षिक वतावरण उपलब्ध कराना व्यवस्था का दात्यिव है। अनेकों राष्ट्रीय तथा अंतराष्ट्रीय घोषणा पत्रों तथा अधिनियम में भी दिव्यांगों के समावेशन के दृष्टिगत यह प्रत्येक बच्चा आधितीय है। प्रत्येक बच्चें कि सिखने की गति अलग-अलग है। उसकी अपनी विशिष्ट रूचि है। अतः प्रतिबद्धता व्यक्ति की गई कि उन समस्त को अवरोधों को हराना अत्यधिक आवश्यक है। जो कि दिव्यांग बच्चों कि सम्पूण शैक्षिक सहभागिता के मार्ग में बाधा बनते है। समावेशित शिक्षा का अभिप्राय है। प्रत्येक बच्चे की क्षमता उसकी अक्षमता विशिष्टता उनकी निजता तथा एक मानव होने के नाते उसकी मूलभूत आवश्यकताओं का सम्मान करते हुए समस्त शिक्षा व्यवस्था में ऐसे सकारात्मक सुधार किए जाएं जिनके अन्तर्गत सभी बच्चें एक दूसरे के सम्मान करते हुए मिलकर सृजनात्मक ज्ञानार्जन की प्रक्रिया का हिस्सा बन सके।

सभी के शिक्षा के नारे के साथ समावेशित शिक्षा के अंतराष्ट्रीय लोकप्रियता मिली। हमारे देश में अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 में दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के दृष्टिगत किए गए संशोधनों के पश्चात दिव्यांग बच्चों के शैक्षिक समावेश को कानूनी कवच ही प्राप्त हुआ है।

समावेशी शिक्षा के विकास में तीन प्रमुख घटनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है।

1. 1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानव अधिकारों से सम्बधित घोषणा पत्र
2. 1990 में सभी के शिक्षा से सम्बधित विश्व क्रान्फ्रेस
3. सलामान्का कथन 1994

इसमें यूनेस्कों द्वारा (7-10) जून 1994 को सलामान्का (स्पेन-यूरोप) में आयोजित विश्व क्रान्फ्रेस का योगदान अतुलनीय है। उक्त सम्मेलन में विश्व के 92 राष्ट्रों तथा 25 अन्तराष्ट्रीय संगठनों के 300 से भी अधिक प्रतिभागियों ने भाग लिया। सम्मेलन में समावेशी शिक्षा व्यवस्था के विकास की आवश्यकता पर विशेष जोर देते हुए विद्यालय की शिक्षा प्रणाली तथा आधार भूत ढांचे में ऐसे बदलाव का आहवान किया जिसमें दिव्यांग बच्चों सहित समान बच्चे एक साथ शिक्षण अधिगम प्रक्रिम में सहभागिता करे। सदस्य राष्ट्रों के प्रतिनिधियों में जिस एतिहासिक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए उसके अनुसार सरकारों के लिए अब यह बाहयकारी
हो गया था कि वे अपने राष्ट्रों में ऐसा निष्पक्ष शैक्षिक वातावरण तैयार करें जिसमें दिव्यांग बच्चों को भी सामान्य बच्चों के समकक्ष शैक्षिक विकास के न्यासंगत अवसर उपलब्ध हो सके। सलामान्का सम्मेलन में सभी के लिए शिक्षा की सच्ची भावना के अनुरूप शैक्षिक निष्पक्षता की सुनिश्चितता पर ध्यान केंद्रित किया। शैक्षिक निष्पक्षकता का आशय समान शिक्षा की पहुंच तथा सुलमता से भी कही अधिक एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था के विकास से है जिसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के ऐसी विशेष परिस्थितियां सहायता सुविधा तथा सधान उपलब्ध कराए जाए जिससे की उन्हे समान्य बच्चों की बराबरी पर लाया जा सकें और ऐसा समावेशी शिक्षा व्यवस्था के अतर्गन ही संभव है।

यहॉ यह उल्लेख करना भी अत्यधिक प्रासंगिक होगा कि समावेशित शिक्षा के अंतर्गत मात्र दिव्यांग बच्चों का ही नही वरन उन बच्चों का समावेशन भी सम्मिलित है जो कि हासिए पर हैं। जैसे अत्यधिक गरीबी में जीवन यापन करने वाले बच्चे समाज में कमजोर वर्गों के बच्चे प्राकृतिक आपदाओं बाढ़ सूखा सुनामी भूकम्प भूस्खलन सहित युद्ध की विभिषिका झेलने वाले ऐसे बच्चे जो अपनी जमीन तथा राष्ट्र से विस्थपित हो गये है। विद्यालयों में कभी नामांकित नही हुए अथवा आर्थिक व पारिवारिक कारणों से बीच में ही पढाई छोड देने वाले बच्चों का भी शैक्षिक समावेशन अनिवार्य है।

समावेशन का आधारभूत सिद्धान्त यह है कि बच्चों ने बडे होकर इसी समाज में रहना है। इसी समाज में जीना है। सभी ने परस्पर मिलजुल कर एक साथ जीना है। अतः उनहें एक ही साथ शिक्षा भी प्राप्त करनी चाहिए। बच्चे एक साथ न सिर्फ सीखते है। वरन एक साथ रहकर जीना भी सीखते है। यदि उन्हें उनकी विशिष्ट क्षमता अक्षमता के आधार पर अलग अलग रखकर पढाया जायेगा तो भविष्य में जब वे बडे होंगे तो परस्पर आश्रित मानव समाज में जीवन यापन करने में उन्हें कठिनाइयां आनी स्वाभाविक है।

2.5.1सलमंका सम्मेलन के अनुसार समावेशित शिक्षा -

बच्चों की शारीरिक बौद्धिक समाजिक भावनात्मक भाषायी अथवा अन्य स्थितियों का संज्ञान लिये बगैर उन्हे विद्यालय में प्रवेश दिया जाना चाहिए। इसके अंतर्गत शारीरिक तथा मानसिक चुनौतियों से जुझने वाले बच्चे मेघावी बच्चे कामगार बच्चे ग्रामीण बच्चे घुमंतू प्रजाति के अल्पसंख्यक बच्चे अलामकारी तथा अधिकार रहित क्षेत्रों के बच्चे सम्मेलित है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार के समावेशित शिक्षा कार्यक्रम क अनुसार समावेशित शिक्षा समावेशित शिक्षा का आशय कि सभी सीखने वाले बच्चे जिसमंे अक्षमता रहित तथा अक्षमताओं की चुनौतियों का सामना करने वाले सम्मिलित है पूर्व विद्यालय प्रावधानों विद्यालय तथा सामुदायिक शिक्षण संस्थानों पर उपयुक्त व्यवस्था तथा सहायक सुविधाओं के साथ एक साथ पढना लिखना सीख सके।

समावेशित शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न वर्गों, समुदायों के बच्चे, विभिन्न सामाजिक-आर्थिक प्रष्ठभूमि के बच्चे तथा दिव्यांग बच्चे एक ही छत के नीचे शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में भाग लेते हैं। व्यवस्था तथा संस्कारों द्वारा समस्त बच्चों को न्यायसंगत शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराए जाते हैं।

द्रुत तकनीकी विकास के साथ साथ भूमण्डलिकरण, आर्थिक उदारीकरण तथा निजीकरण के पश्चात तेजी से एक छोटे से गांव में तब्दील हो रही दुनिया में विभिन्न समाजों तथा राष्ट्रों के नागरिकों के मध्य परस्पर सहयोग तथा सामन्जस्य के लिये यह जरूरी है कि समावेशित शिक्षा का विचार मात्र एक घटना अथवा प्रक्रिया तक ही सीमित नहीं रह जाए। समय की मांग है कि समावेशित शिक्षा एक आन्दोलन का रूप ले। माननीय जनप्रतिनिधियों, शैक्षिक प्रशासकों, समुदाय, अभिभावक तथा विशेष रूप से शिक्षकों के लिए यह अत्यधिक आवश्यक है कि वे समावेशित की संकल्पना तथा समप्रत्यय को सही संदर्भ में समझें तथा म्त भावना के अनुरूप अनुरूप उसका क्रियान्वयन सुनिश्चित करें।

2.5.2 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005

समावेशन की नीति प्रत्येक विद्यालय तथा समूची शिक्षा व्यवस्था के व्यापक रूप से लागू किये जाने की जरूरत हैं। बच्चे के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चाहे विद्यालय हो अथवा विद्यालय से बाहर, सभी बच्चों की सहभागिता किये जाने की आवश्यकता हैं। प्रशासकों तथा अध्यापकों को यह समझना चाहिए कि जब भिन्न सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा भिन्न क्षमता स्तर के बालक-बालिकाएं एक साथ पढ़ते हैं। तो कक्षा का वातावरण और समृद्ध तथा प्रेरक बन जाता हैं।

2.5.3 परम्परागत शिक्षा तथा समावेशित शिक्षा

परम्परागत शिक्षा से समावेशित शिक्षा की अवधारणा के विकास में लम्बा समय लगा, विशेष रूप से दृष्टिकोण परिवर्तन में, जिसमें शिक्षा जगत से सबंद्ध लोगों ने यह समझा कि कमजोर वर्गो तथा

दिव्यांग बच्चों को शिक्षा के साथ-साथ समाज की मुख्यधारा में शामिल करने के लिए समावेशित शैक्षिक वातावरण का निर्माण आवश्यक हैं। जहॉ पारम्परिक शिक्षा कुछ बच्चों तक ही सीमित थी, समावेशित शिक्षा में दिव्याँग बच्चों सहित समाज के प्रत्येक वर्ग के बच्चे को पक्षपात तथा दुर्भावना रहित न्यायसंगत शैक्षिक अवसरों की उपलब्धता के सुनिश्चितीकरण के प्रयास किये गये। पारम्परिक शिक्षा में कठोरता थी। इसमें बच्चों पर ही जिम्मेदारी थी कि वे अपने विद्यालय के लिए कक्षा-कक्ष तथा शैक्षिक व्यवस्था के अनुकूल अपने को ढालें लेकिन समावेशित शिक्षा में यह दायित्व व्यवस्था एवं शैक्षिक प्रशासन पर है कि प्रत्येक बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए वह बच्चे की आवश्यकता के अनुरूप परिवर्तन करें अर्थात समावेशित शिक्षा में लचीलापन है जिससे विद्यार्थी के अनुकूल ससमय संशोधन संभव हैं।

परम्परागत शिक्षा विषय-केन्द्रित हैं इसका झुकाव सामूहिक शिक्षण की ओर है जबकि समावेशित शिक्षा बात-केन्द्रित है और व्यक्तिगत अर्थात प्रत्येक छात्र के शिक्षण पर जोर देती हैं। परम्परागत शिक्षण की तरह यह शिक्षण पर नहीं वरन अधिगम पर आधारित हैं।

परम्परागत शिक्षा में दिव्याँग बच्चों के लिए उनकी निःशक्तता के अनुरूप अलग से विद्यालयों का प्रावधान था। इस पृथकता के कारण अवसर सीमित थे जबकि समावेशित शिक्षा में अवसरों की समानता पर जोर देते हुए समाज के प्रत्येक वर्ग के बच्चों सहित दिव्याँग बच्चों को भी सामान्य बच्चों के साथ ही शिक्षा का प्रावधान किया गया।

इस प्रकार हम पाते है कि परम्परागत शिक्षा विशेष रूप से दिव्यांग बच्चों के अनुकूल नहीं थी अतः दिव्याँग बच्चों को समाज की मुख्यधारा का अटूट हिस्सा बनाने के साथ-साथ सामाजिक समरसता के दीर्घकालिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भी शैक्षिक समावेशन अपरिहार्य हैं।

स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्न-भाग-1

1. फ्रांस में दृष्टिबाधितों के पहले शिक्षण संस्थान की स्थापना किसने की ?
2. जून **1994** में सलामानका-स्पेन में विश्व कान्फ्रेंस का आयोजन किस अन्तराष्ट्रीय संस्था ने किया था।
3. **NIOH** राष्ट्रीय अस्थि दिव्यांगता संस्थान कहॉ स्थित हैं।
4. **4-**समावेशित शिक्षा का मुख्य आधार क्या हैं।

2.6 कक्षा कक्ष की विविधताएं/अनेकताएं

विविधता समावेशी कक्षा-कक्ष की महत्वपूर्ण विशेषता हैं। तथा श्रेष्ठतासूचक चिन्ह हैं लेकिन यदि ’विविधता’ को यथोचित सम्मान देते हुए अध्येता केन्द्रित शिक्षण अधिगम प्रक्रिया सम्पादित नहीं की जाती तो शैक्षिक समावेशन का कोई अर्थ नहीं हैं।

हम जानते हैं कि प्रत्येक बच्चा अद्वितीय हैं। यह आद्वितीयता मात्र शारीरिक बनावट तक ही सीमित नहीं हैं। प्रत्येक बच्चे की सीखने की गति दूसरे बच्चे से भिन्न हैं। उसकी रूचि, योग्यता तथा झुकाव दूसरे से पृथक है। प्रत्येक बच्चे की सामाजिक, बौद्धिक तथा भावनात्मक आवश्यकताए दूसरे बच्चों से अलग होती हैं।

और यह आवश्यक नही कि पुनः प्रत्येक बच्चे की अपनी विशिष्ट पहचान हैं। यह पहचान उसके कक्षा-कक्ष के अन्य बच्चों से मिलती हो। प्रत्येक बच्चे का लिंग, उसका जेंडर, उसकी राष्ट्रीयता, उसकी नस्ल, रंग, धार्मिक आस्था आदि उसकी व्यक्तिगत पहचान हैं।

इसके अतिरिक्त एक ही कक्षा-कक्ष में पढ़ने वाले बच्चे विभिन्न समाजों तथा समुदायों से आते हैं। जिनके सांस्कृतिक सरोकार अक्सर अलग-अलग होते हैं। बच्चों के परिवारों की आर्थिक पृष्ठभूमि तथा उनके माता-पिता एवं अभिभावकों का शैक्षिक-सामाजिक स्तर प्रायः एक समान नहीं होता।

एक ही कक्षा-कक्ष के बच्चों की बुद्धि-लब्धि अलग-अलग होती हैं। अनेकों प्रकार की शारीरिक तथा मानसिक चुनौतियों से जूझने वाले दिव्याँग बच्चे भी उसी कक्षा का अभिन्न भाग हैं।

अतः प्रभावी शिक्षण के लिए यह जरूरी है कि शिक्षक सभी बच्चों की विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए तथा प्रत्येक बच्चे की विशिष्ट पहचानों के दृष्टिगत शिक्षण कार्य करने के लिए आवश्यक योजना बनाएं शिक्षकों के लिए जरूरी हैं कि छात्रों की आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यचर्या तथा पाठ्सामग्री में यथोचित परिवर्तन करें। अपनी शिक्षण तथा मूल्याँकन पद्धति में उत्तरोत्तर सुधारात्मक परिवर्तन सहित शिक्षकों को शिक्षण-अधिगम सामग्री का निर्माण करना चाहिए जो दिव्याँग बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं की भी पूर्ति करे। कक्षा-कक्ष की बैठक व्यवस्था, फर्नीचर, खेल सामग्री के साथ-साथ पाठ्सहगामी गतिविधियों जैसे खेल तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का निर्धारण करते समय भी प्रत्येक बच्चे का ध्यान रखना आवश्यक हैं। कई बार कक्षा-कक्ष में ऐसे बच्चे भी हो सकते हैं जिन्हें अलग से अधिक समय देना पड़ सकता हैं। जैसे अधिगम अक्षम बच्चे, ऑटिज्म से पीड़ित बच्चे, अत्यधिक चचंल प्रवृति के बच्चे जिनके लिए शिक्षक को पृथक से व्यक्तिगत प्रयास भी करने पड़ सकते हैं। कक्षा-कक्ष में समावेशी शैक्षिक वातावरण के निर्माण के लिए शिक्षक को प्रत्येक बच्चे की पृथक पहचानों के संरक्षण तथा सुरक्षा के साथ बच्चे की विविधताओं तथा आवश्यकताओं का सम्मान करना होगा, और तद्रूप ही शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का निष्पादन करना होगा।

2.6.1 अधिगम प्रक्रिया

अध्येता केन्द्रित बाल-मैत्रीपूर्ण शैक्षिक वातावरण समावेशित कक्षा-कक्ष की आधारभूत पहचान हैं इसमें शिक्षक की भूमिका एक सुगमकर्ता की है जिसके मार्गदर्शन में कक्षा-कक्ष के समस्त बच्चे ज्ञान सृजन की प्रक्रिया में भाग लेते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि कक्षा-कक्ष का वातावरण पूर्णतः भयमुक्त हो, लोकतांत्रिक हो एवं सौहार्दपूर्ण हो। अर्थात बिना किसी भय तथा झिझक के एक दूसरे के

विचारों का सम्मान करते हुए मित्रवत वातावरण में बच्चे शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में भाग लें। शिक्षक प्रत्येक बच्चे की विविधताओं का ध्यान में रखते हुए अधिगम प्रक्रिया में सुधार करे। और इसके लिए संसाधनों से भी अधिक आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक नवोन्मेषी तथा सृजनात्मक सोच वाला हो।

समावेशन का मूल हैं- पक्षपात रहित शैक्षिक व्यवस्था जिसमें सभी बच्चों को न्यायसंगत अवसरों की समानता उपलब्ध करायी जायेगी। सभी बच्चों को एक निश्चित अधिगम स्तर की प्राप्ति के लिए आवश्यकतानुसार अतिरिक्त संसाधन प्रदान किये जायेगे। और इसमें शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण हैं।

अलग-अलग कक्षा के लिए विषयों तथा संवोधों की प्रकृति के अनुसार शिक्षण अधिगम सामग्री का निर्माण करते समय छात्रों की अधिगम गति का ध्यान रखना आवश्यक हैं। इसके लिए जरूरी है कि प्रत्येक छात्र की व्यक्तिगत शिक्षण योजना प्दकपअपकनंस म्कनबंजपवद च्संद.प्म्च् का निर्माण किया जाए। इसमें विद्यार्थी की व्यक्तिगत जानकारी के अतिरिक्त यह विवरण दर्ज किया जाता हैं कि विद्यार्थी कैसे गतिविधियॅा स्वयं/सहायता से सम्पादित कर सकता हैं। नहीं कर पाता हैं। तत्पश्चात् चरण बद्ध कार्य विश्लेषण के बाद व्यक्तिगत शिक्षण योजना तैयार की जाती हैं। इसके बाद यदि विद्यार्थी आशानुकूल अधिगम प्राप्ति में सफल नहीं हो पाता है तो सभंव है कि ऐसा अनुचित शिक्षण तरीके और असंगत शिक्षण अधिगम सामग्री के कारण हुआ हो। यह भी संभव है कि शिक्षक द्वारा तैयार प्म्च् के कार्य विश्लेषण के विभिन्न चरणों का क्रम गलत हो/ये चरण ही गलत हों। संदेह का लाभ शिक्षक को नहीं वरन् विद्यार्थी को दिया जाएगा। कक्षा-कक्ष का वातावरण मित्रवत बने यह देखना मुख्यतः शिक्षक का ही दायित्व हैं। शैक्षणिक तथा पाठ्य-सहगामी क्रियाकलापों के चयन में छात्रों को स्वायत्तता मिलनी चाहिए। बेशक क्रियाकलापों का चयन तथा क्रियान्वयन शिक्षक की देख-रेख तथा मार्गदर्शन में हों।

छात्र मात्र शिक्षक से ही नहीं सीखते हों/विद्यालय में ही नहीं सीखते हों। छात्र अपने सहपाठी से/साथी समूह में भी सीखते हैं। शिक्षकों को ऐसे सामूहिक अधिगम प्रयासों को प्रोत्साहित करना चाहिए। ऐसा वातावरण तैयार किया जाए जिसमें बच्चे एक दूसरे के अनुभवों का लाभ उठाते हुए ज्ञान सृजन की प्रक्रिया में साझीदार बनें, एक दूसरे की सहायता करें। बेहतर होगा यदि शिक्षक सामूहिक अधिगम योजना जिसमें चरणबद्ध कार्य विश्लेषण के द्वारा सामूहिक अधिगम को क्रियान्वित किया जाता हैं।

कक्षा-कक्ष में विद्यार्थियों को पूर्ण स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। प्रायः अनुशासन के नाम छात्रों के स्वाभाविक-नैसर्गिक विकास को अवरूद्ध कर देते हैं। भयमुक्त लोकतांत्रिक कक्षा-कक्ष वातावरण आवश्यक हैं। और शिक्षण सहायक सामग्री तथा शिक्षण-अधिगम सामग्री का चयन करते समय छात्रों की राय को महत्व देना चाहिए। और शिक्षण-अधिगम सामग्री के निर्माण में भी छात्रों को

सम्मिलित करना चाहिए। प्रायः शिक्षक, शिक्षण अधिगम सामग्री का निर्माण करके उसे संभालकर रख देते हैं। और मात्र संबंधित संवोध के शिक्षण के समय ही उसे बच्चों को दिखाते हैं। ऐसा करने से संबंधित संबोध की समझ के विकास के लिए बच्चों को प्राप्त अवसरों की संख्या सीमित हो जाती हैं। सहुलियत के अनुसार शिक्षकों को कक्षा-कक्ष/विद्यालय में किसी स्थान को अधिगम स्थल/स्मंतदपदह बवतदमत के रूप में विकसित करना चाहिए जहॉ सम्पूर्ण शिक्षण अधिगम सामग्री तक छात्रों की पहुँच सरल हो।

2.6.2 सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता

सामाजिक सांस्कृतिक सरोकारों तथा भाषा में अटूट संबंध हैं। विद्यालय में नामांकित बच्चे प्रायः भिन्न-भिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से होते हैं कक्षा-कक्ष में बच्चे के शरीर के साथ-साथ बच्चे के सामाजिक तथा सांस्कृतिक आचार-विचार भी प्रवेश करते हैं। शिक्षक को इस दिशा में विशेष रूप से सतर्क रहना चाहिए। कक्षा-कक्ष की नस्लीय, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विविधताओं के दृ्ष्टिगत प्रभावी शिक्षण की कोई सार्वभौमिक तथा अकाट्य शिक्षण तकनीक नहीं हो सकती लेकिन शिक्षक की संवेदनशीलता अपरिहार्य हैं। शिक्षक पूर्वाग्रहों तथा व्यक्तिगत दुराग्रहों को त्यागकर अपनी भाषा, शब्दावली, आचरण तथा व्यवहार के प्रति सदैव सजग रहना चाहिए। भूलवश भी कोई ऐसा वचन नहीं बोलना चाहिए या ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए जिससे बच्चों की धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक पहचान आहत होती हो। किसी संस्कृति विशेष के प्रति झुकाव या धर्म विशेष के प्रति पक्षपाती व्यवहार समावेशी शिक्षा की अवधारणा के खिलाफ हैं। समावेशित शिक्षा बहुलतावादी समाज के अनुभवों तथा सरोकारों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

और इसके लिए शिक्षक के सभी बच्चों की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की जानकारी होनी चाहिए। शिक्षक के लिए यह आवश्यक हैं कि प्रत्येक विद्यार्थी को एक मानवीय इकाई रूप में सम्मान दे। सामाजिक-सांस्कृतिक बहुलता से परिपूर्ण कक्षा में प्रभावी तथा परिणामदायी शिक्षण के लिए शिक्षक को संवेदनशीलता के साथ-साथ नवोन्मेषी तथा सृजनशील होना चाहिए।

पाठ्यचर्या का चयन, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, पाठ्य सहगामी क्रियाकलापों के क्रियान्वयन तथा मूल्याँकन करते समय शिक्षक को सजग रहना आवश्यक हैं। भाषागत तथा सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं से परिपूर्ण किसी कक्षा-कक्ष के समावेशी वातावरण के निर्माण के लिए कोई भी शिक्षण तकनीक शिक्षण की संवेदनशीलता सृजनशीलता तथा नवोन्मेषी विचारों का विकल्प नहीं हो सकती

2.6.3 भाषागत विविधता तथा बहुलता

भाषा मात्र संचार का माध्यम ही नहीं हैं मनुष्य की विकास से भाषा का अंतरंग संबंध हैं। बच्चा जिस सामाजिक तथा भौगोलिक परिवेश में जन्म लेता हैं और जिस परिवेश में बच्चे की परवरिश होती हैं

उसमें विकसित भाषा बच्चे के मनोमस्तिष्क के सर्वाधिक अनुकूल होती हैं। अपने जिविकोपार्जन के लिए मनुष्य ज्ञान-विज्ञान के किसी भी क्षेत्र का चयन करे इसके लिए अत्यधिक आवश्यक है कि उस क्षेत्र-विशेष के प्रति बुनियादी समझ विकसित हो लेकिन इसके लिए मातृभाषा से बेहतर विकल्प कोई नहीं हैं।

लेकिन आज के सामाजिक परिवेश में बच्चे को उस भाषा को सीखने का अतिरिक्त दबाव रहता है। जो कक्षा-कक्ष में शिक्षण की प्रभावी भाषा हैं। प्रभावी भाषा से तात्पर्य उस भाषा से हैं जिसमें शिक्षक शिक्षण कार्य सम्पादित करते हैं। अभी हाल में लगभग **80** साल बाद कराये गये भारतीय भाषाओं के सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ हैं कि भारत में लगभग **900** भाषाएं बोली जाती हैं। हालांकि इसमें वो भाषाऐं भी सम्मिलित हैं जिन्हें दस हजार से कम लोग बोलते हैं। प्रत्येक **10-15** किमी की दूसरी में भाषा का स्वरूप बदल जाता हैं। स्वाभाविक रूप से एक कक्षा-कक्ष में विभिन्न भाषागत समूहों के बच्चे पढ़ते हैं। एक शिक्षक के लिए यह जरूरी हैं कि वह भाषागत विविधता को सही परिप्रेक्ष्य में समझते हुए इसका सम्मान करे। प्रभावी शिक्षण के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक को बच्चों की भाषा/बोलियों का अच्चा ज्ञान हो लेकिन दुर्भाग्यवश प्रायः ऐसा नहीं हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-**2005** के आधार पत्र में इसे रेखांकित करते हुए कहा गया हैं कि ’’मातृभाषा में आरंभिक शिक्षा के शिक्षण शास्त्रीय महत्व के बावजूद भी**,** शिक्षक जनजातीय भाषा सीखने का कष्ट नहीं उठाते हैं यहॉ तक कि कई वर्षो तक की नियुक्ति के बाद भी छात्रों तथा शिक्षकों में आपसी समझ तथा तालमेल के आभाव की स्थिति सामान्य बात हैं। यह मूल्यों के विनाश्ज्ञ और बाद के वर्षो में सफल अधिगम की संभावनाओं को घटाती हैं। कई भाषाएं**,** मुख्यतः अल्पसंख्यकों द्वारा बोली जाने वाली भाषाएं मर रही हैं। भाषा को खोने के अर्थ हैं। संसार को जानने के एक विशेष तरीके का नुकसान’’

वर्ष **1961** की जनगणना के अनुसार**,** भारत में लगभग **16-17** सौ भाषाएं थी जो आज सिमटकर लगभग **900** रह गयी हैं। आगामी **50-60** वर्षो में लगभग **300** भाषाएं संभवतः समाप्त हो जायेंगी। तेजी से लुप्त होती भाषिक संपदा का संरक्षण आवश्यक हैं।

विद्यालयों में बच्चों की विविध भाषागत पहचानों तथा भाषागत-मूल्यों के मध्य सार्थक संतुलन बनाते हुए बच्चों के समावेशी विकास के लिए शैक्षिक प्रशासकों तथा शिक्षकों को बच्चों की भाषाओं का समृृद्ध ज्ञान होना चाहिए। समृद्ध भाषा ज्ञान से आशय हैं बच्चों की भाषाओं**,** बोलियों**,** उनके भाषागत परिप्रेक्ष्य से जुड़ी लोकोक्तियों**,** मुहावरों**,** किस्से-कहानियों तथा घटनाओं की अच्छी समझ। बच्चों की भाषागत विविधताओं के दृष्टिगत ही शिक्षण कार्य किसे जाएं। समावेशी कक्षा-कक्ष वातावरण के निर्माण के लिए शिक्षक को शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के दौरान बच्चों के घरों मे बोली जाने वाली भाषा का प्रयोग करना चाहिए। इससे बच्चों में स्वयं के प्रति सम्मान तथा विश्वास भी जागृत होगा। एक से अधिक भाषा होने की स्थिति में शिक्षकों को संबंधित

भाषाओं तथा बोलियों से संबंध लोगों से परामर्श के उपरान्त कक्षा-कक्ष की प्रधान भाषा का चयन करना चाहिए।

स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्न-भाग-2

1. **IEP** का पूरा नाम क्या हैं।
2. **GLP** का पूरा नाम क्या हैं।
3. भाषायी तथा सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं वाली कक्षा में प्रभावी शिक्षक के सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुणों का उल्लेख कीजिए।
4. भारत में वर्तमान में लगभग कितनी भाषाएं बोली जाती हैं।

2.7 समावेशित शिक्षा के अवरोध तथा चुनौतियाँ

निःसन्देह शैक्षिक समावेशन सिद्धान्त सर्वस्वीकार्य उत्कृष्ट विचार है तथापि इसका वास्तविक धरातलीय क्रियानवयन बहुत जटिल है। अनेकों अन्तराष्ट्रीय घोषणापत्रों की पतिबद्धता तथा कानूनों के बावजूद दिव्यांग बच्चों की शिक्षा में अपेक्षित सुधार नहीं हो पाया है।
हमारे लिए समावेशन के अवराधो तथा चुनौतियों को जानना बेहद जरूरी है।

2.7.1 सोच तथा द्रष्टिकोण

सामान्यतः जनसाधारण की अक्षमता तथा दिव्यांगता के प्रति सोच तथा नजरिया समावेशन के मार्ग में सबसे बडी विद्या है। किसी भी बच्चे/मनुष्य की किसी कार्य विशेष को करने की अक्षमता अथवा सीमा एक सामान्य बात है। सामान्य व्यक्ति भी अपने जीवनकाल में किसी कार्य विशेष को सम्पादित करने में अक्षम हो सकता है। जैसे चोट लगने पर और हाथ पैरों में प्लास्टर बंधने पर किसी मनुष्य को अनेक कार्य इसारे की सहायता से ही करने पडते हैं। पुनः वृद्धावस्था में व्यक्ति के अनेकों शरिरिक अंग शिक्षित पड़ जाते हैं जैसे आंख से कम दिखाई देना अथवा श्रवण क्षमता बहुत क्षीण हो जाना। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवनकाल में कभी न कभी अनेकों कारणों के फलस्वरूप किसी न किसी परीप्रक्ष्य में दिव्यांग हो जाता है। अर्थात अक्षमता प्रत्येक मानव जीवन की अनचाही किन्तु अपरिहार्य तथा प्राकृतिक घटना है। इस ब्रहम सत्य को जानने के बावजूद लोग दिव्यांग तथा अक्षम व्यक्तियों के प्रति एकाग्रता दृष्टिकोंण रखते हैं। उनके प्रति भेदभाव रखते हैं। दुनिया के अनेकों समाजों में यह धारणा है कि पूर्वजन्मों के अनुचित कर्मों के प्रतिफल के रूप् में दिव्यांगता आती है। और दिव्यांग व्यक्ति को 'बुरी नजर' लग जाती है। अतः दिव्यांग व्यक्ति/बच्चे की सकारात्मक सहायता तथा हस्तक्षेप का अर्थ है अल्लाह की इच्छा के विरूद्ध कार्य करना। क्योकि आज भी यह अतार्किक सोच लोगों के

दिलोदिमाग में हावी है कि दिव्यांगता ईश्वर का दिया दण्ड है और इस दण्ड को मागना दिव्यांग व्यक्ति की नियती है।

पुनः आज भी अनेकों व्यक्तियों में यह गलत धरणा है कि दिव्यांगता संक्रामक रोग है, यह छूत की बिमारी है। एसी धारण से पीड़ित व्यक्ति विकलांगों के प्रति गृणा का भाव रखता है। भारतीय समाज भी इन बातों से पूर्णतः अछूता नहीं है प्रायः भारतीय समाज बहुलता तथा विभिन्नता का सम्मान करते हुए एकीकरण को स्वीकार करता है। लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अक्षम व्यक्तियों के समाजिक समावेशन के सन्दर्भ में अनेकों भारतीय समाजों में आज भी नकारात्मक, दुराग्रही तथा भेदभावपूर्ण रवैया है।

अतः शैक्षिक समावेशन की सफलता काफी हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि अक्षमताओं से जूझ रहे बच्चों के प्रति लोंगों की मानसिकता में कैसे सकारात्मक परिवर्तन लाया जाए। क्योंकि विद्यार्थी कानून बनाने अथवा संवैधानिक प्रावधान करने मात्र से कोई कालजयी परिवर्तन नहीं आने वाला है। पुनः बडी धनराशि खर्च करके तथा अत्यधिक संसाधन जुटाने के बाद भी यदि मानसिक रूग्णता बनी रहे तो क्रियान्वयन के स्तर पर अनेकों कमियाँ रह जाना स्वाभाविक है।

इसलिए दिव्यांगता के प्रति सामान्य जन को जागरूक करना अत्यधिक आवश्यक । माननीय जनप्रतिनिधियों शैक्षिक प्रशासकों तथा शिक्षकों सहित अक्षम बच्चों के माता-पिता/अभिभावकों के लिए समय समय पर जागरूकता शिविर प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा अभिमुखिकरण कार्यशालाएं आयोंजित की जाएं। अच्छी जानकारी से दिव्यांग बच्चों से सम्बन्धित कार्यक्रमों के क्रियावचन में सहायता मिलती है और इन बच्चों के प्रति मैति मानसिकता भी धीरे धीरे दूर हो जाती है। संचार माध्यमों जैसे इलेक्ट्रानिक तथा प्रिंट मीडिया में ऐसे कार्यक्रम प्रसारित किये जा सकते हैं जिनसे कि विशेष आवश्यक्ता नाते दिव्यांग बच्चों के प्रति सकारात्मक द्रष्टिकोण विकसित किया जानकारी के अधिकाधिक संप्रेक्षण तथा फैलाव के साथ-साथ यह देखना भी उतना ही आवश्यक है कि कहीं टी0वी0 तथा रेडियो के द्वारा मनोरंजक कार्यक्रमों में जाने-अनजाने दर्शकों को कुछ ऐसा नहीं परोसा जाए जिससे कि अक्षमताओं की चुनौतियों से संघर्ष करने वाले दिव्यांगों की मनोभापनाओं को कोई ठेस पहुंचती हो। अक्षमताओं से संबन्धित विभिन्न वैज्ञानिक, सामाजिक, कानूनी तथा चिकित्सकीय पक्षों की जानकारी वृत्तचित्रों, कार्टून फिल्मों तथा मनोंरंजक कार्यक्रमों द्वारा जनसाधारण तक पहुँचायी जा सकती है।

2.7.2 दोषपूर्ण आधारभूत ढाँचा

दिव्यांग बच्चों को विद्यालयों में नामांकित तो कर दिया जाता है किन्तु विद्यालय भवन तथा विद्यालय परिसर की बनावट तथा आधारभूत ढांचे के निर्माण में उनकी आवशयकताओं के दृष्टिगत कोई सुधार नहीं किया जाता है।

यूनिसेफ तथा सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार ने अभी कुछ समय पूर्व विद्यालय के आधारभूत ढाँचे तथा निर्माण से सम्बन्धित निर्देश पुस्तिका प्रकाशित की है। यह पुस्तिका

एक शैक्षिक समावेशन की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण अनितोष है, जिससे सभी प्रकार की शिक्षण संस्थाऐं लाभांवित हो सकती है।

विद्यालय में प्रवेश तथा निकासी हेतु यथोचित ढलान वाली रेम्प हों उसमें रेलिंग लगे हों। विद्यालय के कक्षाकक्ष तथा शौचालय के दरवाजे ऐसे बनें हो जिससे कि उसमें व्हील चेयर तथा ट्राइसाइकिल सरलता से प्रविष्ट हो जाए। श्यामपट्ट की स्थिति तथा ऊँचाई, शौचालय में टायलेट शीट की स्थिति तथा उसकी ऊँचाई, शौचालय में समुचित तरीके से बैठने की आशय व्यवस्था के निर्माण में दिव्यांग बच्चों की सहुलियत का ध्यान रखा जाए। दृष्टिबाधित बच्चों के दृष्टिकोण से कक्षा कक्ष से ग्रीनबोर्ड का निर्माण बहुत उपयोगी है। इसी प्रकार कक्षा कक्ष की खिड़कियाँ बाहर गलियारे की ओर नहीं खुलें। प्रायः कक्षा कक्ष में परस्पर सम्बद्ध फर्नीचर होता है। जैसे मेज तथा डेस्क तथा कुर्सी आपस में जुड़े रहने से दिव्यांग बच्चों को बहुत परेशानी होती है। इस दिशा में ध्यान देने तथा सुधार करने से दिव्यांग बच्चों के शिक्षण में बड़ा प्रभाव पड़ता है।

अतः दिव्यांग बच्चों के शैक्षिक समावेशन के लिए दिव्यांग मैत्रीपूर्ण विद्यालय भवन तथा वा़िया कस निर्माण अत्यधिक आवश्यक है अन्यथा दिव्यांग बच्चे शिक्षा की मुख्यधारा से धीरे-धीरे दूर हो जायेंगे। इस प्रकार पाते हैं कि दोषपूर्ण आधारभूत ढाँचा दिव्यांग बच्चों के समावेशन में अवरोध उत्पन्न करता है।

2.7.3 संदर्भ शिक्षकों तथा विशेषज्ञों का अभाव

दिव्यांग बच्चों को सामान्य विद्यालयों में प्रवेश कराना शैक्षिक समावेशन की दिशा में प्रारम्भिक कदम अवश्य है, किन्तु प्रवेश कराने मात्र से ही समावेशन के लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव नहीं है। अक्षमता की अनेकों श्रेणियाँ है। यदि यह मान भी ले कि प्रत्येक अक्षमता के दृष्टिगत प्रत्येक विद्यालय में पृथक से सृदर्भ शिक्षक नियुक्त करना सम्भव नहीं हो पाता तथापि संकुल स्तर पर अथवा कम से कम प्रत्येक विकासखण्ड में प्रत्येक अक्षमता से सम्बंधित एक विशेष शिक्षक/संदर्भ शिक्षक की नियुक्ति की जा सकती है। इन संदर्भ शिक्षकों की सेवाऐं एक-एक कर उन विद्यालयों में आवश्यकतानुसार ली जा सकती है जहाँ दिव्यांग बच्चे पढ़ते है।

अभी कुछ वर्ष पूर्ण तक सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत प्रत्येक विकासखण्ड में आउटसोर्सिंग के माध्यम से एक-एक संदर्भ शिक्षक की नियुक्ति की गयी थी। राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (रमसा) के अन्तर्गत भी संदर्भ शिक्षकों की नियुक्ति का प्रावधान है। संदर्भ शिक्षकों की सहायता से दिव्यांग बच्चों के शिक्षण तथा दैनिक जीवन कौशल के विकास में सहायता मिलती है।

पुनः दिव्यांग बच्चों से सम्बंधित विशेषज्ञों का अभाव भी बड़ी समस्या है। उस पर भी वित्तीय बाध्यताओं का रोना रोकर, विशेषज्ञों तथा संदर्भ शिक्षकों की सुविधाऐं नहीं लेना दिव्यांग बच्चों के समावेशन को और चुनौतपूर्ण बना देता है।

2.7.4 संसाधनों की कमी

शैक्षिक समावेशन की दिशा में यथोचित संसाधनों की कमी एक बड़ी समस्या है। अक्षमता से जुझने वाले बच्चों के शिक्षण के लिए पाठ्यक्रम के सम्बंधों की प्रकृति के अनुसार आवश्यक शिक्षण अधिगम सामग्री ज्मंबीपदह स्मंतदपदह डंजमतपंस दृ ज्स्ड विद्यालयों में उपलब्ध नहीं है।

पुनः अक्षमता के अनुरूप आवश्यक उपकरण बच्चों को उपलब्ध नहीं कराये जाते हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में अनेकों स्वयंसेवी संस्थाओं ने उस दिशा में अच्छे प्रयास किये है। सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत एलिम्कों कानपुर के सहयोग से दिव्यांग बच्चों को बैसाखी, ट्राइसाइकिल, व्हीलचेयर, मैग्निफाइड, श्रवण यंत्र आदि प्रदान किये गये हैं। लेकिन ये प्रयास अपर्याप्त है, पुनः अनेकों बार प्रदत्त सहायका उपकरणों की गुणवत्ता भी आशानुकूल नहीं होती है।

इसके अतिरिक्त अधिगम में आवश्यक सहायता सामग्री का अभाव है, पूर्ण दृष्टिबाधित बच्चों के लिए ब्रेल, स्लेट, एवाकस, टेलीफ्रेम जैसे आधारभूत शैक्षिक उपकरण - जो कि बहुत ज्यादा महंगे भी नहंी है, विद्यालयों को उपलब्ध नहीं कराये जाते है। इसी प्रकार दृष्टिबाधित बच्चों.के लिए मैग्निफायर, लार्ज प्रिंट, पुस्तकें आवश्यक है। इनके अभाव में दृष्टिबाधित बच्चों का शिक्षण नहीं हो पाता है। श्रवण बाधित बच्चों को भी जरूरत के मुताबिक श्रवण यंत्र प्राप्त नहंी होते है।

2.7.5 जागरूकता, परामर्श तथा अभिमुखीकरण कार्यक्रमों की कमी

उचित शिक्षा तथा परामर्श की अप्राप्ति के कारण जनसाधारण तथा विशेष रूप से दिव्यांग बच्चों के माता-पिता तथा अभिभावकों में दिव्यांगता के प्रति नकारात्मकता का भाव है। ऐसे अभिभावक प्रायः अपने दिव्यांग बच्चों के प्रति अनावश्यक रूप से चिन्तित रहते हैं या आशंकित रहते है या उनकी ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देकर उन्हें उनके हाल में छोड़ देते हैं। जबकि अनेकों राज्य सरकारें, स्वयंसेवी संस्थाऐं, भारतीय पुर्नवास परिषद तथा सामाजिक न्याय तथा अधिकारिता मंत्रालय-भारत सरकार द्वारा दिव्यांगों के लिए अनेकों कल्याणकारी कार्यक्रम क्रियान्वित किये जा रहे हैं। अनेकों बार विशेषज्ञों द्वारा निःशुल्क परामर्श शिविर भी आयोजित किये जाते हैं। सरकार द्वारा अधिनियम बनाकर तथा अधिनियमों में आवश्यक संसोधन करके भी बनाकर दिव्यांगों के अधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया है। लेकिन जागरूकता तथा जानकारी के अभाव में वे इनका लाभ नहीं उठा पाते हैं। पुनः शिक्षकों, शैक्षिक प्रशासकों तथा विद्यालयों से सम्बद्ध कर्मचारियों को भी आधा अधूरी अपूर्ण जानकारी है। विभिन्न शोध तथा सर्वेक्षणों द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि जागरूक तथा जानकार अभिभावक दिव्यांगता के प्रति स्पष्ट, वैज्ञानिक तथा सही सोच रखते हैं। वे विद्यालयों में भी शिक्षकों के सम्पर्क में रहते हैं, उनका सहयोग करते हैं तथा सरकारी की नीतियों का लाभ उठाकर अपने दिव्यांग पाल्य को समाज की मुख्यधारा में शामिल कराने में सफल हो जाते हैं।

अतः शैक्षिक समावेशन के लिए यह आवश्यक है कि चाहें अभिभावक शिक्षित न हो लेकिन जागरूक तथा जानकार हों अतः दिव्यांगता के परिप्रेक्ष्य में व्यापक जन शिक्षा तथा प्रसार की आवश्यकता है।

2.7.6 गरीबी

भारत सहित अधिकांश विकासशील देशों में बहुुत बड़ी संख्या में बच्चें उन समाजों तथा परिवारों में आते हैं जो कि अत्यधिक गरीब है। गरीबी के कारण दिव्यांगता की सम्भावना को नकारा भी नहीं जा सकता है। कुपोषण तथा सुविधाओं के अभाव में गर्भवती महिलाऐं कई बार शारीरिक तथा मानसिक रूप से कमजोर बच्चों को जन्म देता है। ससमय स्वास्थ्य परीक्षण तथा समुचित चिकित्सा के लिए साधन तथा सुविधों चाहिए जो कि गरीबों को प्रायः नहीं मिल पाती है।

पुनः दिव्यांगों को विद्यालय तक भेजने तथा विद्यालय से घर तक लाने के लिए विशेष परिवहन तथा एस्कार्ट सुविधा चाहिए। जो गरीब माता-पिता के लिए प्रायः सम्भव नहीं हो पाता है। पिछले कुछ वर्षो में कुछ राज्यों में सर्व शिक्षा अभियान तथा राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियन के अन्तर्गत दिव्यांग बच्चों के एस्कार्ट तथा परिवहन के लिए अलग से धनराशि आवंटित की गयी। लेकिन यह अपर्याप्त थी और इससे सभी दिव्यांग लाभान्वित नहीं हो पाए। इस प्रकार हम पाते हैं कि गरीबी शैक्षिक समावेशन के मार्ग में बड़ी बाधा है।

2.7.7 शिक्षकों की व्यवहारिक प्रशिक्षण का अभाव

शिक्षक शिक्षा के अन्तर्गत संचालित विभिन्न कार्यक्रमों जैसे डी0एल0एड0, विशेष डी0एल0एड0, बी० एड०, एम0एड0 में समावेशित शिक्षा से सम्बंधित जानकारी नहीं है अथवा बहुत कम है और जो है भी वो मात्र सैद्धान्तिक पक्ष तक ही सीमित है। शिक्षकों को अक्षमता का व्यवहारिक ज्ञान नहीं है और जब कक्षा कक्ष में कोई दिव्यांग बच्चा आ जाता है तो अन्य बच्चों के साथ उसके शिक्षण में शिक्षकों को कठिनायी आती है और फिर धीरे-धीरे वे इन दिव्यांग बच्चों पर ध्यान देना छोड़ देते हैं और शैक्षिक समावेशन का उनका किताबी अध्ययन का धरातली कक्षा कक्ष शिक्षण में असफल हो जाता है।

लगभग यही स्थिति सेवारत शिक्षकों के प्रशिक्षणों की है। पहले तो सेवारत शिक्षकों को दिव्यांग बच्चों के शिक्षण से सम्बंधित प्रशिक्षण संचालित ही नहीं किये जाते हैं और जो थोड़े प्रशिक्षण/अनिमुखीकरण के कार्यक्रम होते भी हैं तो उनकी गुणवत्ता बहुत खराब है। जैसे स्तरहीन प्रशिक्षण ी पाठ्यचर्या/माड्यूल तथा संदर्भदाता का सीमित ज्ञान सेवापूर्व अथवा सेवारत शिक्षकों क प्रशिक्षण में दिव्यांग बच्चों के शिक्षण से सम्बंधित साहित्य तथा संबोधों को शामिल करने के साथ-साथ यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि सैद्धान्ति ज्ञान के अतिरिक्त शिक्षकों को व्यवहारिक अनुभव भी प्राप्त हो जैसे सेवापूर्ण प्रशिक्षु शिक्षकों को पाठ्यक्रम के दौरान अभ्यासक्रम तथा इंटर्नशिप में कुछ दिव्यांग बच्चों अथवा दिव्यांग बच्चों से सम्बंधित किसी संस्थान अथवा संस्था के साथ कुछ दिनों के लिए सम्बद्ध कर दिया जाये। जहाँ वे दिव्यांग बच्चों की गतिविधियों तथा उनकी समस्याओं के व्यवहारिक पक्ष को समझ सकें तथा सैद्धान्तिक ज्ञान का धरातलीय अनुभव कर सकें।

पुनः शैक्षिक प्रशासकों तथा विद्यालयों से सम्बंधित गैर-शैक्षणिक अभिकर्मियों के लिए भी संवेदीकरण कार्यक्रम तथा कार्यशालाऐं आयोजित करने की जरूरत है। उन्हें भी दिव्यांग बच्चों के दैनिक जीवन कौशल तथा आवश्यकताओं का व्यवहारिक ज्ञान दिया जाना अत्याधिक आवश्यक है।

स्वमूल्याँकन हेतु प्रश्न-भाग-3

1. शिक्षा में समावेशन के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा क्या हैं ?
2. अभी कुछ समय पूर्व किस अन्तराष्ट्रीय संस्था ने सामाजिक न्याय तथा आधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार के साथ सहयोग करके विद्यालय भवन के निर्माण से सम्बन्धित एक निर्देश पुस्तिका प्रकाशित की हैं।
3. समावेशित शिक्षा की प्रमुख चुनौतियॉ क्या हैं ?

2.8 सारांश

विश्व के समस्त राष्ट्र तथा समाज अपने नागरिकों तथा भावि पीड़ी के शैक्षिक विकास के प्रति सजग है। मानसिक चुनौतियों से जूझ रहे है, ये चुनौतियां तथा संघर्ष जन्मजात मां हो सकती हैं। और अनेकों मामलों में जन्म के कुछ समय बच्चों उपरान्त भी उत्पन्न हुई हो सकती है।

दिव्यांग बच्चे भी सामान्य बच्चों के समान है, उनमें भी प्रतिभा तथा क्षमता है, यर्थोचत न्यायसंगत अवसर तथा उत्साहजनक वातावरण मिलने पर ये बच्चे भी समान्य बच्चों के समान ही राष्ट्र तथा समाज के निर्माण में बहुमूल्य योगदान कर सकते है।

अतः इन बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा में शामिल करना एक परिष्कृत समाज का दायित्व है, साथ इस क्षेत्र में होने वाले विभिन्न शोध अध्ययनों, अनुभवों तथा तकनीक के निरन्तर विकास ने दिव्यांग बच्चों की शिक्षण पद्धति तथा अधिगम प्रक्रिया में दूरगामी प्रभाव डाला।

पिछले कुद दशकों में दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के विकास में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, लेकिन विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा का इतिहास सदा से एक समान नही रहा है। इंसान की सोच में परिवर्तन के साथ ही दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के तरीकों में भी बदलाव होता रहा। प्रस्तुत इकाई आपने पढ़ा कि किस प्रकार दिव्यांग बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़ा गया ?समावेशी कक्षाओं में कितने प्रकार की विविधता हो सकती है ? तथा समावेशी शिक्षा के लिए क्या-क्या चुनौतियाँ हो सकती हैं और क्या अवरोध होते हैं ? चुनौतियों का सामना तो हमें सभी जगह करना पड़ता है। इस नई चुनौती को हमें सहर्ष स्वीकार करके एक नए वातावरण का निर्माण करना होगा।

2.9 शब्दावली

पृथक्करण: अर्थात अलग-थलग रखना। पूर्व में दिव्यांग बच्चों को समाज का सदस्य नहीं माना जाता था उन्हें सभी कार्यो से विलग कर दिया जाता था।

एकीकरण : दिव्यांग बच्चों के लिए पृथक से विशेष विद्यालयों की अवधारणा समेकित विद्यालयों की अवधारणा में परिवर्तित हो गई मनोवैज्ञानिकों के अध्ययनों तथा शिक्षण तकनीक के कारणों से इसे बल मिला।

2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग 1 :

1. वेलनटाइन हौवे
2. यूनेस्को
3. कोलकाता
4. प्रत्येक अध्येता को पक्षपात तथा दुर्भावना रहित न्यायसंगत शैक्षिक अवसरों उपलब्धता

भाग 2 :

1. (Individual Education Plan) व्यक्तिगत शिक्षण योजना
2. (Group Learning Plan) समूह अधिगम योजना
3. शिक्षक की संवेदनशीलता, सृजनशीलता तथा नवोन्मेषी विचार
4. लगभग **900** भाषाएं

भाग 3 :

1. अक्षमता/दिव्यांगता के प्रति जनसाधारण की अनुचित सोच तथा दृष्टिकोण
2. यूनिसेफ
3. समावेशित शिक्षा की प्रमुख चुनौतियॉ....
   - अक्षमता के प्रति अनुचित दृष्टिकोण
   - दोषपूर्ण आधारभूत ढ़ॉचा
   - संदर्भ शिक्षकों तथा विशेषज्ञों का आभाव
   - संसाधनों का आभाव
   - जागरूकता, परामर्श तथा अभिमुखीकरण कार्यक्रमों की कमी
   - गरीबी
   - शिक्षकों के व्यवहारिक प्रशिक्षण का अभाव

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- हिन्दुस्तान, **30** दिसम्बर, **2016,** हल्द्वानी
- यूनेस्को **1994** विशेष शिक्षा के लिए सलामानका कथन तथा प्रारूप, यूनेस्को
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-**2005**

- निःशक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा एवं पूर्ण सहभागिता अधिनियम-**1995)**
- सर्व-शिक्षा अभियान
- राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान
- निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम-**2009**
- निःशक्त व्यक्ति अधिकार विधेयक-दिसम्बर-**2016**
- UNCRPD संयुक्त राष्ट्र निःशक्त व्यक्ति अधिकार समझौता-दिसम्बर **2006**
- Juno Commonwealth Acts& The Disablity Standards for Education 2005& Disability Discrimination Act 1992
- Position paper, NCF, on education of CWSN-NCERT, publication

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. समावेशित शिक्षा से आप क्या समझते हैं। यह विशेष शिक्षा तथा एकीकृत शिक्षा से किस प्रकार भिन्न हैं ?
2. भाषागत तथा सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं से परिपूर्ण कक्षा कक्ष में शिक्षण के लिए शिक्षक को संवेदनशील तथा सृजनशील होना क्यों आवश्यक हैं। उदाहरण सहित समझाइए।
3. समावेशित शिक्षा के अवरोध तथा चुनौतियों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई 3 - अंतर्राष्ट्रीय घोषणाएं

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 अंतर्राष्ट्रीय घोषणाएं
3.3.1 मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा (1948)
3.3.2 सबके लिए शिक्षा (1990)
3.4 अंतर्राष्ट्रीय सम्मलेन
3.4.1 भेदभाव के विरुद्द सम्मलेन(1960)
3.4.2 बालक के अधिकारों का सम्मलेन (1989)
3.4.3 दिव्यांग व्यक्ति के अधिकार के लिए संयुक्त राष्ट्र सम्मलेन (2006)
3.5 सारांश
3.6 शब्दावली
3.7 स्वमूल्यंकित प्रश्नों के उत्तर
3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आपने समावेशी शिक्षा के बारे में विस्तृत अध्ययन किया है। आपने यह भी अध्ययन किया है कि किस प्रकार बदलते परिवेश में शिक्षा में परिवर्तन किया जा सकता है। जब सभी को साथ लेकर शिक्षा की बात की जाती है तो शिक्षा में भी परिवर्तन करना पड़ता है। क्योंकि समावेशी कक्षाओं में विविधता के कारण अधिगम के तरीकों में बदलाव लाना पड़ता है। शिक्षा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा एक समावेशी समाज बनाया जा सकता है। जागरूकता के द्वारा ही समाज में वंचित वर्गों को अपने अधिकारों की प्राप्ति हो सकती है। हम अक्सर भूल जाते हैं कि व्यक्तिगत विभिन्नता समाज का अभिन्न अंग है। वंचित वर्ग भी समाज का हिस्सा हैं। उनके भी कुछ अधिकार हैं, जिसके कारण वे समाज में जीवन यापन करते हैं। उनके इन्ही अधिकारों को अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त है। अंतर्राष्ट्रीय घोषणाओं तथा सम्मलेनों में इनके लिए कुछ घोषणाएं की गई, जिससे इन्हें भी समाज में समानता और स्वतंत्रता से जीने का अधिकार प्राप्त हुआ। बीसवीं सदी में मानवीय संवेदनाओं ने मानवाधिकार को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार किया और संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इसे

व्यावहारिक रूप दिया गया। इस इकाई में आप मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा (1948), सबके लिए शिक्षा (1990) तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

1. मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा को समझ सकेंगे।
2. सबके लिए शिक्षा (1990) को समझ सकेंगे।
3. भेदभाव के विरूद्द सम्मलेन (1960) को समझ सकेंगे।
4. बालक के अधिकारों के सम्मलेन (1989) को समझ सकेंगे।
5. UNCRPD (2006)को समझ सकेंगे।

3.3 अंतर्राष्ट्रीय घोषणा

द्वितीय विश्व युद्द के पश्चात अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस बात को न सिर्फ स्वीकार गया, " कि सुख व शांति बनाए रखने के लिए हर व्यक्ति को इतने अधिकार मिलें ताकि वह समाज में सम्मानपूर्वक जी सके" वरन संयुक्त राष्ट्र संघ के जरिये इसे व्यावहारिक रूप भी दिया गया प्रारंभ में घोषित मानवाधिकारों में दिव्यांगों के बारे में अलग से प्रावधान तो नहीं किये गए पर उन्हें किसी अधिकार से वंचित भी नहीं किया गया। धीरे- धीरे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं, बच्चों,अल्पसंख्यकों, शरणार्थियों आदि के लिए विशेष प्रयास किए गए। दिव्यांगों के मानवाधिकार सुनिश्चित करने के लिए व्यापक अंतर्राष्ट्रीय घोषणाएं की गई।

3.3.1 मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (1948)(World declearation of human rights)

प्राचीन और मध्ययुगीन काल में, शासक शासन करने के लिए एक दिव्य अधिकार का दवा करते थे और सभी अधिकार उन्हीं के पास थे। प्रजा जो भी करती थी, वह दान था, अधिकार नहीं। धार्मिक परम्पराओं ने दया और दान को बढ़ावा देने की मांग की थी लिकिन स्वतंत्रता या समानता के अधिकार की अवधरण नहीं थी। अंग्रेजों ने 1215 के मेग्नकर्ता में, कुछ महत्वपूर्ण मानव अधिकारों
के मूल का पता लगाया, जिन्हें अंग्रेजी सामंतों ने किंग जोन से हासिल किया था। द्वितीय विश्व युद्द के पश्चात युद्द की बीमारी से दुनिया को बचाने के लिए संयुक्त राष्ट्र का गठन किया गया। 1946 में संयुक्त राष्ट्र ने मानव अधिकारों पर एक आयोग की स्थापना की जिसने दो साल की वार्ता के बाद मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा को तैयार किया। यह सभी मनुष्यों की समानता की पहली अंतर्राष्ट्रीय पावती थी। 10 दिसम्बर जिस दिन संयुक्त राष्ट्र महासभा ने UDHR को अपनाया, मानव

अधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है। अतः सार्वभौमिक अवधारणा के रूप में मानव अधिकारों के जन्म का श्रेय संयुक्त राष्ट्र को दिया जाना चाहिए।

10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेम्बली में मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को स्वीकृत और घोषित किया। जब यह घोषणा पत्र जारी किया गया तब इस विश्व में वंचित वर्ग के बारे में समझ कम थी। इसी कारण इसमें वंचित वर्ग का जिक्र कम है । फिर भी यदि गहराई से इसका अध्ययन किया जाए तो वंचित वर्गों को इससे काफी सहारा मिलता है ।

इसकी प्रस्तावना में "मौलिक अधिकारों, मानव की महत्ता तथा मनुष्य एवं स्त्री क सामान अधिकारों की समानता में निष्ठा व्यक्त की गई है"।

अनु० 1 सभी प्राणियों को जन्मजात स्वतंत्रता व समानता प्राप्त है ।

अनु० 2 प्रत्येक व्यक्ति समस्त अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं को बिना किसी भेदभाव के प्राप्त करने का अधिकारी है ।

अनु० 3 जीवन तथा स्वतंत्रता का अधिकार (Right to life and liberty)

अनु० 4 दासता (Slavery) तथा दास व्यापार(Slavery trade) का निषेध ।

अनु० 5 अमानवीय व्यवहार (unhuman treatment) तथा यातना का निषेध

अनु० 6,7,8,9,10,11 कानून के समक्ष समानता तथा विधिक उपचारों के अधिकार ।

अनु० 12 किसी भी व्यक्ति की एकान्तता , परिवार, घर या पत्र व्यवहार के प्रति कोई मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा ।

अनु० 13 देश छोड़ने तथा फिर वापस आने का अधिकार ।

अनु० 14 सताए जाने पर दूसरे देशों में शरण लेने का अधिकार ।

अनु० 15 व 16 राष्ट्रीयता का अधिकार ।

अनु० 17 संपत्ति रखने का अधिकार ।

अनु० 18 विचार, अंतरात्मा तथा धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार ।

अनु० 19 विचार व उसकी अभिव्यक्ति प्रकट करने का अधिकार ।

अनु० 20 व 21 शांतिपूर्ण ढंग से सभा व संघ बनाने का अधिकार ।

अनु० 22 सामाजिक सुरक्षा का अधिकार ।

अनु० 23, 24 व 25 कार्य करने का अधिकार, रोजगार प्राप्त करने के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक अवसर चयन करने का अधिकार ।

अनु० 26 शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार ।

अनु० 27 विभिन्न कलाओं में आनंद लेने का अधिकार ।

अनु० 28 इस घोषणा पत्र में उल्लिखित अधिकारों व स्वतन्त्रताओं को पूर्णतः प्राप्त करने का अधिकार ।

अनु० 29 इसमें उन दायित्वों का विवेचन किया गया है जिनका व्यक्ति को अपने समुदाय के प्रति निर्वाह करना है ।

अनु० 30 इसमें कहा गया है कि कोई भी राष्ट्र इन अधिकारों की विवेचना अपने दृष्टिकोण से नहीं करेगा वरन इसमें निहित अधिकारों को प्रदान करने के लिए करेगा ।

3.3.2 सबके लिए शिक्षा पर घोषणा पत्र-1990(World declearation for education for all)

बुनियादी शिक्षा प्रत्येक बच्चे का अधिकार है। भारतीय संविधान के अनु० 45 में निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्राविधान है। मानव अधिकारों के घोषणा पत्र में स्पष्ट कहा गया है कि " प्रत्येक को शिक्षा का अधिकार है"। लेकिन 1980 के दशक में प्राथमिक शिक्षा का बहुत बुरा हाल था। जब वास्तविकता पता की गई तो पता चला कि 100 मिलियन, जिसमें 60 मिलियन सिर्फ लड़कियाँ थी, प्राथमिक शिक्षा से वंचित थी। 960 मिलियन प्रौढ़, जिसकी 2/3% महिलाएं निरक्षर थी और यही निरक्षरता उनके विकास में रूकावट डाल रही थी। विश्व के 2/3%प्रौढ़ों को नए कौशल व तकनीकी का प्रयोग करना नहीं आता था। 100 मिलियन से भी ज्यादा बच्चे अपनी प्राथमिक शिक्षा को पूरा नहीं कर पा रहे थे। जब शिक्षा में इतनी अस्थिरता हुई तो निश्चित रूप से विश्व को कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। जैसे- आर्थिक विषमता, जनसंख्या वृद्दि, हिंसा, बच्चों की अनिश्चित मृत्यु, पर्यावरण प्रदूषण आदि। इन सभी समस्याओं के समाधान का उपकरण शिक्षा को ही माना गया। सन् 1990 ई. में जोमेटिन (थाईलैण्ड) में ''सभी के लिए शिक्षा पर विश्व सम्मेलन'' का आयोजन हुआ जिसमें 155 राष्ट्र के प्रतिनिधि एवं 150 गैर-सरकारी संस्थाओं ने भाग लिया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य था शिक्षा को सर्वव्यापी बनाना तथा निरक्षरता हटाने के लिए उपायों पर विचार करना।

इस घोषणा पत्र में बुनियादी शिक्षा के छः मुख्य उद्देश्यों की पहचान की गयी, जो हैं

i. प्रारम्भिक बाल्यावास्था देख-रेख और विकासात्मक कार्यकलाप का विस्तार

ii. प्राथमिक शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच और संपादन।
iii. अध्ययन उपलिब्ध में सुधार करना ताकि अध्ययन उपलिब्ध एक आवश्यक स्तर तक पहुँच सके।
iv. वयस्क निरक्षता की दर को कम करना।
v. बुनियादी शिक्षा के प्रावधानों तथा नवयुवक एवं व्यवस्क द्वारा अपेक्षित दूसरे आवश्यक कौशलों का विस्तार करना।
vi. व्यक्तिगत एवं परिवार के अच्छे जीवन जीने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशलों एवं मूल्यों के उपलब्धियों को बढ़ाना।

इस घोषणा पत्र में कुल दस अनुच्छेद हैं

अनु०1 में प्रत्येक बच्चे, युवा,और प्रौढ़ को शैक्षिक अवसर देने की बात कही गई है। बुनियादी शिक्षा जीवन पर्यंत अधिगम और मानव विकास का आधार है।

अनु० 2 में सबके लिए शिक्षा के मुख्य लक्ष्यों का वर्णन है। ये लक्ष्य हैं :

1. सार्वभौमिक पहुँच तथा समानता को बढ़ावा
2. सीखने, अधिग्रहण पर ध्यान केंद्रित करना
3. बुनियादी शिक्षा के साधन क्षेत्र का विस्तार
4. अधिगम के लिए पर्यावरण को बढ़ाना
5. साझेदारी को मजबूत बनाना

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 1

1. मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा वर्ष …….. में की गई।
2. मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में 30 अनुच्छेद हैं। (सत्य/असत्य)
3. सभी के लिए शिक्षा पर विश्व सम्मेलन वर्ष .... में हुआ।
4. सभी के लिए शिक्षा का मुख्य उद्देश्य दिव्यांगों की शिक्षा के लिए था।(सत्य/असत्य)
5. सभी के लिए शिक्षा का मुख्य लक्ष्य क्या था ?

3.4 अंतर्राष्ट्रीय सम्मलेन

3.3.1 भेदभाव के विरुद्द सम्मलेन (1960) (convention against discrimination)

UNESCO के तत्वाधान में भेदभाव के विरुद्द अधिकारों का सम्मेलन 14 नवम्बर से 15 दिसम्बर 1960 में पेरिस में हुआ। जिसमें यह तय किया गया कि शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है। शिक्षा में किसी प्रकार का भेदभाव शामिल नहीं किया जाएगा। इस घोषणा पत्र में कुल 19 अनुच्छेद हैं।

3.3.2 बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन(1989)

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 20 नवम्बर, 1989 को बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन घोषित किया। इस अधिवेशन की कुछ प्रमुख बातें निम्नलिखित हैं:

i. इस अधिवेशन में शामिल अधिकारों को राज्य प्रत्येक बच्चे को बिना किसी भेदभाव के प्रदान करेगा।
ii. राज्य दिव्यांग बच्चे के अधिकारों को पहचान करते हुए उनके लिए विशेष देखभाल का इन्तेजाम करेगा।
iii. राज्य यह निश्चित करेगा कि मानसिक या शारीरिक दिव्यांग बच्चा संतोषजनक जीवन समाज में सक्रिय भागीदारी करते हुए जी सकेगा।

इस अधिवेशन के अनुच्छेद 43 और 44 में कहा गया कि इस अधिवेशन में कहे गये दायित्व/कर्तव्य की राज्य द्वारा किए गए प्रगति का मूल्यांकन किया जाएगा तथा यह मूल्यांकन ‘बच्चे के अधिकार पर कमेटी’ द्वारा किया जाएगा।

3.3.3 दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ अधिवेशन(2006)

दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अधिवेशन जिसको संक्षेप में ‘यू.एन.सी.आर.पी.डी.’ भी कहते हैं, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षित रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा ने इस संधिपत्र को 13 दिसम्बर, 2006 को स्वीकार किया तथा 30 मार्च, 2007 को हस्ताक्षर करने के लिए रखा। इस दिन भारत सहित 82 देशों ने इस पर हस्ताक्षर किया, (मार्च, 2013 तक 155 देशों ने हस्ताक्षर किया है) यह संधिपत्र 3 मई 2008 को अंतरराष्ट्रीय कानून बना।

यूएनसीआरपीडी में कुल 50 अनुच्छेद (आर्टिकल) हैं। कुछ महत्वपूर्ण अनुच्छेद निम्नलिखित हैं:

- **अनु. 6**: दिव्यांग महिलाओं के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि सरकार दिव्यांग महिलाओं के विकास एवं अधिकारिता के लिए उपयुक्त कदम उठाये।

- **अनु. 7**: दिव्यांग बच्चों के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि इन बच्चों के अधिकारों, स्वतंत्रता तथा अच्छे जीवन के लिए कार्य करें।
- **अनु. 9** :सुगम्यता के बारे में हैं, जिसमें कहा गया है कि विकलांगों को सषक्त करने हेतु अत्याधुनिक तकनीक से बने विशेष उपकरण उपलब्ध कराया जाय।
- **अनु. 10**:जीने का अधिकार के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि दिव्यांग व्यक्तियों को भी सामान्य व्यक्तियों के सामान सम्मान पूर्ण जीवन जीने का अधिकार है।
- **अनु. 24**:शिक्षा के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि दिव्यांग बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था सरकार करे जिससे वे अपने व्यक्तित्व, प्रतिभाओं व रचनात्मकता का विकास कर सकें।
- **अनु. 27**:कार्य और रोजगार के बारे में है, जिसमें कहा गया है कि प्रत्येक दिव्यांग व्यक्ति को हर तरह के काम, जो उसके योग्य हैं, करने का अधिकार है जिसके लिए उपयुक्त सुविधाओं व वातावरण का उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है।

मुख्यतः यह अधिवेशन दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार निर्दिष्ट करता है और उनके संवर्द्धन संरक्षण व सुनिश्चितता के लिए राज्य के कर्त्तव्य निर्धारित करता है, जिसके साथ साथ उनके क्रियान्वयन व अनुश्रवण सहयोग हेतु उचित व्यवस्था विकसित करने का निर्देश देता है। इस अधिवेशन की एक विशेष बात यह भी है कि इसमें दिव्यांगों को एक श्रेणी मात्र न मानकर दिव्यांगता विशेष और उसमें भी व्यक्ति विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त सुविधाएं देने की बात कही गयी है। इसके अतिरिक्त इसमें दिव्यांग व्यक्तियों की व्यक्तिगत जरूरतों की तरफ भी ध्यान दिया गया है। इस संधिपत्र में यह व्यवस्था है कि समय-समय पर हर उस देश को जिसने इस संधिपत्र पर हस्ताक्षर किया है, यह बताना होगा कि उसने इस संधिपत्र के कार्यान्वयन हेतु क्या कदम उठाए हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 2

1. भेदभाव के विरुद्द सम्मलेन कहाँ और कब हुआ?
2. संयुक्त राष्ट्र संघ ने ....को बच्चों के अधिकारों पर अधिवेशन घोषित किया।
3. यू.एन.सी.आर.पी.डी.'(UNCRPD) का पूरा नाम लिखिए।

3.5 सारांश

मानव अधिकारों के अभाव में जीवन निरर्थक है। इनके आभाव में व्यक्ति भली-भांति जीवन व्यतीत नहीं कर पता है। आज अधिकांश देशों में मानव अधिकारों की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप नागरिकों का अधिकाधिक विकास करने की कोशिश की जा रही है। दिव्यांग तथा वंचित वर्ग के लोग भी समाज का हिस्सा हैं, उन्हें भी जीने का अधिकार प्राप्त है।

उनके भी कुछ अधिकार हैं, जिसके कारण वे समाज में जीवन यापन करते हैं। उनके इन्ही अधिकारों को अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त है। अंतर्राष्ट्रीय घोषणाओं तथा सम्मलेनों में इनके लिए कुछ घोषणाएं की गई, जिससे इन्हें भी समाज में समानता और स्वतंत्रता से जीने का अधिकार प्राप्त हुआ। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कानून के आधार पर ही विभिन्न स्वतंत्र राज्यों के आपसी संबंधों को निर्धारित किया जा सकता है। यह देखा जाता है कि जब तक सभी देशों में आपसी मैत्री भाव नहीं होंगे, तब तक किसी भी देश की परिधि में रहने वाले व्यक्तियों को तनाव रहित नहीं माना जा सकता। जब तक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शांति व्यवस्था को कायम नहीं रखा जाएगा, तब तक राष्ट्र के भीतर भलीभांति शांति की स्थापना नहीं की जा सकती। यही कारण है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कानूनों का निर्माण किया जाता है, जिससे सभी देशों के मध्य अधिकारिक मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किए जा सके ।

3.6 शब्दावली

मानवाधिकार घोषणा पत्र : 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेम्बली में मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को स्वीकृत और घोषित किया। इसमें 30 अनुच्छेद हैं।

यूएनसीआरपीडी : दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अधिवेशन जिसको संक्षेप में 'यू.एन.सी.आर.पी.डी.' भी कहते हैं, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षित रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

समावेशी समाज : एक ऐसा समाज जहाँ सभी लोग बिना किसी भेदभाव के समान रूप से मिलजुलकर रहें। समावेशी समाज कहलाता है ।

3.7 स्वमूल्यंकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 1 :

1. 1948
2. सत्य
3. 1990
4. असत्य
5. सभी के लिए शिक्षा का मुख्य उद्देश्य शिक्षा को सर्वव्यापी बनाना तथा निरक्षरता हटाने के लिए उपायों पर विचार करना।

भाग 2 :

1. पेरिस 1960
2. 20 नवम्बर 1989
3. दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ अधिवेशन

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- www. Google.com- Inclusive Education
- Sharma, khaushal,Mahapatra,B.C,(2007),Emerging Trends in Inclusive Education
- अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,लर्निंग कर्व समावेशी शिक्षा, नवम्बर 2015

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. मानव अधिकारों के लिए किए गए अंतर्राष्ट्रीय घोषणाओं का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. विश्व स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मलेनों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए ।

इकाई 4- अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय नीतियां एवं कानून

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 सालामांका रूपरेखा
4.4 बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन
4.5 भारतीय पुनर्वास परिषद
4.6 दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम
4.7 राष्ट्रीय न्यास अधिनियम
4.8 शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009
4.9 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (रमसा)
4.10 सर्व शिक्षा अभियान
4.11 IEDC
4.12 IEDSS
4.13 सारांश
4.14 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

समावेशी शिक्षा की परिकल्पना इस संकल्पना पर आधारित है कि सभी बच्चों के विद्यालयी शिक्षा में समावेशन व उसकी प्रक्रियाओं की व्यापक समझ की इस कदर आवश्यकता है कि उन्हें क्षेत्रीय, सांस्कृतिक, सामजिक परिवेश और विस्तृत सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं दोनों में

ही संदर्भित करके समझा जाए। क्योंकि भारतीय संविधान में समता, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय एवं व्यक्ति की गरिमा को प्राप्य मूल्यों के रूप में निरूपित किया गया है, जिसका इशारा समावेशी शिक्षा की तरफ ही है। हमारा संविधान जाति, वर्ग, धर्म, आय एवं लैंगिक आधार पर किसी भी प्रकार के विभेद का निषेध करता है, और इस प्रकार एक समावेशी समाज की स्थापना का आदर्श प्रस्तुत करता हैं, जिसके परिप्रेक्ष्य में बच्चे को सामाजिक, जातिगत, आर्थिक, वर्गीय, लैंगिक, शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से भिन्न देखे जाने के बजाय एक स्वत्रंत अधिगमकर्त्ता के रूप में देखे जाने की आवश्यकता है, जिससे लोकत्रांतिक स्कूल में बच्चे के समुचित समावेशन हेतु समावेशी शिक्षा के वातावरण का सृजन किया जा सके। वर्तमान समय के साथ दिव्यांग व्यक्तियों की शिक्षा का प्रारूप भी बदला, अब विशेष शिक्षा की जगह समावेशित शिक्षा के द्वारा इनको शिक्षा देने की शुरुआत हो चुकी है। अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विशेष शिक्षा एवं समावेशित शिक्षा के लिए नयी नीतियाँ एवं कानून बनाए गए हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप विभिन्न राष्ट्रीय -अंतरराष्ट्रीय नीतियों एवं कानूनों को जान सकेंगे, जैसेः

1. सालामांका फ्रेमवर्क (रूपरेखा) के विषय में जान पाएंगे।
2. बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन के विषय में जान पाएंगे।
3. भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम के विषय में जान पाएंगे।
4. दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम के विषय में जान पाएंगे।
5. राष्ट्रीय न्यास अधिनियम के विषय में जान पाएंगे।

4.3 सालामांका रूपरेखा

सन् 1994 ई. में स्पेन के सालामांका शहर में ''विशेष आवश्यकता शिक्षण पर विश्व सम्मेलन'' का आयोजन यूनेस्को एवं स्पेन की सरकार ने मिलकर किया था। इस सम्मेलन में 92 देशों के सरकारी प्रतिनिधि एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं ने भाग लिया था।

1. यह कथन (स्टेटमेंट) सभी के लिए शिक्षा की प्रतिबद्धता से शुरू होता है।

   हर बच्चे को शिक्षा का मूल अधिकार है,और सीखने के स्तर की स्वीकार्यता को प्राप्त करने और बनाए रखने का अवसर होना चाहिए।

2. इस सम्मेलन में मुख्य रूप से समावेशित शिक्षा की चर्चा हुई जो निम्नलिखित कथनों से रेखांकित किया गयाः

- स्कूल में सभी बच्चों को समावेशित किया जाए, चाहे उनकी शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक, सामाजिक, वाचिक या अन्य दशाएँ कैसे भी हों।
- समावेशित दिशा-निर्देशन युक्त सामान्य स्कूल भेदभाव पूर्ण दृष्टिकोणों से निपटने के लिए सबसे प्रभावशाली माध्यम है। वे ऐसे समावेशित समाज की रचना कर सकें जो सबको अपना एवं सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य भी पा सकें।

इस कथन में यूनेस्को, यूनीसेफ, यूएनडीपी एवं विश्व बैंक से अनुरोध किया गया है कि वे समावेशित शिक्षा को बढ़ावा देने एवं विशेष आवश्यकता शिक्षण को शैक्षिक प्रोग्राम में सम्मिलित करने के लिए कार्य करें।

3. हम सभी सरकारों से आह्वान करते हैं और उन्हें आग्रह करते हैं-

- उनकी शिक्षा प्रणाली को बेहतर बनाने के लिए उच्चतम नीति और बजटीय प्राथमिकता दें ताकि वे सभी बच्चों को व्यक्तिगत मतभेद या कठिनाइयों की परवाह किए बिना शामिल कर सकें,
- कानून या नीति के विषय के रूप में समावेशी शिक्षा के सिद्धांत, नियमित स्कूलों में सभी बच्चों को दाखिला लेना, जब तक कि अन्यथा करने के लिए मजबूर कारण नहीं हैं,
- प्रदर्शन परियोजनाओं को विकसित करना और उन सभी देशों के साथ आदान-प्रदान को प्रोत्साहित करना जिन्हें समेकित स्कूलों के साथ अनुभव है,
- विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए प्रावधान से संबंधित योजनाओं और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में विकलांगों के माता-पिता, समुदायों और संगठनों की भागीदारी को प्रोत्साहित करना और सुविधा प्रदान करना,

विशेष आवश्यकताओं की शिक्षा पर कार्यवाही के लिए यह फ्रेमवर्क (रूपरेखा) यूनेस्को के साथ स्पेन की सरकार सहयोग के द्वारा विशेष आवश्यकताओं की शिक्षा पर विश्व सम्मेलन द्वारा अपनाया गया था और 7 से 10 जून 1994 तक सलामांका में आयोजित किया गया था। इसका उद्देश्य सरकारों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, राष्ट्रीय सहायता एजेंसियों, गैर सरकारी संगठनों और अन्य निकायों द्वारा विशेष आवश्यकताओं की शिक्षा में सिद्धांतों, नीति और अभ्यास पर सलमान्का फ्रेमवर्क (रूपरेखा) की नीति और निर्देशन क्रिया को लागू करना है । यह निर्देशनात्मक सिद्धांत इस फ्रेमवर्क में सूचित करता है कि स्कूलों को बच्चों के अपने शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, भावनात्मक, भाषाई या अन्य स्थितियों के बावजूद सभी बच्चों को समायोजित करना चाहिए। इस फ्रेमवर्क में कार्यवाही के लिए निम्न अनुभाग शामिल हैं:-

I. विशेष आवश्यकताओं की शिक्षा/विशिष्ट शिक्षा में नई सोच।
(New thinking in special needs education)

II. राष्ट्रीय स्तर पर कार्यवाही हेतु दिशानिर्देश

(Guidelines for action at the national level)

- Policy and organization (नीति और संगठन)
- School factors (विद्यालयी कारक)
- Recruitment and training of educational personnel (शैक्षिक कर्मियों की भर्ती और प्रशिक्षण)
- External support services(वाह्य सहायता सेवाएं)
- Priority areas (प्राथमिकता वाले क्षेत्र)
- Community perspectives (समुदाय दृष्टिकोण)
- Resource requirements(संसाधनो की आवश्यकता)

III. क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यवाही के लिए दिशानिर्देश

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 1

1. सालामांका रूपरेखा के आयोजन में .... देशों के सरकारी प्रतिनिधि एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं ने भाग लिया था। इस फ्रेमवर्क में कार्यवाही के लिए ....अनुभाग शामिल हैं।
2. सालामांका रूपरेखा वर्ष ....में........... शहर में आयोजित किया गया।

4.4 बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन

22 मई, 2002 को एशिया पेसफिक क्षेत्र ने बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन को स्वीकार किया। इसका मुख्य उद्देश्य था 'अवरोध रहित एवं अधिकार आधारित एक समावेशित समाज का निर्माण करना'। यह एशिया और प्रशांत क्षेत्र के दिव्यांग व्यक्तियों के लिए एवं ''एशियन पैसिफिक डिकेड ऑफ द डिजेबल्ड पर्सन्स'' का ही विस्तार है। (राव, 2010)

इसके सात प्राथमिक कार्यक्षेत्र हैः

i. दिव्यांग व्यक्तियों, उनके परिवार व अभिभावक संघों के स्वयं-सहायता संगठन
ii. दिव्यांग महिलाएं
iii. शीघ्र निदान, शीघ्र हस्तक्षेप एवं शिक्षा
iv. स्व-रोजगार सहित, प्रशिक्षण एवं रोजगार
v. निर्मित वातावरण एवं सार्वजनिक वाहनों की उपलब्धि
vi. सूचना एवं संपर्क तक पहुँच जिसमें सूचना संपर्क एवं सहयोगी प्रौद्योगिकी भी सम्मिलत हो

vii. क्षमता निर्माण, सामाजिक सुरक्षा व अविरत रोजगार कार्यक्रमों के द्वारा गरीबी उन्मूलन संभव हो।

इन प्राथमिकताओं को साकार रूप देने हेतु 21 लक्ष्यों व इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए 17 तरीकों की भी इस घोषणा में पहचान की गयी है। इन सबके अतिरिक्त इसमें संयुक्त राष्ट्र आर्थिक व सामाजिक आयोग द्वारा इस घोषणा में सुझायी गयी प्राथमिकताओं व लक्ष्यों की प्राप्ति में की गयी प्रगति के अवलोकन व आवश्यक तानुसार परिवर्तन करने का भी प्रावधान है।

राष्ट्रीय नीतियाँ और कानून

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दिव्यांग व्यक्तियों के कार्यों का अनुसरण करते हुए भारत सरकार ने भी इनके लिए कुछ नीतियाँ एवं कानून बनाये। राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय पुनर्वास परिषद एक्ट , PwD Act, National Trust act, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, RMSA, इत्यादि एक्ट व कानून बने हैं जिसका वर्णन हम इस खण्ड में करेंगे।

4.5 भारतीय पुनर्वास परिषद

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अधीन भारतीय पुनर्वास परिषद एक सांविधिक निकाय है जोकि देश के मानव संसाधन विकास में एक रूपता लती है, तथा उसे नियंत्रित करती है। भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम जिसे संक्षेप में हम आर.सी.आइ.एक्ट कहते हैं, सन् 1992 में पारित हुआ तथा 22 जून, 1993 से लागू हुआ। सन् 2000 में इस अधिनियम में संशोधन किया गया।भारत सरकार द्वारा इस अधिनियम की आवश्यकता इसलिए महसूस की गयी क्योंकि दिव्यांगता के क्षेत्र में शिक्षा की गुणवत्ता एवं प्रशिक्षण इत्यादि के लिए कोई अधिनियम एवं संस्था नहीं थी। भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम के तीन अध्याय हैं- प्रथम अध्याय में परिभाषा दी गयी है। दूसरे अध्याय में संविधान, कार्यान्वयन तथा सम्बंधित समितियों से सम्बंधित विषयों का वर्णन किया गया है।परिषद् के कार्यों का विस्तृत वर्णन तीसरे अध्याय में किया गया है। भारतीय पुनर्वास परिषद की सामान्य परिषद (General Council) में निम्नलिखित रूप में विभाजित है-

अध्यक्ष - 1

सदस्य सचिव- 1

सदस्य- 27 (सामाजिक न्याय अधिकारिता मंत्रालय के सचिव , संयुक्त सचिव , UGC सचिव , विभिन्न संस्थाओं से प्रतिनिधि के रूप में सदस्य)

भारतीय पुनर्वास परिषद नियमित एवं दूरस्थ माध्यम में विशिष्ट शिखा में स्नातक, परास्नातक डिग्री एवं डिप्लोमा की मान्यता प्रदान करना एवं पाठ्यक्रमों का सञ्चालन करती है। साथ ही विशिष्ट शिक्षा में स्नातक, परास्नातक डिग्री एवं डिप्लोमा की शैक्षिक अहर्ता एवं प्रवेश हेतु योग्यता का निर्धारण एवं उनका नियमन करती है। इस एक्ट के स्वरुप में आने पर दिव्यांग बच्चो के अध्ययन हेतु विशिष्ट अध्यापक तैयार किये जाने लगे। परिषद के द्वारा मानसिक मंदता, दृष्टिबधिता,मूकबधिर दिव्यांग के अतिरिक्त अब सीखने सम्बन्धी विकार से ग्रसित बच्चों के अध्ययन पर भी कार्य किया जा रहा है।

भारतीय पुनर्वास परिषद के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं

i. दिव्यांग व्यक्तियों के पुनर्वास संबंधी प्रशिक्षण नीतियों व कार्यक्रमों को नियमित करना।
ii. दिव्यांग व्यक्तियों के साथ काम करने वाले विभिन्न श्रेणी के व्यावसायिकों की शिक्षा व प्रशिक्षण हेतु एक न्यूनतम मानक प्रस्तावित करना।
iii. पूरे देश में एकरूपता लाने हेतु सभी प्रशिक्षण संस्थानों में इन मानकों का नियमितीकरण करना।
iv. उन सभी संस्थाओं/विश्वविद्यालयों को मान्यता प्रदान करना जो दिव्यांग व्यक्तियों के पुनर्वास विषय पर डिग्री/डिप्लोमा/सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम चलाता है।
v. मान्यता प्राप्त पुनर्वास योग्यता रखने वाले व्यक्तियों की सूची केन्द्रीय पुनर्वास पंजीकरण में रखना।
vi. पुनर्वास एवं विशेष शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान को प्रोत्साहित करना।
vii. संसद के समक्ष नियमों एवं विनियमों को प्रस्तुत करने का अधिकार।

भारतीय पुनर्वास परिषद से मान्यता प्राप्त विभिन्न विश्व विद्यालय, प्रषिक्षण संस्थान व गैर सरकारी संगठन प्रषिक्षण कार्यक्रम चलाते हैं। ये प्रषिक्षण बुनियादी पाठ्यक्रम और प्रमाणपत्र से डिप्लोमा, डिग्री, स्नातकोत्तर डिप्लोमा तक सभी प्रकार के होते हैं। पाठ्यक्रम पूर्ण करने वाले विद्यार्थी भारतीय पुनर्वास परिषद पंजी में पंजीकरण पाठ्यक्रम की अर्हता पा लेते हैं सफल विद्यार्थी अपने प्रषिक्षण के अनुरूप अधिकारी या व्यावसायिक की श्रेणी में पंजीकृत होते हैं। भारत में दिव्यांगता पुनर्वास के क्षेत्र में काम करने वाले किसी पुनर्वास विशेषज्ञ के लिए भारतीय पुनर्वास परिषद् में पंजीकृत होना अनिवार्य है तथा प्रत्येक 5 वर्ष बाद पंजीकरण का नवीनीकरण कराना पड़ता है जिसके लिए उन्हें समय-समय पर परिषद द्वारा मान्यता प्राप्त सेमिनार, वर्कशाप इत्यादि में भाग लेना होता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 2

1. भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम …………… में लागू हुआ।
2. भारत में दिव्यांगता पुनर्वास के क्षेत्र में काम करने वाले किसी पुनर्वास विशेषज्ञ के लिए ……….में पंजीकृत होना अनिवार्य है

4.6 दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम

दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम सन् 1995 में पारित हुआ तथा इसका पूरा नाम है - ''दिव्यांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा एवं पूर्ण सहभागिता) अधिनियम 1995

यह अधिनियम 7 फरवरी 1996 ई. से लागू हुआ। इस अधिनियम के अंतर्गत सात दिव्यांगताएं आती हैं, जो हैं:

i. अंधत्व (Blindness)
ii. अल्पदृष्टि (Low Vision)
iii. श्रवण बाधा (Hearing Impairment)
iv. मानसिक दिव्यांगता (Mental Retardation)
v. मानसिक रोग (Mental Illness)
vi. गामक बाधा (Locomotors Impairment)
vii. कोढ़ उपचरित (Leprosy Cured)

भारत में इस समय दिव्यांग व्यक्तियों को जो सुविधाएं दी जाती हैं, उसके लिए जरूरी है कि वह दिव्यांग व्यक्ति उपर्युक्त सात दिव्यांगता में से किसी एक श्रेणी में हो तथा उसके दिव्यांगता का प्रतिशत कम से कम 40 हो। इस अधिनियम के अंतर्गत निम्नलिखित प्रावधान हैं-

दिव्यांगता की रोकथाम व शीघ्र पहचान

शिक्षा

रोजगार

अभेदभाव

अनुसंधान व मानवशक्ति विकास

सकारात्मक कार्यवाही

सामाजिक सुरक्षा

शिकायत निवारण

पी.डब्लू.डी. एक्ट, 1995 का सरकार द्वारा संशोधन का कार्य चल रहा है तथा इसका ड्राफ्ट बिल तैयार हो चुका है। जिसमें उपर्युक्त सात दिव्यांगता के अलावा ग्यारह और दिव्यांगता को भी इसमें सम्मिलित किया गया है। इस बिल का नाम है ''दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार बिल, 2012''।

पी.डब्लूडी. एक्ट 1995 में कुल 14 अध्याय हैं जिसमें से अध्याय-4: दिव्यांगता का शीघ्र निदान व रोकथाम के बारे में बताता है, अध्याय-5: दिव्यांग बच्चों के शिक्षा के बारे में है, जिसमें कहा गया है

कि प्रत्येक दिव्यांग बच्चे को उचित व समावेशित वातावरण में 18 वर्ष की आयु तक निःशुल्क शिक्षा मिले। अध्याय-6: दिव्यांग व्यक्तियों के रोजगार के बारे में है, जिसमें इन व्यक्तियों के लिए सरकारी प्रतिष्ठानों में 3 प्रतिशत नौकरियों के आरक्षण की बात कही गयी है तथा ये 3 प्रतिशत दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित एवं गामक बाधित व्यक्तियों के लिए है (प्रत्येक के लिए 1 प्रतिशत)।

इस अधिनियम के अध्याय-8 में दिव्यांग व्यक्तियों के लिए बाधारहित वातावरण का भी प्रावधान है जिसमें कहा गया है कि दिव्यांग व्यक्ति अस्पताल, रेलवे स्टेशन, प्रशिक्षण केन्द्र, मनोरंजन स्थल, निर्वाचन बूथ, कार्यक्षेत्र और सभी सार्वजनिक स्थलों की समस्त सुविधाओं का प्रभावशाली ढंग से उपयोग कर सके, इसके लिए सरकार इस बात की स्पष्ट घोषणा करती है कि इन सब सार्वजनिक स्थलों का बाधारहित होना अनिवार्य, इसके लिए इन सार्वजनिक इमारतों में रैंप, पहियेवाली कुर्सीवालों के लिए शौचालयों में अनुकूल सुविधा; लिफ्ट आदि में ब्रेक चिन्ह व श्रव्य संकेत; अस्पतलों में रैंप व ऐसे ही अनुकूली साधन होने चाहिए। वर्तमान में 21 वर्ष पुराने पी.डब्लू.डी. एक्ट, 1995 को संशोधित कर संसद से 14 दिसम्बर, 2016 को पारित कर दिया गया है। जिसमे पूर्व में निर्धारित सात दिव्यांगताओं में निम्नलिखित रूप से अन्य दिव्यांगताओं को जोड़ते हुए उनकी संख्या सात से बढ़ा कर इक्कीस कर दी गयी है।

4.7 राष्ट्रीय न्यास अधिनियम

कुछ दिव्यांगता ऐसी हैं, जिन्हें प्रशिक्षण और पुनर्वास के बाद भी जीवनपर्यंत देखभाल की जरुरत होती है। अभिभावकों के मष्तिष्क में हमेसा एक प्रश्न रहता है कि- " हमारे बाद हमारे बच्चे का क्या होगा?" राष्ट्रीय न्यास अधिनियम इस प्रश्न का उत्तर है। राष्ट्रीय न्यास अधिनियम सन् 1999 में पारित हुआ तथा इसका पूरा नाम है- ''राष्ट्रीय न्यास अधिनियम (स्वलीनता, प्रमस्तिष्क पक्षाघात, मानसिक दिव्यांगता और बहु-दिव्यांगता प्रभावित व्यक्तियों के कल्याण हेतु) 1999''। इसको संक्षेप में एन.टी. एक्ट, 1999 भी कहते हैं।

जैसा कि नाम से ही पता चलता है कि यह अधिनियम चार दिव्यांगताओं के लिए है जो है:

i. स्वलीनता (Autism)
ii. प्रमस्तिष्क पक्षाघात (सेरेबरल पॉलसी)
iii. मानसिक दिव्यांगता (Mental Retardation)
iv. बहु दिव्यांगता (Multiple Disabilities)

स्वलीनता, प्रमस्तिष्क पक्षाघात, मानसिक दिव्यांगता और बहु-दिव्यांगता से ग्रसित व्यक्तियों के कल्याण तथा सम्बंधित मामलों पर राष्ट्रीय स्तर का निकाय गठित करने का प्रावधान इस अधिनियम में है।

इस अधिनियम के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- दिव्यांग व्यक्ति जिस समुदाय के हैं, उसमें यथा संभव पास रह सकें, स्वतत्रता व पूर्णता के साथ जी सकें। इतना उन्हें समर्थ व सशक्त किया जाए।
- दिव्यांग व्यक्तियों को सहारा देने योग्य सुविधाओं का प्रबलीकरण हो।
- दिव्यांग व्यक्तियों के अभिभावक या संरक्षक की मृत्यु हो जाने पर उनकी देखभाल व संरक्षण की व्यवस्था करना।
- दिव्यांग व्यक्तियों को समान अवसर, उनके अधिकारों की सुरक्षा एवं उनकी पूर्ण भागीदारी को साकार करने की सुविधाएँ प्रदान करना।

राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999 के कुछ प्रमुख कार्यक्रम निम्नलिखित हैं:

- संगठनों का पंजीकरण (अभिभावकों एवं गैर सरकारी संगठनों का)।
- स्थानीय स्तर की समितियों का गठन।
- अभिभावकों की नियुक्ति।
- आवासीय सुविधाओं सहित अन्य अनेक प्रकार की सेवाओं को समर्थन देना।
- होम विजिट/अभिरक्षक के कार्यक्रम
- जागरूकता एवं प्रशिक्षण सामग्री का विकास
- लोगों तक पहुँचने एवं राहत के लिए सामुदायिक कार्यक्रम।

राष्ट्रीय न्यास के अंतर्गत संचालित योजनाएं - राष्ट्रीय न्यास के अंतर्गत निम्नलिखित योजनाएं संचालित की जा रही हैं-

दिशा (शीघ्र हस्तक्षेपन एवं विद्यालय)

विकास (डे केयर केन्द्र हेतु)

समर्थ (राहत देखभाल)

घरोंदा (वयस्कों हेतु सामूहिक घर)

निरामया (स्वास्थ्य बीमा योजना)

सहयोगी (देखभालकर्ता हेतु प्रशिक्षण योजना)

ज्ञानप्रभा (शैक्षिणिक सहयोग)

प्रेरणा (मार्केटिंग सहायक)

संभव (सहायक सामग्री)

बढ़ते कदम (सामुदायिक अंतर्क्रिया एवं जागरूकता)

4.8 शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 का पूरा नाम है- ''बच्चों के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009''।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 4 अगस्त, 2009 को पारित हुआ तथा 1 अप्रैल, 2010 से लागू हुआ। इस अधिनियम में 6-14 वर्ष तक के बच्चे को नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा देने की बात कही गयी जो कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21A में लिखित है। इस अधिनियम को लागू करने के बाद भारत विश्व के उन 135 देशों में शामिल हो गया है जहाँ शिक्षा मूल अधिकार के रूप में है।

इस अधिनियम में कुल सात अध्याय हैं, जिसमें से अध्याय-2 : नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकार पर है, अध्याय-3: उपयुक्त सरकार, स्थानीय प्राधिकरण, तथा माता-पिता के कर्तव्यों पर है, अध्याय-4:विद्यालयों एवं षिक्षकों के उत्तरदायित्वों पर है, अध्याय-5: प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं संपादन पर है, तथा अध्याय-6: बच्चों के अधिकारों का संरक्षण पर है।

अगर हम दिव्यांग बच्चों के संदर्भ में बात करें तो इस अधिनियम में इनको स्पष्टतया एक अलग वर्ग के रूप् में सम्मिलित नहीं किया गया है, लेकिन अध्याय-1: प्रस्तावना के खण्ड 2 (d) में ''अलाभकारी समूह के बच्चे'' (चाइल्ड बिलाँगइंग टु डिसट्वैन्टिज ग्रुप) के बारे में चर्चा है। इसी खण्ड में कहा गया है कि उपयुक्त सरकार अधिसूचना के द्वारा स्पष्टीकरण करके किसी समूह को जो किसी दूसरे कारण से अलाभकारी है, को इस खण्ड में सम्मिलित कर सकता है। अर्थात उपयुक्त सरकार चाहे तो अधिसूचना के माध्यम से दिव्यांग बच्चों को अधिनियम के खण्ड 2 (d) में सम्मिलित कर सकता है।

4.9 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान

माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर गुणवत्ता में सुधार और सुधार के सार्वभौमिकरण के लिए, भारत सरकार ने 2007 में, एक केंद्रीय प्रायोजित योजना, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (रमसा) शुरू की है। चूंकि शिक्षा भारतीय संघीय प्रणाली में संविधान द्वारा एक राज्य का विषय है और राज्य सरकारें इस विषय पर नीति और निर्णय निर्माताओं हैं, रमसा देश के प्रत्येक राज्य और संघ राज्य क्षेत्र में माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को उठाने के लिए राज्य सरकारों को तैयार करने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है।

राष्ट्रीय स्तर और राज्य स्तर पर राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान का दृष्टिकोण , लक्ष्य और उद्देश्य

राष्ट्रीय स्तर पर, माध्यमिक शिक्षा दृष्टि के लिए 14-18 वर्ष के आयु वर्ग के सभी युवाओं के लिए अच्छी गुणवत्ता की शिक्षा उपलब्ध, पहुंच और सस्ती करना है। इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, निम्नलिखित लक्ष्य प्राप्त करना है:-

-किसी भी आवास की उचित दूरी के भीतर एक माध्यमिक विद्यालय होना चाहिए , जो कि माध्यमिक विद्यालयों (हाई स्कूल) हेतु 5 किलोमीटर होनी चाहिए और उच्च माध्यमिक विद्यालयों (इंटरमीडिएट) के लिए 7-10 किलोमीटर।

-2017 तक माध्यमिक शिक्षा की सार्वभौमिक पहुंच सुनिश्चित करें (GER 100%), और 2020 तक सार्वभौमिक प्रतिधारणसुनिश्चित करें; तथा

-समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों, शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग, लड़कियों और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले दिव्यांग बच्चों और अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और शैक्षिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों (ईबीएम) जैसे अन्य हाशिए श्रेणियों के विशेष संदर्भ के साथ माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच प्रदान करना।

राष्ट्रीय स्तर पर प्रबंधन संरचना:

स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय राष्ट्रीय स्तर पर कार्यान्वयन एजेंसी होगा।
माननीय "मानव संसाधन विकास मंत्री के नेतृत्व में राज्यों के प्रतिनिधियों के साथ, संसाधन संस्थानों के प्रमुख और सदस्यों के रूप में विशेषज्ञ होंगे। सचिव, स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग मिशन के उपाध्यक्ष होंगे। संयुक्त सचिव (माध्यमिक शिक्षा) सदस्य सचिव होंगे।

राज्य स्तर पर प्रबंधन संरचना:

रमसा के लिए एक स्टेट मिशन अथॉरिटी होगी, जो कि गवर्निंग काउंसिल के रूप में जानी जायेगी , जिसका अध्यक्षता राज्य के माननीय मुख्यमंत्री द्वारा की जाएगी , जिसमें संसाधन संस्थानों के प्रमुख और विशेषज्ञ सदस्यों के रूप में होंगे ।राज्य के स्कूल शिक्षा के प्रभारी मंत्री मिशन के उपाध्यक्ष होंगे।माध्यमिक शिक्षा के प्रभारी सचिव सदस्य सचिव होंगे। इसके अलावा, वित्त और नियोजन विभागों का प्रतिनिधित्व, गवर्निंग काउंसिल को निर्णय लेने की सुविधा प्रदान की है। मिशन की गतिविधियों को पूर्ण पारदर्शिता सुनिश्चित करने में एनजीओ, सामाजिक कार्यकर्ता, विश्वविद्यालय शिक्षक, शिक्षक संघ के प्रतिनिधियों, पंचायतराज प्रतिनिधियों और महिलाओं के

समूह शामिल होंगे। मानव संसाधन विकास मंत्रालय को भी गवर्निंग काउंसिल में प्रतिनिधित्व दिया जाएगा।

4.10 सर्व शिक्षा अभियान

सर्व शिक्षा अभियान 2000-2001 के बाद से विभिन्न प्रकार के हस्तक्षेप के लिए कार्यान्वयन किया गया है ताकि प्राथमिक शिक्षा में लिंग और सामाजिक श्रेणी के अंतराल को तोड़ने और सीखने की गुणवत्ता में सुधार के लिए सार्वभौमिक पहुंच और प्रतिधारण के लिए कई तरह के हस्तक्षेप किए जा सकें। सर्व शिक्षा अभियान में अन्य विद्यालयों और वैकल्पिक स्कूली शिक्षा की सुविधा, स्कूलों के निर्माण और अतिरिक्त कक्षाओं, शौचालय और पेयजल, शिक्षकों के लिए प्रावधान, सेवा प्रशिक्षण में नियमित शिक्षक और शैक्षिक संसाधन समर्थन, मुफ्त पाठ्यपुस्तकों और वर्दी और सीखने की उपलब्धियों स्तर / परिणाम में सुधार शामिल हैं। सर्व शिक्षा अभियान -

-शिक्षा के समग्र दृष्टिकोण, जैसा कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या फ्रेमवर्क 2005 में समझाया गया है, जिसमें संपूर्ण सामग्री और पाठ्यचर्या, शिक्षक शिक्षा, शैक्षिक नियोजन और प्रबंधन के महत्वपूर्ण प्रभावों के साथ शिक्षा की प्रक्रिया में एक प्रणालीगत सुधार के लिए निहितार्थ हैं।

-समानता, न केवल समान अवसर, बल्कि उन परिस्थितियों का सृजन जिसमें समाज के वंचित वर्ग - अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, मुस्लिम अल्पसंख्यक, भूमिहीन कृषि श्रमिक और विशेष आवश्यकता वाले बच्चों आदि के बच्चों को मौका मिल सकता है।

-किसी स्कूल को निर्दिष्ट दूरी के भीतर सभी बच्चों के लिए सुलभ होना चाहिए। प्रवेश सुनिश्चित करने के लिए सीमित नहीं होना चाहिए, शैक्षिक आवश्यकताओं और परंपरागत रूप से बहिष्कृत श्रेणियों की अवस्था - अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और सबसे वंचित समूहों के अन्य वर्गों, मुस्लिम अल्पसंख्यक, सामान्य रूप से लड़कियों, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों इत्यादि सभी के लिए।

-शिक्षक की केन्द्रीयता, उन्हें कक्षा में एक संस्कृति बनाने और कक्षा से आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित करने के लिए, जो बच्चों के लिए विशेष रूप से दलित और सीमांत पृष्ठभूमि से लड़कियों के लिए एक समावेशी वातावरण प्रदान करने की भूमिका के रूप में होती है।

4.11 इन्टिग्रेटेड एजुकेशन फॉर डिसेबल्ड चिल्ड्रेन (IEDC)

भारत में एकीकृत शिक्षा का प्रारम्भ स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सन् 1974 में कल्याण मंत्रालय द्वारा चलाई गयी ''दिव्यांग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा'' (इन्टिग्रेटेड एजुकेशन फॉर डिसेबल्ड चिल्ड्रेन) जिसको संक्षेप में आइ.ई.डी.सी. योजना भी कहते हैं, से हुई। (शर्मा, 2004)।

आई.ई.डी.सी. योजना कल्याण मंत्रालय द्वारा लागू की गयी थी जबकि सामान्य विद्यालय शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत होते हैं अतः इस योजना को सही ढंग से लागू करने में परेशानी होती थी। जब 1981 में (इस वर्ष को संयुकत राष्ट्र संघ ने दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अंतरराष्ट्रीय वर्ष घोषित किया था) इस योजना का मूल्यांकन किया गया तो कुछ कमियों को देखते हुए इसे 1982-83 में शिक्षा मंत्रालय के अंतर्गत कर दिया गया।

सन् 1992 में इस योजना में संशोधन किया गया जिसके तहत उस विद्यालय को जो दिव्यांग बच्चों के एकीकरण में सम्मिलित थे उनको 100 प्रतिशत वित्तीय सहायता देने की बात कही गयी। इस कार्यक्रम को चलाने के लिए गैर-सरकारी संस्थाओं को भी वित्तीय सहायता दी जाने लगी। (शर्मा, 2005)

भारत सरकार के इन सब प्रयासों से ही एकीकृत शिक्षा दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के लिए एक आर्थिक रूप से सशक्त माध्यम के रूप में स्वीकार की गयी। आई.ई.डी.सी. योजना की यह एक महत्वपूर्ण देन है कि दिव्यांग बच्चों को विशेष विद्यालय से निकालकर सामान्य विद्यालय में शिक्षा दी जाने लगी।

4.12 –माध्यमिक स्तर पर विकलांगों के लिए समावेशी शिक्षा (IEDSS)

माध्यमिक स्तर (आईईडीएसएस) में दिव्यंगों के लिए समावेशी शिक्षा की योजना वर्ष 2009-10 से शुरू की गई है।यह योजना दिव्यांग बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा की पिछली योजना (IEDC) की जगह लेती है और कक्षाओं IX-XII में दिव्यांग बच्चों की समावेशी शिक्षा के लिए सहायता प्रदान करती है। यह योजना अब राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (रमसा) के तहत 2013 से समाहित है। राज्य / संघ शासित प्रदेशों में भी आरएमएसए के तहत आरम्भ करने की प्रक्रिया में आरएमएसए निहित योजना है।

उद्देश्य

इस योजना में सरकार, स्थानीय निकाय और सरकारी अनुदानित विद्यालयों में द्वितीयक चरण में कक्षा नौ से बारहवीं में पढ़ाई करने वाले सभी बच्चों को शामिल किया गया है, जिनमें एक या अधिक दिव्यांगता दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम (1995) और नेशनल ट्रस्ट अधिनियम (1 999) के तहत अर्थात् अंधापन, कम दृष्टि, कुष्ठ रोग ठीक करने, सुनवाई हानि, locomotory दिव्यांग, मानसिक

मंदता, मानसिक बीमारी, आत्मकेंद्रित, और सेरेब्रल पाल्सी और अंततः भाषण हानि, सीखने की अक्षमता, आदि शामिल कर सकते हैं। दिव्यांग लोगों को विशेष ध्यान देने के लिए उन्हें सहायता मिलती है माध्यमिक विद्यालयों तक पहुंच प्राप्त करना, साथ ही उनकी क्षमता विकसित करने के लिए जानकारी और मार्गदर्शन के लिए भी। इस योजना के तहत प्रत्येक राज्य में समेकन वाले मॉडल स्कूलों की स्थापना की गई है।

घटक

छात्र-उन्मुख घटक, जैसे कि चिकित्सा और शैक्षिक मूल्यांकन, किताबें और स्टेशनरी, वर्दी, परिवहन भत्ता, पाठक भत्ता, लड़कियों के लिए छात्रवृत्ति, सहायता सेवाओं, सहायक उपकरण, आवास सुविधा, चिकित्सकीय सेवाएं, शिक्षण शिक्षण सामग्री इत्यादि आदि शामिल हैं।

अन्य घटकों में विशेष शिक्षा अध्यापकों की नियुक्ति, ऐसे शिक्षकों के लिए सामान्य शिक्षक के लिए भत्ते, शिक्षक प्रशिक्षण, स्कूल के प्रशासकों का अभिविन्यास, संसाधन कक्ष की स्थापना, बाधा रहित वातावरण उपलब्ध कराने आदि शामिल हैं।

क्रियान्वयन

राज्य सरकारों / संघ राज्यक्षेत्र (यूटी) प्रशासन के स्कूल शिक्षा विभाग कार्यान्वयन एजेंसियां हैं वे योजना के कार्यान्वयन में विकलांगों की शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव रखने वाले एनजीओ को शामिल कर सकते हैं।

वित्तीय सहायता

इस योजना में शामिल सभी वस्तुओं के लिए केंद्रीय सहायता 100 प्रतिशत केन्द्र पर आधारित है। राज्य सरकारों को केवल 600 / - प्रति दिव्यांग बच्चे प्रति वर्ष रुपये की छात्रवृत्ति के लिए प्रावधान करने की आवश्यकता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 2

4.13 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विशेष शिक्षा एवं समावेशित शिक्षा के लिए नयी नीतियाँ एवं कानूनों के बारे में जाना। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सलामांका रूपरेखा एवं बिवाको

मिलेनियम फ्रेमवर्क फॉर एक्शन की प्राथमिकताओं को जाना एवं समझा। साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर बनाये गए भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 को जानने के साथ ही और सर्व शिक्षा अभियान में अन्य विद्यालयों और वैकल्पिक स्कूली शिक्षा की सुविधा, स्कूलों के निर्माण और अतिरिक्त कक्षाओं, शौचालय और पेयजल, शिक्षकों के लिए प्रावधान, सेवा प्रशिक्षण में नियमित शिक्षक और शैक्षिक संसाधन समर्थन, मुफ्त पाठ्यपुस्तकों और वर्दी और सीखने की उपलब्धियों स्तर / परिणाम में सुधार शामिल हैं, के विषय में जानकारी प्राप्त कर चुके हैं।

4.14 शब्दावली

4.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. सालामांका रूपरेखा का विस्तृत वर्णन कीजिये?
2. भारतीय पुनर्वास परिषद् अधिनियम और राष्ट्रीय न्यास अधिनियम का उल्लेख कीजिये?

इकाई-5 राष्ट्रीय आयोग व नीतियाँ
(Commissions & Policies)

भाग-एक(PART-1)

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 कोठारी आयोग

5.3.1 कोठारी आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन

5.3.2 अध्यापक शिक्षा

5.3.3 अध्यापक शिक्षा के दोष व निराकरण

अपनी उन्नति जानिए

भाग-दो (PART-2)

5.4 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968)

5.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)

5.6 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का प्रभाव

5.6.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का प्रभाव

अपनी उन्नति जानिए

भाग-तीन(PART-3)

5.7 राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचा (2005)

5.8 दिव्यांग व्यक्तियों के सम्बन्ध में राष्ट्रीय नीति (2006)

5.8.1 दिव्यांग बालकों के लिए शिक्षा

अपनी उन्नति जानिए

5.9 सारांश

5.10 शब्दावली

5.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.12 सन्दर्भ पुस्तके

5.13 निबंधात्मक प्रश्न

भाग-एक **(PART- I)**

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत सरकार द्वारा दिव्यांग बालकों की शिक्षा को सही दिशा देने के लिय अनेक कल्याणकारी योजनाओं को संचालित किया जा रहा है ताकि दिव्यांग बालकों के द्वारा अपने को किसी भी स्तर पर कम न आँका जाये| सामान्य बालकों के समान शिक्षा के सभी साधन उनके स्कूल व घर पर उपलब्ध रहे, वे समाज के एक बहुमूल्य नागरिक बनकर देश के विकास में अपनी भागीदारी प्रदान कर सके| इन्ही लक्ष्यों को पूर्ण करने के उद्देश्य से पुर्व में शिक्षा के विकास के संदर्भ में अनेक कमीशनों का निर्माण किया गया| जिनके द्वारा शिक्षा के विकास व उन्नति हेतु सुझाव दिये गये| जिनके आधार पर शिक्षा के विकास में चतुर्मुखी विकास किया गया | विकास के इसी क्रम में भारत सरकार ने शिक्षा के पुनर्गठन पर समग्र रुप से सोचने समझने और देश भर के लिए समान शिक्षा निति का निर्माण करने के उद्देश्य से 14 जुलाई 1964 को डा. डी. एस. कोठारी (तत्कालीन अध्यक्ष विश्वविधालय अनुदान आयोग) की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग का गठन किया। आयोग ने इस बड़े कार्य को सम्पन्न करने के लिए दो विधियो का अनुसरण किया, पहली निरीक्षण एवं साक्षात्कार और दूसरी प्रश्नावली, निरीक्षण एवं साक्षात्कार विधि (Observation and Interview method) निरीक्षण एवं साक्षात्कार के लिए आयोग ने कार्यकारी दल (Working Groups) बनाए। इन दलों ने देश के विभिन्न प्रान्तो का दौरा किया, उनके अनेक विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयो को देखा और उनके छात्रो, शिक्षकों और प्रशासकों से साक्षात्कार किया अनेक शिक्षाविदो से भेंट कर उनसे विचार विमर्श किया और मुख्य तथ्यों को लेखबद्ध किया। शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्य, शिक्षा की संरचना, शिक्षकों की स्थिति, शैक्षिक अवसरों की समातनता, कृषि शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा और प्रौढ़ शिक्षा और कुछ समस्याओं का विवेचन स्तर विशेष की शिक्षा के सन्दर्भ में किया।

सरकार द्वारा कुछ वर्षों के बाद के तत्कालीन शिक्षा का सर्वेक्षण कराया और उसे **'शिक्षा की चुनौतीः नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य'** (Challenge of Education: A Policy Perspective) नाम से अगस्त, 1983 में प्रकाशित किया। इस दस्तावेज में भारतीय शिक्षा की 1951 से 1983 तक की प्रगति यात्रा का सांख्यिकीय विवरण, उसकी उपलब्धियों एवं असफलताओं का यर्थाथ चित्रण और उसके गुण-दोषों का सम्यक् विवेचन किया गया है। सरकार ने इस दस्तावेज को जनता के हाथों में पहुँचाया और इस पर देशव्यापी बहस शुरू की। सभी प्रान्तों के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों से सुझाव प्राप्त हुए। केन्द्रीय सरकार ने इस सुझावों के आधार पर एक नई शिक्षा नीति तैयार की और उसे संसद के बजट अधिवेशन 1986 में प्रस्तुत किया। संसद के पास कराने के बाद इसे मई 1986 में प्रकाशित किया गया। इस शिक्षा नीति की घोषणा के कुछ माह बाद इसकी कार्य योजना ((Plan of Action) नामक दस्तावेज प्रकाशित किया गया। यह भारत की ऐसी पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति है। इस नीति के बारे में

कहा गया था कि यह आने वाले समय के लिय शिक्षा का महाधिकार-पत्र (Megna Chartaa) साबित होगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की घोषणा नीति के क्रियान्वयन और उसके परिणामों की समीक्षा हेतु केन्द्र सरकार ने 1990 में 'राममूर्ति समीक्षा समिति 1990' का गठन किया था। अभी इस समिति के प्रतिवेदन पर विचार भी शुरू नहीं हुआ था कि सरकार ने 1992 में इस नीति के क्रियान्वयन एवं परिणामों की समीक्षा हेतु जनार्दन रेड्डी समिति, 1992' का गठन कर दिया। इन दोनों समितियों की रिपोर्ट के आधार पर सरकार ने 1992 में ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में कुछ संशोधन कर दिए और इसे संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992 (National Policy on Education,1986, with Modifications Undertaken in 1992) के नाम से प्रकाशित किया। सरकार ने उसी वर्ष इसकी कार्य योजना (Plan of Action) में कुछ परिवर्तन किए। इस परिवर्तित कार्य योजना को कार्य योजना 1992 (Plan of Action, 1992) कहा जाता है। निरन्तर विकास व परिवर्तन की इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय शिक्षा पाठ्यक्रम 2005 का निर्माण किया गया जिनके आधार पर समय की मांग के अनुसार पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया| वर्ष 2006 में दिव्यांग बालकों के लिय एक राष्ट्रीय नीति तैयार की गयी| जिनके आधार पर दिव्यांग बालकों को शिक्षा व सुविधाएँ प्रदान कर उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ा गया|

5.2 उद्देश्य (Objectives)

i. कोठारी आयोग द्वारा शिक्षा में सुधार के सम्बन्ध में दिये सुझावों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे |
ii. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के दस्तावेजो, मूल तत्व को समझ सकेंगे।
iii. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (1992) के दस्तावेज व प्रक्रिया को समझ सकेंगे|
iv. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित शिक्षा नीति (1992) के प्रभाव को समझ सकेंगे।
v. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाचां (2005) के सम्बन्ध में अध्ययन कर सकेगें |
vi. दिव्यांग व्यक्ति के सम्बन्ध में राष्ट्रीय नीति (2006) का अध्ययन कर सकेगें|

5.3 कोठारी आयोग (Kothari Commission)

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष - प्रोफेसर दौलत सिंह कोठारी अध्यक्ष विश्वविधालय अनुदान आयोग सहित कुल 17 सदस्य थे| जिनमें 6 अन्य देशो के शिक्षा विशेषज्ञय भी थे| इस कमीशन ने अक्टूबर 1964 से देश भर का दौरा किया कमीशन ने सभी राज्यो व केन्द्रशासित प्रदेशो में भ्रमण किया| भ्रमण के दौरान कमीशन ने 9000 व्यक्तियों के इन्टरव्यू लिये इन व्यक्तियों में समाज के हर वर्ग के व्यक्ति थे। कमीशन ने अपने कार्य का संचालन करने के लिए 22 कार्य टोलियाँ और अध्ययन दल नियुक्त किए। इस कमीशन को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने में दो वर्ष लगे।

5.3.1 कोठारी आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन (Reasons and purposes for settling up the commission)

भारत सरकार ने अपने 14 जुलाई 1964 के प्रस्ताव में नियुक्ति के कारण एवं प्रयोजनों को निम्नलिखित शब्दों में प्रकाशित किया

1. शिक्षा, विज्ञान और तकनीकी में अनुसन्धान - शिक्षा के द्वारा ही चतुर्मुखी विकास होता है। यह विकास तभी संभव है जब विज्ञान और प्रौद्यौगिकी के सभी साधनों का प्रयोग करते हुए शोधकार्य किया जाये। शिक्षा और विज्ञान पर अधिक से अधिक धन अनुसन्धान करने व दिव्यांग बच्चों के विकास में लगाया जाऐगा।

2. राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास:- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास करना भारत सरकार की प्रमुख आवश्यकता थी शिक्षा के द्वारा ही लोकतन्त्रीय समाज का निर्माण तथा राष्ट्रीय एकता सम्भव है दिव्यांग बच्चों की शिक्षा से ही सन्तुलित एवं संगठित राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास होगा।

3. धर्म निरपेक्ष लोकतन्त्र की शिक्षा - परम्परागत शिक्षा व्यस्था में बदलाव लाकर एक धर्मनिरपेक्ष प्रजातन्त्र के लिए नए लक्ष्य निर्धारित करना होना चाहिय जैसे निर्धनता का अन्त, कृषि का आधुनिकीकरण, उद्योगों का विकास, विज्ञान और प्रोद्यौगिकी का प्रयोग, समाजवादी समाज की रचना, शिक्षा रोजगार और सांस्कृतिक प्रगति के लिए समान अवसर आदि।

4. शिक्षा मे गुणात्मक विकास - स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा में बहुत तेजी से विकास हुआ है परन्तु उतना विकास नही हुआ जितना की आवश्यकता थी शिक्षा का स्तर निम्न था संख्यात्मक वृद्धि तो हुई है लेकिन गुणात्मक वृद्धि कम ही हुई। आज दिव्यांग बच्चों के विकास के लिय भी कार्य किया जाना चाहिय|

5.शिक्षा स्तरों का विकास- शैक्षिक विकास के लिए सम्पूर्ण क्षेत्र का विकास करना आवश्यक है। क्योंकि शिक्षा प्रणाली के विभिन्न अंग एक दूसरे पर प्रबल प्रतिक्रिया करते हैं| प्राथमिक शिक्षा यदि अच्छी होगी तो माध्यमिक शिक्षा भी अच्छी होगी, माध्यमिक शिक्षा उत्तम है तो उच्च शिक्षा भी उत्तम होगी अतः शिक्षा स्तरों का उन्नयन करने के लिए शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र की जाँच करना आवश्यक है। प्रत्येक स्तर पर दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के लिय भी काम किया जान चाहिय|

5.3.2 अध्यापक शिक्षा (Teacher's Education)

कोठारी आयोग ने अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा के महत्व के सम्बन्ध में कहा है, शिक्षा की गुणात्मक उन्नति के लिए अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा का ठोस कार्यक्रम अनिवार्य है| अध्यापक शिक्षा के उपर्युक्त महत्त्व को दृष्टिगत रखते हुय आयोग ने सर्वप्रथम अध्यापक शिक्षा के

दोषों का उल्लेख किया और तत्पश्चात् इस शिक्षा के सुधार के सम्बन्ध में अपने विचारों को लेखबद्ध किया गया|

5.3.3 अध्यापक शिक्षा के दोष व निराकरण (Defects and Solution of Teacher's Education)

कोठारी आयोग के अनुसार अध्यापक शिक्षा के दोष निम्न प्रकार पाये

i. प्रशिक्षण संस्थाओं का कार्य निम्न या साधारण कोटि का है।
ii. प्रशिक्षण संस्थाओं में योग्य अध्यापक नहीं है
iii. प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में नवीनता, सजीवता एवं वास्तविकता नहीं है
iv. प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा दिया जाने वाली प्रशिक्षण परम्परागत तथा अल्प उपयोगिता वाला है
v. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को प्रशिक्षण देने वाली संस्थाय इन विद्यालयों की दैनिक समस्याओं से कोई सम्बन्ध नहीं रखती है

कोठारी आयोग के अनुसार अध्यापक शिक्षा के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सुझाव-

अध्यापक शिक्षा के उपरोक्त दोषों का निराकरण करने के लिए कोठारी आयोग ने निम्नांकित महत्वपूर्ण सुझाव दिये है

(1) अध्यापक शिक्षा की पृथकता का अन्त (Removal of Isolation of Teacher Education) आयोग के अनुसार अध्यापकों की व्यावसायिक शिक्षा को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए शिक्षा सम्बन्धी नवीनतम विचारों के सम्पर्क में लाया जाना परम् आवश्यक है साथ ही दिव्यांग बच्चों के बारे में भी अध्यापकों को सकारात्मक द्रष्टिकोण रखना आवश्यक है| इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु आयोग ने निम्न सुझाव प्रस्तुत किये है

a. कुछ विशिष्ट विश्वविद्यालयों में अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों के विकास, अध्ययन एवं अनुसंधान हेतु शिक्षा विभाग (Department of Education) को स्थापित किया जाए।
b. शिक्षा विषय को विषय विद्यालयों के बी.ए. एवं एम. ए. के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया जाए
c. प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रसार सेवा विभाग (Extension Service Department) स्थापित किया जाए।

d. सब राज्यों में कॉम्प्रीहेन्सिव कॉलिजों (Comprehensive Colleges) को स्थापित कर उसमें शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए|
e. प्रत्येक राज्य में अध्यापक शिक्षा की राज्य परिषद (State Board of Teacher Education) स्थापित की जाए जिस पर सब क्षेत्रों एवं स्तरों के प्रशिक्षण का उत्तरदायित्व हो|

(2) व्यावसायिक शिक्षा की उन्नति (Improvement in Professional Education) -

a. शिक्षण के अभ्यास में गुणात्मक उन्नति करने के प्रयास किये जाये |
b. छात्राध्यापकों के लिए विशिष्ट कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों का निमार्ण किया जाए|
c. दिव्यांग बच्चों के अनुसार अध्यापक-शिक्षा के सब स्तरों एवं पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जाये|
d. सब प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्क्रमों की शिक्षा एवं विषय सामाग्री में दिव्यांग बच्चों को पढ़ाने व परेशानियों को ध्यान में रखा जाये|

(3) प्रशिक्षण की अवधि (Period of Training) -

a. प्राथमिक विद्यालयों के उन अध्यापकों के लिए, जिन्होंने सेकेण्डरी स्कूल कोर्स पास किया है, प्रशिक्षण की अवधि 2 वर्ष की हो
b. माध्यमिक विद्यालयों के उन अध्यापकों के लिए जो स्नातक है, प्रशिक्षण की अवधि अभी तो 1 वर्ष की हो पर कुछ समय के पश्चात् 2 वर्ष की कर दी जाए।
c. शिक्षा में स्नातकोत्तर (M.Ed.) पाठ्यक्रम की अवधि 1 वर्ष की हो।

(4) प्रशिक्षण संस्थाओं की उन्नति (Improvement in Training Institutions)-

a. ट्रेनिंग कॉलिजों के अध्यापकों के पास शिक्षा की उपाधि (Degree in Education) के अतिरिक्त दो स्नातकोत्तर उपाधियाँ (Post-Graduate Degrees) हो
b. टेनिंग कॉलिजों के अध्यापकों में डॉक्टर (Doctorate) की उपाधियाँ वाले शिक्षकों की संख्या उचित अनुपात में हो

c. गणित, विज्ञान, मनोविज्ञान एवं समाजषास्त्र आदि विषयो को शिक्षा देने के लिए विषेशज्ञों की नियुक्ति की जाए, चाहे उन्होनें प्रशिक्षण प्राप्त न किया हो
d. प्रत्येक प्रशिक्षण संस्थाओं से एक प्रयोगात्मक (Experimental) विद्यालय संलग्न हो।
e. विद्यालयो में कार्य करने वाले अप्रशिक्षित शिक्षकों को प्रशिक्षण देने हेतु केन्द्रीय स्थानों पर ग्रीष्मकालीन संस्थाओं (Summer Institutes) की योजना आरम्भ की जाए।

5 प्रशिक्षण सुविधाओं का विस्तार (Expansion of Training Facilities)-

a. प्रशिक्षण संस्थाओं के आकार में एक निश्चित योजना के अनुसार पर्याप्त विस्तार किया जाए|
b. पत्र व्यवहार द्वारा शिक्षा एवं अल्पकालीन प्रशिक्षण की सुविधाओं में विस्तार किया जाए|
c. विद्यालय शिक्षकों को अध्यापन कार्य करते हुए शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्राप्त करने कि सुविधायें प्रदान करने हेतु विश्वविद्यालयों तथा प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन कराया जाए|

अपनी उन्नति जानिए (check your progress)

प्रश्न 1. कोठारी आयोग का गठन किस वर्ष किया गया था?

प्रश्न 2. कोठारी कमीशन ने अपने कार्य का संचालन करने के लिए कितनी कार्य टोलियाँ और अध्ययन दल नियुक्त किए?

प्रश्न 3. कोठारी कमीशन ने शिक्षा में स्नातकोत्तर (M.Ed.) पाठ्यक्रम की अवधि कितने वर्ष की करने की बात कही ?

भाग-दो **(PART- II)**

5.4 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) National Education Commission

भारत सरकार द्वारा शिक्षा के विकास व सुधार हेतु समय समय पर कमीशन की न्युक्ति की जाती रही है अत: सुधार की ऐसी दिशा में भारत सरकार ने शिक्षा के विकास और सुसंगठित राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली के विषय में परामर्श देने के लिय सन् 1964 में शिक्षा आयोग की नियुक्ति की| आयोग ने भारतीय शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र का गहन एवं विस्तृत अध्ययन किया| इस अध्ययन के फलस्वरूप भारतीयों की कुशलताओं एवं आकांक्षाओं, धारणाओं एवं मान्यताओं में क्रांतिकारी परिवर्तन करके इस देश के रुढिवादी, मध्यकालीन एवं शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी को दूर करने का प्रयास किया गया| क्योकि हमारे देश के नेता व शिक्षाविद्ध जानते थी कि शिक्षा का विकास किये बिना समाज का विकास सम्भव नहीं है| क्योकि हमारा देश ने गुलामी की दीवार तोड़कर बहुत दिनों के बाद आजादी की सास ली है| इसलिय शिक्षा का विकास तेजी से किया जाना चाहिय|

आयोग ने अपने प्रतिवेदन में शिक्षा की राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के विषय में जो विचार अंकित किये , उनकों संसद के सदस्यों, विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों, राज्यों के शिक्षा मंत्रियों और भारतीय विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों ने कुछ संशोधन के पश्चात स्वीकार किय| इसी के आधार पर भारत सरकार ने शिक्षा की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सरकारी प्रस्ताव के रूप में 24 जुलाई 1968 को जारी किया|

स्वन्त्रत भारत की इस प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा-नीति में 17 कार्यक्रमों को सम्मिलित किया| इसके अंतर्गत शिक्षा के सब महत्वपूर्ण पक्षों, सिद्धांतों, स्तरों एवं संरचना को स्थान दिया गया और शिक्षा केआधारभूत लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को भी निर्धारित किया गया है| 1969 में केन्द्र की कांग्रेस सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की| इसमे निम्न कार्यक्रम पर विस्तार से चर्चा की गयी व उनकों लागू किया गया|

1. शिक्षा की संरचना 10 वर्ष की सामान्य शिक्षा, 2 वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा, 3 वर्ष का डिग्री कोर्से|
2. शैक्षिक अवसरों में समानता की स्थापना की गयी|
3. साक्षारता एवं व्यस्क शिक्षा का प्रसार किया गया|
4. अल्पसंख्यकों की शिक्षा की व्यवस्था की गयी |
5. परीक्षाओं में सुधार पर बल|
6. खेलकूद की व्यवस्था पर अधिक बल |
7. कार्यानुभव एवं राष्ट्रीय सेवा पर अधिक बल|

8. कृषि एवं उद्योगों के लिय शिक्षा का विकास |
9. विज्ञान एवं अनुसंधान की शिक्षा का समान स्तर व शोध कार्य पर अधिक बल|
10. सस्ती पाठ्य-पुस्तकों के स्तर एवं उत्पादन में सुधार|
11. अध्यापकों के वेतन, शिक्षा एवं पदस्थिति में सुधार|
12. त्रिभाषा सूत्र एवं प्रादेशिक भाषाओं का विकास |
13. प्रतिभाशाली छात्रों की खोज एवं उनकी प्रतिभा का अधिकतम विकास पर बल |
14. अल्पकालीन शिक्षा एवं पत्राचार-पाठ्यक्रमों की विशाल पैमाने पर व्यवस्था|
15. 14 वर्ष तक के सभी बालकों के लिय निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था|
16. माध्यमिक स्तर पर तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार|
17. उच्च शिक्षा के केन्द्रों की सुविधाओं में विस्तार और स्नातकोत्तर-स्तर पर अनुसंधान एवं पाठयक्रमों

शिक्षा नीति 1968 के प्रावधानों को सरकार द्वारा लागू किया गया लेकिन 1977 में केन्द्र में जनता दल सत्तारूढ़ हो गया और मोरारजी देशाई प्रधानमंत्री बने| मोरारजी देशाई ने 10+2+3 शिक्षा संरचना के स्थान पर 8+4+3 शिक्षा संरचना का विचार प्रस्तुत किया| परिणाम यह हुआ कि तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मंत्री श्री प्रताप चन्द्र चन्दर ने कुछ शिक्षाविदों और सांसदों के सहयोग से एक नई शिक्षा नीति तैयार की और 1979 में उसकी घोषणा कर डाली| वह घोषणा अभी लागू भी नहीं हो पाई थी कि श्रीमती इंदिरा गाँधी पुन: प्रधानमंत्री बनी| इंदिरा गाँधी ने पुन: राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के अनुपालन पर जोर दिया| इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 की नीतियाँ लागु हुई|

5.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) (National Educational Policy)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मूल तत्व (Main Components of National Education Policy)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और उसकी कार्य योजना से जो तत्त्व उजागर होते हैं, उन्हें निम्नलिखित रूप में क्रमबद्ध किया जा सकता है-

1. **शिक्षा प्रशासन का विक्रेन्द्रीयकरण:-** इस शिक्षा नीति के दसवें भाग में शिक्षा प्रशासन के विकेन्द्रीयकरण पर बल दिया गया है और राष्ट्रीय स्तर पर 'भारतीय शिक्षा सेवा', प्रान्तीय स्तर पर 'प्रान्तीय शिक्षा सेवा' और जिला स्तर पर 'जिला शिक्षा परिषद' के गठन की घोषणा की गई है।

2. **शिक्षा की व्यवस्था हेतु पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था:-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के तृतीय भाग में यह स्वीकार किया गया है कि शिक्षा मनुष्य का भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास करती है और यह

हमारे सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास, लोकतन्त्रीय मूल्यों (स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृत्व, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता और न्याय) के विकास और राष्ट्रीय लक्ष्यों (जनसंख्या नियन्त्रण, पर्यावरण संरक्षण और आधुनिकीकरण) की प्राप्ति के लिए परम आवश्यक है। शिक्षा एक उत्तम निवेश है। इसे शिक्षा नीति के ग्यारहवें भाग में इसे क्रियान्वित करने के लिए केन्द्र अपने बजट में शिक्षा पर 6 प्रतिशत का प्रावधान करेगा। दिव्यांग छात्रों के लिय भी विशेष प्रावधान किये जाने की आवश्यकता है|

3. सम्पूर्ण देश में 10+2+3 शिक्षा संरचना **:-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के तृतीय भाग में सम्पूर्ण देश के लिए 10+2+3 शिक्षा संरचना स्वीकार की गई है। प्रथम 10 वर्षीय शिक्षा पूरे देश के लिए समान होगी, इसके लिए एक आधारभूत पाठ्यचर्या (Core Curriculum) होगी। +2 पर प्रतिभाशाली छात्र-छात्राओं को विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए तैयार किया जाएगा और सामान्य छात्र-छात्राओं को विशेष की आवश्यकाताओं और छात्र-छात्राओं की रूचि एवं योग्यतानुसार व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाएगी। +3 पर छात्रों को उच्च ज्ञान प्रदान किया जाएगा |

4. विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन **:-** इस शिक्षा नीति के पाँचवें भाग में शिक्षा के सभी स्तरों का पुनर्गठन करने पर बल दिया गया है। और पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा की पाठ्यर्चया में सुधार करने और उनके स्तर को उठाने पर बल दिया गया है। गणित, विज्ञान एवं कम्प्यूटर प्रयोग, सांस्कृतिक संरक्षण एवं आधुनिकीकरण में समन्वय आदि की शिक्षा के समन्वय पर बल दिया गया है। साथ ही दिव्यांग बच्चों के शिक्षा स्तर को भी बढ़ाने पर बल दिया जाना चाहिय|

5. पूर्व प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी **:-** इस स्तर पर शिशुओं के शारीरिक एवं मानसिक विकास पर ध्यान दिया जाएगा; उनके भोजन, वस्त्र, सफाई और पर्यावरण पर ध्यान दिया जाएगा और उनके लिए खेल-कूद एवं व्यायाम की उचित व्यवस्था की जाएगी।

6. अनिवार्य एवं निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त करना **:-** प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाया जाएगा। 1 किमी0 की दूरी पर प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध हैं, व 3 किमी० पर उच्च प्राथमिक शिक्षा सुलभ करा दी जाएगी। 1 अप्रैल 2010 से अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा मौलिक अधिकार बनाकर सम्पूर्ण देश में लागु कर दी गयी|

7. माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन **:-** इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति के पाँचवें भाग में यह घोषणा की गई है कि माध्यमिक शिक्षा के सभी इच्छुक लड़के-लड़कियों को सुलभ कराई जाएगी। इस स्तर पर त्रिभाषा सूत्र लागू होगा प्रत्येक जिले में एक नवोदय विद्यालय स्थापित किया जाएगा जो अन्य विद्यालयों के लिए आदर्श विद्यालय होगा। +2 पर सामान्य शिक्षा के साथ-साथ क्षेत्र विशेष की आवश्यकतानुसार व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

8. उच्च शिक्षा का प्रसार एवं उन्नयन **:-** इस शिक्षा नीति के पाँचवें भाग में यह स्पष्ट किया गया है कि उच्च शिक्षा द्वारा छात्रों में विशिष्ट ज्ञान एवं कुशलता का विकास किया जाएगा जिससे राष्ट्र का विकास

होगा। उच्च शिक्षा का स्तर मान बनाए रखने का उत्तरदायित्व विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का होगा। उच्च शिक्षा को सर्वसुलभ कराने के लिए खुले विश्वविद्यालयों (Open Universities) की स्थापना की जाएगी।

9. तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा में सुधार **:-** इस शिक्षा नीति के छठे भाग में तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार करते हुए भविष्य की आवश्यकतानुसार नियोजित किया जाएगा| इस शिक्षा के स्तर को उठाने के लिए इनके पाठ्यक्रमों को अद्यतन बनाया जाएगा और सैद्वान्तिक ज्ञान की अपेक्षा प्रायोगिक दक्षता पर अधिक बल दिया जाएगा और साथ ही शोध कार्य पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। इस शिक्षा का स्तरमान निश्चित करने और इस प्रकार की शिक्षण संस्थाओं पर नियन्त्रण करने के लिए 'अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद' (All India Council for Technical Education) को कानूनी अधिकार दिए जाएँगे।

10. परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार **:-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के आठवें भाग के अन्त में तत्कालीन परीक्षा प्रणाली और मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार की घोषणा की गई है कि मूल्यांकन को एक सतत् प्रक्रिया बनाया जाएगा, बाह्य मूल्यांकन को अधिक महत्त्व दिया जाएगा, परीक्षाओं को वैध और विश्वसनीय बनाया जाएगा, प्रश्नपत्रों की रचना और उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन को वस्तुनिष्ठ बनाया जाएगा और श्रेणी के स्थान पर ग्रेड सिस्टम लागू किया जाएगा।

11. शिक्षकों के स्तर और शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार **:-** शिक्षकों का चयन उनकी योग्यता के आधार पर किया जाएगा। उनके स्तर को उठाने के लिए उनके वेतनमान और सेवाशर्तो को आकर्षक बनाया जाएगा। पूरे देश में समान कार्य के लिए समान वेतनमान के सिद्धान्त को लागू किया जाएगा, साथ ही सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार किया जाएगा। प्रत्येक जिले में 'जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान'(District Institute of Education and Training, DIET) की स्थापना की जाएगी जिनमें प्राथमिक शिक्षकों और निरौपचारिक शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा के कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी।

12. प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों का विस्तार **:-** प्रौढ़ शिक्षा को राष्ट्रीय लक्ष्यों से जोड़ा जाएगा और 15-35 आयु वर्ग के प्रौढ़ों को साक्षर बनाने के लिए सरकारी और गैरसरकारी संगठनों का उपयोग किया जाएगा। औद्योगिक एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों को उनमें कार्यरत निरक्षक प्रौढ़ों को साक्षर बनाने का उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा।

13. सतत् शिक्षा की व्यवस्था **:-** युवा वर्ग, गृहणियों, किसानों, व्यापारियों और विभिन्न उद्योगों मे कार्यरत व्यक्तियों को उनके क्षेत्र की अद्यतन जानकारी देने हेतु सतत् शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी और इसके लिए खुली शिक्षा, दूर शिक्षा की व्यवस्था और जनसंचार के माध्यमों का प्रयोग किया जाएगा।

14. शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग **:-** किसी भी स्तर की किसी भी प्रकार की शिक्षा के लिए शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग किया जाएगा। जन संचार के माध्यमों से शिक्षा को सर्वसुलभ बनाया जाएगा।

15. शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाना **:-** राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के सातवें भाग में शिक्षा को कारगर बनाने के लिए शिक्षकों की जवाबदेही (Accountability) निश्चित करने और छात्रों को कर्त्तव्य बोध कराने पर बल दिया गया हैं इसके तीसरे भाग में शिक्षा के प्रत्येक स्तर के लिए न्यूनतम अधिगम स्तर (Minimum Level of Learning, MLL) निश्चित करने की बात कही गई है और उसमें गुणात्मक सुधार करने की बात कही गई है। इस दस्तावेज के दसवें भाग में प्रशासन तन्त्र को चुस्त करने पर बल दिया गया है।

16. शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए ठोस कदम **:-** इस शिक्षा नीति के चौथे भाग में स्पष्ट घोषणा की गई है कि शैक्षिक विषमताओं को दूर किया जाएगा और महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक और दिव्यागों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाएगी और सभी को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर सुलभ कराए जाएँगे।

17. महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान**:-** स्त्री-पुरूषों की शिक्षा में भेद नहीं किया जाएगा, लिंग मूलक अन्तर को समाप्त किया जाएगा। महिलाओं की शिक्षा के विकास हेतु प्रारम्भ से ही प्रयत्न किए जाएँगे। महिलाओं को विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। महिलाओं को व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने के लिए विशेष सुविधाएँ दी जाएँगी।

18. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों की शिक्षा की उचित व्यवस्था**:-** नगरों, गाँवों और पहाड़ी तथा आदिवासी क्षेत्रों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए विद्यालयों की व्यवस्था की जाएगी। इन विद्यालयों में यथासम्भव इन्हीं वर्गो और इन्हीं क्षेत्रों के शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी। दूर-दराज से आने वालें बच्चों के लिए छात्रावासों का निर्माण कराया जाएगा। इन वर्गों के सभी बच्चों की आर्थिक सहायता बिना आय को जाने सभी के लिय प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा व व्यावसायिक शिक्षा में निशुल्क शिक्षा के साथ छात्रवृति भी प्रदान की जाय तथा छात्रवृति व सुविधायों की धनराशि बढ़ाई जाये।

19. पिछड़े वर्ग एवं पिछड़े क्षेत्रों के बच्चों की शिक्षा की उचित व्यवस्था**:-** इस हेतु निम्नलिखित कदम उठाए जाएँगे- पिछड़े वर्ग एवं पिछड़े क्षेत्रों के बच्चों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। देश के रेगिस्तानी, पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों में और अधिक स्कूल खोले जाएँगे। इन क्षेत्रों के स्कूलों में इन्हीं क्षेत्रों के शिक्षित युवकों को प्रशिक्षित कर शिक्षक नियुक्त करने का प्रयास किया जाएगा। पिछड़े वर्ग के बच्चों को आर्थिक सहायता जारी रहेगी, साथ ही उन्हें छात्रवृत्तियाँ दी जाएँगी।

20. अल्पसंख्यकों के बच्चो की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाएगा **:-** संविधान में अल्पसंख्यकों (मुसलमान एवं इसाई आदि) को अपनी भाषा, संस्कृति एवं धर्म की रक्षा करने का अधिकार दिया

गया है। अतः- इन्हें अपनी शिक्षा संस्थाएँ चलाने का आधिकार होगा, इनके क्षेत्रों में स्कूलों की स्थापना की जाएगी।

21. दिव्याग और मन्दबुद्धि बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था **:-** दिव्याग और मन्दबुद्धि बालकों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाए और इनकी शिक्षा व्यवस्था हेतु स्वैच्छिक प्रयासों को प्रोत्साहित किया जाएगा। मामूली दिव्याग बच्चे सामान्य बच्चों के साथ पढ़ेगे, गूँगे, बहरे, अन्धे और मन्दबुद्धि बालकों के लिए अलग-अलग स्कूल खोले जाएँगे। दिव्याग बच्चों को कुटीर अद्योग-धन्धों की शिक्षा दी जाएगी और उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जाएगा। दिव्याग और मन्दबुद्धि बालकों की शिक्षा हेतु विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी।

5.6 संशोधित शिक्षा नीति (1992) Revised National Policy Of Education

संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (1992) की नीति व संशोधन (Revised and Amendment National Policy Of Education)

भारत सरकार ने 1992 मे राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में निम्नलिखित संशोधन किए है-

भाग एक- भूमिका और भाग दो-शिक्षा का सार और उसकी भूमिका में कोई संशोधन एवं परिवर्तन नहीं किया गया है।

भाग तीन- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में केवल एक संशोधन किया गया है।

(1) पूरे देश में +2 को स्कूली शिक्षा का अंग बनाया जाएगा।

चार भाग- समानता के लिए शिक्षा में चार संशोधन किए गए हैं-

(1) समग्र साक्षरता अभियान पर और अधिक बल दिया जाएगा।

(2) राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (NLM) को निर्धनता निवारण, राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण संरक्षण, छोटा परिवार, नारी समानता को प्रोत्साहन, प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण और प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या से जोड़ा जाएगा।

(3) रोजगार/स्वरोजगार केन्द्रित एवं आवश्यकता एवं रूचि पर आधारित व्यावसायिक व कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर बल दिया जाएगा।

(4) नव साक्षरों के लिए साक्षरता के उपरान्त सतत् शिक्षा के व्यापक कार्यक्रम उपलब्ध कराए जाएँगे।

भाग पाँच- विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन-शिशुओं की देखभाल और शिक्षा में सात संशोधन किए गए हैं-

(1) ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में कम से कम तीन बड़े कमरों और तीन शिक्षकों की व्यवस्था की जाएगी।

(2) भविष्य में प्राथमिक स्कूलों में नियुक्त होने वाले शिक्षकों में 50 प्रतिशत महिलाएँ होंगी।

(3) ब्लैक बोर्ड योजना को उच्च प्राथमिक विद्यालयों में भी लागू किया जाएगा।

(4) माध्यमिक शिक्षा में लड़कियों और अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के बच्चों के नामांकन पर बल दिया जाएगा।

(5) मुक्त अधिगम प्रणाली को सुदृढ़ किया जाएगा।

भाग छह- तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा में केवल एक संशोधन किया गया है-

(1) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE) को और सुदृढ़ किया जाएगा।

भाग सात- शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाना में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

भाग आठ- शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया को नया मोड़ देना में दो संशोधन किए गए हैं-

(1) प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में जनसंख्या शिक्षा पर विशेष बल दिया जाएगा।

(2) परीक्षा संस्थाओं के दिशा निर्देशन हेतु परीक्षा सुधार प्रारूप तैयार किया जाएगा।

भाग नौ- शिक्षक के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

भाग दस- शिक्षा का प्रबन्ध में केवल एक संशोधन किया गया है-

(1) शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत से अधिक व्यय किया जाएगा।

भाग ग्यारह- संशोधनऔर समीक्षा पर बल दिया गया |

भाग बारह- भविष्य में कोई संशोधन नहीं बढ़ाया गया है।

5.6.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का प्रभा (National Education Policy 1986, & Revised National Policy)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 देश की पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति है जिसमें नीति के साथ इसको लागू करने के लिए पूरी कार्य योजना, 1986 बनाई गई। 1992 में जब इसमें कुछ संशोधन किए गए तो साथ

ही इसकी कार्य योजना में भी संशोधन किया गया है और उसे कार्य योजना, 1992 के नाम से प्रकाशित किया गया। इस नीति के तहत अब तक जो संशोधन हुआ है उसे निम्नलिखित रूप से क्रमबद्ध किया जा सकता है-

(1) केन्द्र और प्रान्तों के शिक्षा बजटों में बढ़ोतरी शुरू हुई है, यह बात दूसरी है कि अभी तक केन्द्र के बजट में शिक्षा पर 6 प्रतिशत व्यय अभी तक सुनिश्चित नहीं किया जा सका है।

(2) पूरे देश में 10+2+3 शिक्षा संरचना लागू हो गई है, यह बात दूसरी है कि प्रथम 10 वर्षीय आधारभूत पाठ्यचर्या अभी लागू नहीं हो पाई है।

(3) शिशुओं की देखभाल और पोषण तथा पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए अनेक योजनाएँ चलाई जा रही है। 2007 तक देश में 7.5 लाख से अधिक तो आँगनबाड़ियाँ और बालबाड़ियाँ स्थापित की जा चुकी थीं |

(4) प्राथमिक शिक्षा का तेजी से प्रसार एवं उन्नयन हो रहा है। ब्लैकबोर्ड योजना के तहत 2007 तक लगभग 80 प्रतिशत प्राथमिक और 40 प्रतिशत उच्च प्राथमिक स्कूलों की दशा में सुधार किया जा चुका था।

(5) माध्यमिक शिक्षा के प्रसार के प्रयत्नों में तेजी आई है। इस हेतु इस स्तर पर खुली शिक्षा का भी विस्तार किया गया है, राष्ट्रीय खुले विद्यालय (National Open School) व 2007 तक 565 नवोदय विद्यालय खोले जा चुके थे।

(6) लगभग सभी प्रान्तों में +2 पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम भी शुरू किए गए है।

(7) उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, और प्रबन्ध शिक्षा सभी के विकास एवं उन्नयन के लिए प्रयत्न जारी हैं। इस बीच उच्च शिक्षा के प्रसार हेतु दूर शिक्षा (खुली शिक्षा) का काफी प्रसार किया गया हैं साथ ही स्ववित्तपोषित उच्च शिक्षा संस्थाओं को खुले हाथ मान्यता दी गई है। इससे उच्च शिक्षा का प्रसार हुआ है।

(8) शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में तो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं, 2007 तक 556 'जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIETs) स्थापित किए जा चुके थे, 104 शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों को शिक्षक शिक्षा केन्द्रों (CTEs)में सम्मुनत किया जा चुका था और 39 शिक्षक शिक्षा कॉलिजों को शिक्षा उच्च अध्ययन केन्द्रों' (CASEs) में सम्मुनत किया जा चुका था। इस बीच दिसम्बर, 1993 में संसद के एक एक्ट द्वारा राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद् (NCTE) को संवैधानिक दर्जा दिया गया और 1995 में इस एक्ट के अनुसार गठन किया गया।

(9) इस बीच प्रौढ़ शिक्षा एवं सतत शिक्षा कार्यक्रमों के लिए भी अतिरिक्त धनराशि उपलब्ध कराई गई है जिससे इस क्षेत्र में भी कार्य की गति बढ़ी है। 2001 में हमारे देश में साक्षरता प्रतिशत 65.38 हो गया था जो वर्तमान (2017) में लगभग 74.04 प्रतिशत हो गया होगा।

(10) शैक्षिक अवसरों की समानता व आरक्षण के द्वारा जो समानता का कदम उठाया गया वह एक सराहनीय कदम था जिसकी आज के समय भी बहुत आवश्यकता है आरक्षण के द्वारा स्त्री शिक्षा, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग और अल्पसंख्यकों के बच्चों की शिक्षा में विस्तार हुआ है, कुछ विद्यालय अपंग एवं मन्दबुद्धि बच्चों, किशोरों और युवकों के लिए भी खोले गए हैं।

नोट- आज के दिव्यांग वच्चों की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना होगा, क्योकि समाज का एक वर्ग इस समस्या से ग्रसित है उनके लिय विशेष शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त किये व्यक्तियों को शिक्षण व सलाहकार के रूप में नियुक्ति प्रदान की जानी चाहिय| इनके द्वारा दिव्यांग बालकों को सामान्य बालको के समान तैयार करके राष्ट्रीय धारा में करना होगा|

अपनी उन्नति जानिए (check your progress)

प्रश्न 4. स्वन्त्रत भारत की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा-नीति 24 जुलाई 1968 में कितने कार्यक्रमों को सम्मिलित किया गया ?

प्रश्न 5. जिला शिक्षा परिषद' के गठन की घोषणा किस शिक्षा नीति में की गई है?

प्रश्न 6. हमारे देश में वर्ष 2017 में साक्षरता प्रतिशत लगभग कितने प्रतिशत होगी?

भाग-तीन <u>(PART- III)</u>

5.7 राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाचां (2005) (National Curriculum Framework)

भारत सरकार द्वारा समय-समय पर शिक्षा की स्थिति जानने के लिय कमीशनों का गठन किया जाता रहा है| जो शिक्षा के विकास में किस प्रकार चतुर्मुखी विकास करने के लिय अपना सुझाव देते रहे है| शिक्षा में सुधार की दिशा में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद की कार्यकारिणी ने 14 एवं 19 जुलाई 2004 की बैठकों में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या को संशोधित करने का निर्णय लिया| मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा सचिव ने परिषद के निदेशक को 1993 की **'शिक्षा बिना बोझ के'** व **राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एन.सी.एफ.एस.ई.) 2000** की समीक्षा करने की आवश्यकता अनुभव की गयी| इन्ही निर्णयों के सन्दर्भ में प्रोफेसर यशपाल की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय संचालन समिति और 21 राष्ट्रीय फोकस समूहों का गठन किया| राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा 2005 में निम्न प्रस्ताव किये|

1. 'शिक्षा बिना बोझ के' सूझ के आधार पर पाठ्यचर्या के बोझ को कम करना|
2. संविधान में उल्लिखित मूल्यों –जैसे सामाजिक न्याय, समता एवं धर्मनिरपेक्षता पर आधारित पाठ्यचर्या अभ्यास|
3. सभी बच्चों के लिय गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना|
4. कक्षा में सभी विधार्थियों के लिय समावेशी वातावरण तैयार करना|
5. स्थानीय ज्ञान एवं बच्चों के अनुभव पाठयपुस्तकों और अध्यापन प्रक्रियाओं के महत्वपूर्ण अंग है|
6. त्रिभाषा फार्मूले को पुन: लागु किये जाने की दिशा में काम किया जाना चाहिय, जिसमे बच्चों को घरेलू भाषाओं और मात्रभाषाओं को शिक्षण के माध्यम के रूप में मान्यता देने की जरुरत है| इनमे आदिवासी भाषाएँ भी शामिल है|
7. गणित की शिक्षा से बच्चों की तर्क, सोचने की, अमुर्तनों के निर्माण तथा द्रष्टिकोण की क्षमताओं एवं बच्चों में समस्या सुलझाने की क्षमता का विकास हो|
8. विज्ञान की भाषा, प्रक्रिया एवं विषयवस्तु विधार्थी की उम्र और उसकी ज्ञान की सीमा के अनुकूल होनी चाहिय|
9. प्रमुख राष्ट्रीय चिंताओं – जैसे लैगिक न्याय, मानव अधिकार और हाशिए के समूह तथा अल्पसंख्यकों के प्रति संवेदनशीलता को विकसित किया जाये|
10. कला को स्कूली शिक्षा के हर स्तर पर शामिल किये जाने पर बल दिया जाये|
11. शांति के लिय शिक्षा को शिक्षक –प्रशिक्षण का भी एक अवयव बनाया जाये|
12. स्वास्थ्य शिक्षा व पर्यावरण शिक्षा पर भी बल दिया जाये|
13. प्रधानाध्यापक और शिक्षकों के सहयोग से सार्थक अकादमिक योजना का विकास किया जाये|
14. शिक्षक अनुभवों तथा विविध कक्षा अभ्यासों में साझेदारी को बढ़ावा देना ताकि नए विचार उत्पन्न हो सके और नवाचार तथा प्रयोग को बढ़ावा मिले|
15. विश्वविद्यालयों, गैर-सरकारी संस्थाओं तथा शिक्षक संघठनो से शिक्षकों और विशेषज्ञों की मदद से विकेन्द्रीकृत तरीके से सबकी सहभागिता के साथ पाठ्यक्रमों, पाठ्यपुस्तकों तथा शिक्षण अधिगम संसाधनों का विकास किया जा सकता है|

5.8 दिव्यांग व्यक्तियों के सम्बन्ध में राष्ट्रीय नीति (2006) (National Policy For Persons With Disabilities (2006)

भारत का संविधान अपने सभी नागरिकों के लिए समानता, स्वतंत्रता, न्याय व गरिमा सुनिश्चित करता है और स्पष्ट रूप से यह दिव्याग व्यक्तियों समेत एक संयुक्त समाज बनाने पर जोर

डालता है। हाल के वर्षों में दिव्यागों के प्रति समाज का नजरिया तेजी से बदला है। यह माना जाता है कि यदि दिव्याग व्यक्तियों को समान अवसर तथा प्रभावी पुनर्वास की सुविधा मिले तो वे बेहतर गुणवत्तापूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं। दिव्याग व्यक्तियों के स्व-रोजगार के लिए राष्ट्रीय अपंग तथा वित्तीय विकास निगम (NHFDC) राज्य की एजेंसियों द्वारा छूट के साथ ऋण मुहैया कराना । दिव्यागों के कल्याण के लिए ग्रामीण स्तर, अंतर्वर्ती स्तर व जिला स्तर पर पंचायती राज संस्थान प्रयासरत है। भारत, एशिया प्रशांत क्षेत्र के दिव्याग व्यक्तियों की समानता व पूर्ण भागीदारी की घोषणा-पत्र का सदस्य है। भारत एक समावेशिक, अवरोध मुक्त तथा आधिकार अधारित समाज के निर्माण की दिशा में प्रयास करने के लिए बिवाको मिलेनियम फ्रेमवर्क का भी सदस्य है। मौजूदा समय में भारत राष्ट्रीय दिव्याग व्यक्तियों के अधिकारों तथा गरिमा की रक्षा व समर्थन घोषणा-पत्र में भाग ले रहा है।

भारत सरकार ने दिव्यागों के लिए तीन कानूनों को लागू किया है, जो इस प्रकार हैं:

i. दिव्याग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार सुरक्षा तथा पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995, जो ऐसे लोगों को शिक्षा, रोजगार, अवरोधमुक्त वातावरण का निर्माण, सामाजिक सुरक्षा इत्यादि प्रदान करता है।
ii. ऑटिज्म, सेरीब्रल पाल्सी, मानसिक मंदबुद्धि व बहुदिव्यागता के लिए राष्ट्रीय कल्याण ट्रस्ट अधिनियम 1999 में चारों वर्गों के कानूनी सुरक्षा तथा उनके स्वतंत्र जीवन हेतु सहसंभव वातावरण के निर्माण का प्रावधान है।
iii. भारतीय पुनर्वास परिषद् अधिनियम 1992, पुनर्वास सेवाओं के लिए मानव-बल विकास का प्रयास करता है।

5.8.1 दिव्यांग बालकों के लिए शिक्षा (Education for Disability Children)

यह सुनिश्चित किया जाएगा कि वर्ष 2020 तक हर एक दिव्यांग बच्चे को प्री-स्कूल, प्राथमिक तथा माध्यमिक (सेकेंडरी) स्तर की शिक्षा प्राप्त हो सके। इस दिशा में निम्नांकित प्रयास किये जाएंगे :

1. स्कूलों को (भवनों, मार्गों, शौचालयों, खेल के मैदानों, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों इत्यादि को) अवरोध मुक्त करना ताकि सभी प्रकार के दिव्याग वहां पहुंच सकें।
2. पढ़ाने के माध्यम तथा विधि को इस तरह से अपनाया जाएगा ताकि वे अधिकतर दिव्यागता परिस्थितियों पर खरा उतरे।
3. स्कूल या कई स्कूलों के आसानी से पहुंच में आने वाले केंद्रों पर पढ़ाने/सिखाने के तकनीकी/ पूरक/ विशेष प्रणाली उपलब्ध कराई जाएगी।

4. तकनीकी/ सिखाने वाले यंत्र औजार, जैसे खिलौने, ब्रेल, टॉकिंग बुक, उचित सॉफ्टवेयर इत्यादि भी उपलब्ध कराये जाएंगे। सामान्य पुस्तकालय, ई-लाइब्रेरी, ब्रेल-लाइब्रेरी तथा टॉकिंग बुक लाइब्रेरी, संसाधन कक्ष की स्थापना के लिए सहायता प्रदान की जाएगी।
5. राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय तथा दूर शिक्षा कार्यक्रम को लोकप्रिय बनाया जाएगा और उसे देश के अन्य भागों में भी फैलाया जाएगा।
6. एक-दूसरे के साथ बात करने के लिए मूक- बधिरों की संकेत भाषा, वैकल्पिक तथा संवर्धी बातचीत (AAC) व अन्य माध्यमों को एक प्रभावी माध्यम के रूप में पहचान दी जाएगी, उनका मानकीकरण किया जाएगा तथा उन्हें लोकप्रिय बनाया जाएगा।
7. स्कूल की स्थापना आसानी से पहुंचने वाली दूरी पर की जाएगी। अन्यथा समुदाय, राज्य तथा एनजीओ के सहयोग से परिवहन व्यवस्था की जाएगी।
8. स्कूलों में माता-पिता-शिक्षक के बीच परामर्श तथा परेशानी से निपटने की प्रणाली की स्थापना की जाएगी।
9. प्राथमिक, मध्य विद्यालय तथा उच्च स्तरीय शिक्षा में दिव्याग छात्राओं की दाखिला तथा उनके उपस्थित होने के आंकड़े को वार्षिक रूप से समीक्षा की जाएगी।
10. दिव्यागता से प्रभावित कई बच्चे, जो समावेशिक शिक्षा प्रणाली में भाग नहीं ले सकते, उन्हें विशेष स्कूलों के जरिए शिक्षा प्रदान की जाएगी। स्पेशल स्कूलों में सही तरह से सुधार लाये जाएंगे जो तकनीकी विकास पर आधारित होगा। ये स्कूल दिव्याग बच्चों को मुख्यधारा की समावेशिक शिक्षा के लिए तैयार करने में मदद करेंगे।
11. कुछ मामलों में दिव्यागता की प्रकृति (इसके प्रकार तथा गंभीरता के कारण), निजी परिस्थितियों तथा प्राथमिकताओं के कारण घर आधारित शिक्षा प्रदान की जाएगी।
12. विभिन्न प्रकार की दिव्यागता के शिकार बच्चों के लिए पाठ्यक्रम तथा मूल्यांकन प्रणाली का विकास किया जाएगा, जिसमें उनकी क्षमता पर ध्यान रखा रखा जाएगा। परीक्षा प्रणाली में सुधार लाया जाएगा ताकि यह दिव्यागों के अनुकूल बन सके- जैसे सीखने वाला गणित, केवल एक एक भाषा सीखने का प्रावधान करना। इसके अलावा अतिरिक्त समय, कैलकुलेटर का इस्तेमाल, क्लार्क टेबल का इस्तेमाल, स्काइब्स इत्यादि की आवश्यकतानुसार आपूर्ति की जाएगी।
13. प्रत्येक राज्य/केंद्र शासित प्रदेश में समावेशिक शिक्षा का मॉडल स्कूल खोला जाएगा, ताकि दिव्याग लोगों की शिक्षा को बढ़ावा मिल सके।
14. नॉलेज सोसाइटी के इस दौर में कम्प्यूटर एक अहम भूमिका निभाता है। यह प्रयास किया जाएगा कि प्रत्येक दिव्याग बच्चा को उचित रूप से कम्प्यूटर का इस्तेमाल करने का अवसर मिले।
15. 6 वर्ष की आयु तक के दिव्याग बच्चों की पहचान की जाएगी तथा उनके लिए आवश्यक चिकित्सा उपाय किए जाएगें ताकि वे समावेशिक शिक्षा में शामिल होने के लिए सक्षम बन सकें।
16. मानसिक रूप से अपंग बच्चों के लिए मनो-सामाजिक पुनर्वास केंद्रों पर शैक्षिक सुविधाएं प्रदान की जाएगी।

17. दिव्यांग बच्चों की क्षमता के बारे में जानकारी के अभाव में कई स्कूल ऐसे बच्चों को अपने यहां दाखिला लेने से हिचकते हैं। शिक्षकों, प्राचार्यों तथा स्कूल के अन्य कर्मचारियों को सुग्राही बनाने के लिए कार्यक्रम चलाए जाएंगे।
18. सामाजिक न्याय तथा अधिकारिता मंत्रालय द्वारा सहायता प्रदत्त विशेष विद्यालय वर्तमान में समावेशिक शिक्षा के संसाधन केंद्र बन गए हैं। मानव संसाधन विकास मंत्रालय आवश्यकतानुसार नये विशेष स्कूल की स्थापना करेगा।
19. वयस्क शिक्षा/ सीखने में गंभीर रूप से अक्षम वयस्कों के लिए अवकाश केंद्र को प्रोत्साहित किया जाएगा।
20. उच्च शिक्षा में दाखिले के लिए दिव्यागों के लिए 3% का आरक्षण लागू किया जाएगा। विश्वविद्यालय, कॉलेज तथा व्यावसायिक संस्थानों को विकलांकता केंद्र खोलने में वित्तीय सहायता प्रदान की जाएगी, ताकि दिव्याग छात्रों के शिक्षा जरूरत की पूर्ति की जा सके।
21. शिक्षकों की परिचय तथा सेवा प्रशिक्षण में दिव्याग बच्चों के प्रबंधन से जुड़े मुद्दों पर एक मॉड्यूल शामिल किया जाएगा। उन्हें दिव्याग छात्रों के क्लास रूम, हॉस्टल, कैफेटेरिया तथा अन्य सुविधाएं मुहैया कराने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।
22. सामाजिक तथा आर्थिक सशक्तीकरण के लिए शिक्षा सबसे प्रभावी माध्यम होता है। संविधान के अनुच्छेद 21ए के तहत, जहां शिक्षा को मौलिक अधिकार माना गया है और दिव्याग अधिनियम 1995 के अनुच्छेद 26 में दिव्याग बच्चों को 18 वर्षों की उम्र तक मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान किया गया है । जनगणना 2001 के मुताबिक, 51% दिव्याग व्यक्ति निरक्षर हैं। दिव्याग लोगों को सामान्य शिक्षा प्रणाली की मुख्यधारा में लाने की जरूरत है।
23. सरकार द्वारा चलाया गया सर्व शिक्षा अभियान (SSA) का 8 वर्षों तक बच्चों के प्राथमिक स्कूलिंग प्रदान करने का लक्ष्य है, जिसमें 6 से 14 वर्ष के बच्चे भी शामिल हैं। दिव्याग बच्चों के लिए समेकित शिक्षा के तहत 15 से 18 वर्षों तक की उम्र के दिव्याग बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान की जाएगी।
24. 3. सर्व शिक्षा अभियान के तहत शिक्षा विकल्पों का एक सातत्य, सीखने वाले यंत्र, गत्यात्मकता सहायता, सहायक सेवाएं इत्यादि दिव्याग छात्रों को उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसमें शामिल है मुक्त शिक्षण प्रणाली, ओपन स्कूल, वैकल्पिक स्कूलिंग, दूर शिक्षा, विशेष स्कूल, जहां भी आवश्यक हो घर आधारित शिक्षा, भ्रमणकारी शिक्षक मॉडल, उपचार वाली शिक्षा, पार्ट टाइम कक्षाएं, समुदाय आधारित पुनर्वास व व्यावसायिक शिक्षा के जरिए शिक्षा प्रदान करने का कार्य।
25. राज्य सरकारों, स्वायत्त निकायों तथा स्वयंसेवी संगठनों के जरिए क्रियान्वित आईईडीसी योजना विशेष शिक्षकों, पुस्तक व लेखन सामग्रियों, यूनिफॉर्म, परिवहन, दृष्टि से कमजोर व्यक्तियों के लिए पाठक भत्ता, हॉस्टल भत्ता, उपकरण लागत, वास्तु अवरोधों को हटाता/सुधार करना, निर्देशात्मक सामग्रियों की खरीद/उत्पादन के लिए वित्तीय सहायता, सामान्य शिक्षकों के लिए

प्रशिक्षण व संसाधन कमरों के लिए यंत्र-उपकरण जैसी सुविधाओं के लिए सौ फीसदी वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

26. नियमित सर्वेक्षणों, उचित स्कूलों में उनकी उपस्थिति और शिक्षा पूरी करने तक उनकी निरंतरता के जरिए बच्चों में दिव्यागता की पहचान हेतु सरकार की ओर से केंद्रित प्रयास किया जाएगा। सरकार दिव्याग बच्चों को सही प्रकार की शिक्षण सामग्रियों तथा पुस्तक प्रदान करने, शिक्षकों व स्कूलों को सही रूप से प्रशिक्षण व सुग्राही बनाने के लिए प्रयास करेगी, जो पहुंच में आने योग्य तथा दिव्याग हितैषी हो।
27. भारत सरकार ऐसे दिव्याग छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान करती है ताकि स्कूल के बाद के स्तर पर पढ़ाई में उन्हें मदद मिल सके। सरकार यह छात्रवृत्ति जारी रखेगी व इसके कवरेज का विस्तार करेगी।
28. विभिन्न प्रकार की उत्पादक गतिविधियों के लिए उपयुक्त योग्यता निर्माण के लिए तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा सुविधा प्रदान की जाएगी। जिसके लिए मौजूदा संस्थान या कार्यरत या अछूते क्षेत्रों के अधिकृत संस्थानों का अनुकूलन किया जाएगा। गैर सरकारी संगठनों को भी व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।
29. दिव्याग व्यक्तियों को उच्च शिक्षा व व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में दाखिला लेने के लिए विश्व विद्यालयों, तकनीकी संस्थानों तथा उच्च शिक्षा के अन्य संस्थानों में पहुंच प्रदान की जाएगी।

अपनी उन्नति जानिए (check your progress)-

प्रश्न 7. **शिक्षा शिक्षा बिना बोझ के'** किस पाठ्यचर्या में बल दिया गया?

5.9 सारांश(Summary)

भारत सरकार द्वारा शिक्षा के विकास व सुधार हेतु समय-समय पर कमीशन की न्युक्ति की जाती रही है अत: सुधार की ऐसी दिशा में भारत सरकार ने शिक्षा के विकास और सुसंगठित राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली के विषय में परामर्श देने के लिय सन् 1964 में शिक्षा आयोग की नियुक्ति की| आयोग ने भारतीय शिक्षा के सम्पूर्ण क्षेत्र का गहन एवं विस्तृत अध्ययन किया| इस अध्ययन के फलस्वरूप भारतीयों की कुशलताओं एवं आकांक्षाओं, धारणाओं एवं मान्यताओं में क्रांतिकारी परिवर्तन करके इस देश के रुढिवादी, मध्यकालीन एवं शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी को दूर करने का प्रयास किया गया| क्योकि हमारे देश के नेता व शिक्षाविद्ध जानते थी कि शिक्षा का विकास किये बिना समाज का विकास सम्भव नहीं है| क्योकि हमारा देश गुलामी की दीवार तोड़कर बहुत दिनों के बाद आजादी की सास ली है| इसलिय शिक्षा का विकास तेजी से किया जाना चाहिय| आयोग ने अपने प्रतिवेदन में शिक्षा की राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के विषय में जो विचार अंकित किये , उनकों संसद के सदस्यों, विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों, राज्यों के शिक्षा मंत्रियों और भारतीय विश्वविद्यालयों के

उपकुलपतियों ने कुछ संशोधन के पश्चात स्वीकार किया | इसी के आधार पर भारत सरकार ने शिक्षा की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सरकारी प्रस्ताव के रूप में 24 जुलाई 1968 को जारी किया| स्वन्त्रत भारत की इस प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा-नीति में 17 कार्यक्रमों को सम्मिलित किया| इसके अंतर्गत शिक्षा के सब महत्वपूर्ण पक्षों, सिद्धांतों, स्तरों एवं संरचना को स्थान दिया गया और शिक्षा केआधारभूत लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को भी निर्धारित किया गया है| 1969 में केन्द्र की कांग्रेस सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की| इसमे निम्न कार्यक्रम पर विस्तार से चर्चा की गयी व उनकों लागू किया गया| वर्ष 1986 नई शिक्षा नीति लागू की गयी | जिसके द्वारा 10+2+3 की शिक्षा व्यवस्था को लागू किया गया| प्रत्येक जिले में डाएट की स्थापना की गयी| वर्ष 1992 इस शिक्षा नीति में परिवर्तन किया गया| साथ ही आज के समय में दिव्यंगो की समस्या को निदान करते दिव्यंगो के लिय राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाये गयी| राष्ट्रीय पुनर्वास संस्थान दिव्यांग बालको के लिय राष्ट्रीय स्तर पर सहायता व प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित कर रहा है|

5.10 शब्दावली (Glossary)

शिक्षा प्रशासन का विक्रेन्द्रीयकरण:- इस शिक्षा नीति के दसवें भाग में शिक्षा प्रशासन के विकेन्द्रीयकरण पर बल दिया गया है और राष्ट्रीय स्तर पर 'भारतीय शिक्षा सेवा', प्रान्तीय स्तर पर 'प्रान्तीय शिक्षा सेवा' और जिला स्तर पर 'जिला शिक्षा परिषद' के गठन की घोषणा की गई है।

5.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of practice Questions)

उत्तर 1. 14 जुलाई 1964 उत्तर 2. 22 कार्य टोलिया व दल उत्तर 3. 1 वर्ष उत्तर 4. 17 कार्यक्रमों

उत्तर 5. 1986 की शिक्षा नीति उत्तर 6. 74.04 उत्तर 7 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढांचा 2005

5.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची ((REFERENCES)

मित्तल, एम० एल०.(2008) *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक.* मेरठ: इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस.

शर्मा, सुरेन्द्र. कुमार.(2011)*आधुनिक भारतीय समाज में शिक्षा.* नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस.

राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाँचा 2005

इंटरनेट –राष्ट्रीय दिव्यांग शिक्षा नीति 2006

5.13 निबंधात्मक प्रश्न (Long Answer Types Question)

1. कोठारी आयोग से आप क्या समझते हो? कोठारी आयोग की नियुक्ति के कारण व प्रयोजन को विस्तार से लिखिए।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मूल तत्वों को विस्तार से लिखिए।
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 एवं संशोधित (1992) का प्रभाव व परिवर्तन को विस्तार से लिखिए।
4. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाचां (2005) की रूपरेखा में मुख्य क्या प्रस्ताव है? वर्णन कीजिए।
5. दिव्यांग बालकों के लिए शिक्षा के लिय क्या प्रावधान किये गये? विस्तार से लिखिए।

इकाई 6 - समावेशी शिक्षा (Inclusive Education)

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 समावेशी शिक्षा का अर्थ

6.4 समावेशी शिक्षा की आवश्यकतायें

6.5 समन्वित, समावेशी एवं विशिष्ट शिक्षा में अन्तर

6.6 समावेशी शिक्षा का मॉडल

6.7 समावेशी शिक्षा की विशेषताएँ

6.8 समावेशी शिक्षा के मूलतत्व

6.9 समावेशी शिक्षा के उद्देश्य

6.10समावेशी शिक्षा की अवधारणाएँ

6.11 प्रतिभाशाली बालक

6.1 प्रस्तावनाः-

आज का आधुनिक युग परिवर्तन का युग है। आज का नागरिक पहले की अपेक्षा जागरूक और सचेत है। शिक्षित वर्ग अपने कर्तव्यों के साथ अपने अधिकारों को भी प्राप्त करने के लिए पूरी तरह से सजग एवं सचेत है। **21**वीं सदी में समावेशी शिक्षा के विषय पर अधिक बल दिया गया है। इसलिए हम विषय के बारे में परिचित करवाना अन्त आवश्यक हो गया है। शिक्षक ही एक ऐसा व्यक्तित्व है जो अपने विद्यार्थी की ओर अभिभावना को जागृत के यथार्थ से अवगत करा सकता है। इन बातों को ध्यान में रचते हुए व अन्य विद्यालयों ने ठण्म्क के पाठ्यक्रम में समावेशी शिक्षा को सम्मिलित किया गया है। यह पुस्तक समावेशी भिन्न पर पूर्ण रूप से प्रकाष जालेगी और इस पुस्तका को पठन के बाद विद्यार्थी समान व अन्य लोगों की शिक्षा के विभिन्न उदेश्य संबंधी अवगत कटा सकेगे।

6.2 उद्देश्यः-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

1. समावेशी शिक्षा को जानेगे।
2. समावेशी शिक्षा व विशेष शिक्षा में विभिन्नता जानेगें।
3. समावेशी शिक्षा की परिभाशा व प्रत्यय व मॉडल जानेगें।

6.3 समावेशी शिक्षा का अर्थः-

विशिष्ट, एकीकृत एवं समावेशी शिक्षा

शिक्षा शब्द अत्यधिक व्यापक होता है जिसका उपयोग विभिन्न अर्थों में किया जाता है। शिक्षा मनुष्य के समुचित विकास की अत्यन्त सहायक सिद्ध होती है। इसके द्वारा बालक की अर्न्तनिहित शक्तियों को बाहर निकाला जाता है। शिक्षा कभी न खत्म होने वाली प्रक्रिया है जो जीवन पर्यन्त चलती है। शिक्षा शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया जाता है। जो निम्न प्रकार से हैं-

1. शिक्षा निरन्तर विकास की प्रक्रिया है।
2. शिक्षा एक विनियोग है।
3. शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया है।
4. शिक्षा एक अध्यापक प्रशिक्षण।
5. शिक्षा एक सामाजिक परिवर्तन।

1. **शिक्षा निरन्तर विकास की प्रक्रिया है** -शिक्षा को विकास की प्रक्रिया माना गया है। शिक्षा के द्वारा बालक का सामाजिक, मानसिक, संवेगात्मक तथा शारीरिक किया जाता है। इन सभी विकासों के द्वारा बालक आगे बढ़ पाता है। शिक्षाशास्त्रियों तथा दर्शनशास्त्रियों में भी शिक्षा को विकास की प्रक्रिया माना है। यहाँ उनमें से कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं-

   गाँधीके अनुसार- ''शिक्षा से मेरा अर्थ उस प्रक्रिया से है जो बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के रूपों का सर्वांगीण विकास करें।''

2. **शिक्षा एक विनियोग है;** -विनियोग से तात्पर्य है लागत से, अधिक उत्पादन अर्थात् विनियोग का अर्थ है किसी भी मद को जो व्यय किया जाता है लागत लगाई जाती है उससे अधिक पूँजी प्राप्त हो उसे विनियोग कहा जाता है। अभिभावक शिक्षा पर इसलिये व्यय

करते हैं क्योंकि उसके बदले जो भी प्राप्त हो वह लागत से अधिक हो इसलिये माता-पिता, बालक व बालिकाओं की शिक्षा पर व्यय करने के लिये हमेशा तत्पर रहते है।

3. **शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया है;** व -शिक्षा भविश्य के निर्माण के लिये दी जाती है। शिक्षा द्वारा ही नये समाज का निर्माण होता है तथा इसी समाज नई शिक्षा प्रक्रिया की व्यवस्था करता है । शिक्षा की प्रकृति भविष्यात्मक होती है।

4. **शिक्षा एक अध्यापक प्रशिक्षण;** -शिक्षक को प्रशिक्षण दिये जाने वाली संस्थाएँ शिक्षा महाविद्यालय के नाम से जाती है। इन प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षण में सिद्धान्त अथवा शिक्षण अभ्यास पर अत्यधिक बल दिया जाता है। इन सभी विद्यालयों का मुख्य उदेश्य प्रभावषाली अध्यापक तैयार किया जाना है। बी. एड. अथवा एम. एड. कक्षाओं की व्यवस्था करने वाली संस्थाओं को शिक्षा विभाग पृथक् रूप में रखते हैं। इस प्रकार के शिक्षा विभागों का मुख्य उदेश्य अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाना होता हैं।

5. **शिक्षा एक सामाजिक परिवर्तन ;** -आज के युग में सामाजिक परिवर्तन शिक्षा द्वारा लाया जा सकता है। इसके अलावा शिक्षा के द्वारा ही सामाजिक समस्याओं पर भी नियन्त्रण लाया जा सकता है। शिक्षा के द्वारा ही नारी शिक्षा तथा सामाजिक रूढ़िवादिता का अन्त किया गया है। अतः बच्चों में बचपन से ही समाजीकरण का समावेश किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। अतः शिक्षा एक सामाजिक परिवर्तन का मुख्य यन्त्र माना गया है।

समावेशी शिक्षा के द्वारा सर्वप्रथम छात्रों के बौद्धिक शैक्षिक स्तर की जाँच की जाती है, तत्पष्चात् उन्हें दी जाने वाली शिक्षा का स्तर निर्धारित किया जाता है। अतः यह एक ऐसी शिक्षा प्रणाली है, जो कि विशिष्ट क्षमता वाले बालकों हेतु निर्धारित की जाती है। अतः इसे समावेशी अथवा समावेशी शिक्षा का नाम दिया गया।

स्टीफन और ब्लैकहर्ट के अनुसार- ‘‘शिक्षा की मुख्य धारा का अर्थ बाधित (पूर्ण रूप से अपंग नहीं) बालकों की सामान्य कक्षाओं में शिक्षण व्यवस्था करना है। यह समान अवसर मनोवैज्ञानिक सोच पर आधारित है जो व्यक्तिगत योजना के द्वारा उपयुक्त सामाजिक मानकीयकरण और अधिगम को बढ़ावा देती है।’’

यरशेल के अनुसार- समावेशी शिक्षा के कुछ कारण योग्यता, लिंग, प्रजाति, जाति, भाषा, चिन्ता स्तर, सामाजिक-आर्थिक स्तर, दिव्यांगता, लिंग व्यवहार या धर्म से सम्बन्धित होते है। शिक्षाशास्त्री के अनुसार- ‘‘समावेशी शिखा को एक आधुनिक सोच की तरह परिभाषित किया जा कसता है, जो कि शिक्षा को अपने से सिमटे हुए दृष्टिकोण से मुक्त करती है ऊपर उठने के लिये प्रोत्साहित करती है।

दूसरे शब्दों में, समावेशी शिक्षा अपवर्जन के विरूद्ध एक पहल है।

शिक्षाशास्त्री के अनुसार -''समावेशी शिक्षा अधिगम के ही नहीं, बल्कि विशिष्ट अधिगम के नये आयाम खोतली है।''

समावेशी शिक्षा एक सतही प्रक्रिया नहीं है, बल्कि मनुष्यों के विकास के लिये मनुष्यों के द्वारा किये गये कुण्ठामुक्त प्रयास है।

समेकित शिक्षा का अर्थ

समेकित शिक्षा के स्वरूप की रचना विभिन्न प्रतिभाशाली बालकों की विशेष आवश्यकता को ध्यन में रखते हुए विभिन्न विकृत्तियों से सम्बन्धित सेवायें उदाहरण के लिए यातायात, चिकित्सा, मनोवैज्ञानिक निर्धारण, भौतिक, शारीरिक और व्यवसायिक प्रशिक्षण तथा परामर्श इत्यादि की भी आवश्यकता होती है। समेकित शिक्षा के क्षेत्र में उपरोक्त संसाधन अत्यन्त आवश्यक हैं, जो शिक्षा को अत्यधिक प्रभावी बनाने में सक्षम होते हैं।

6.4 समावेशी शिक्षा की आवश्यकताएं -

समावेशी शिक्षा वर्तमान समाज की एक अपरिहार्य आवश्यकता बन गई है। वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह विविध प्रकार के विभेदन एवं असमानताओं के कारण हुई रिक्तियों को भरने में सहायक है। समावेशी शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता हैः

1. शिक्षा की सर्वव्यापकता; शिक्षा विशेष रूप से प्राथमिक शिक्षा को तभी सार्वभौमिक बनाया जा सकता है यदि प्रत्येक बालक के गुणों, स्तर तथा आवश्यकताओं को दृष्टि गत रखकर शिक्षा का विस्तार किया जाए। समावेशी इस अवधारणा को मुख्य रखते हुए पाठ्यक्रम निर्धारित करने पर बल देती है। सरकार ने इस दिशा में अनेक नीतियाँ एवं योजनाओं का निर्माण किया है। समावेशी शिक्षा 'सार्वभौमिक शिक्षा' के लिए किए जा रहे प्रयासों में योगदान देती है।

2. संवैधानिक उत्तरदायित्व का निर्वहन; भारत एक प्रजातन्त्र गणराज्य है। यहाँ शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार किया गया है, जहां जाति, रंग-भेद, धर्म, लिंग-भेद आदि का कोई स्थान नहीं है। किसी भी शिक्षा प्रणाली में यह निर्णय करने का अधिकार किसी भी को नहीं है कि कौन शिक्षा ग्रहण करेगा तथा कौन नहीं। समावेशी शिक्षा बिना किसी विभेदन के सभी को शिक्षा प्राप्ति का अवाह्न करती है।

3. राष्ट्र का विकास;क्मअमसवचउमदज व िजीम छंजपवदद्धरू देश की खुशहाली एवं संगठन के लिए विकास एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आवश्यकता है, जिसमें सभी नागरिकों के

यथोचित योगदान की सदैव जरूरत होती है। लेकिन अपनी क्षमता एवं समर्थ्य की उपयुक्तता की अनुभूति एवं प्राप्ति के बिना किसी देश की एक बहुत बड़ी संख्या उसके नवनिर्माण में कैसे तथा कितनी सकारात्मक भूमिका निभा सकती है। यूनेस्को ने जनेवा में अपने सम्मेलन (नवम्बर, **2008**) में यह स्पष्ट किया कि प्राथमिक शिक्षा के आशातीत विस्तार के बावजूद भी **72** मिलीयन से अधिक निर्धनता एवं सामाजिक हाशिए स्तर;उंतहपदंसप्रमकद्ध पर स्थित बच्चे किसी भी स्कूल में दाखिला नहीं दे पाए हैं स्पश्ट है कि शिक्षा से वंचित व्यक्तियों से राश्ट्र के विकास में योगदान की अपेक्षा कैसे की जा सकती है। राष्ट्र के विकास में योगदान से पहले करना आवश्यक होता है। समावेशी शिक्षा जिस के लिए एक उत्तम साधन है।

4. निर्धनता-चक्र की समाप्ति; भारत जैसे देश में शिक्षा को ज्ञान संग्रहण के साथ-साथ जीविकोपार्जन का एक उपयुक्त माध्यम समझा जाता है और इसकी आवश्यकता भी है। शिक्षित व्यक्ति कोई भी रोजगार करे-हस्तकौशल, अर्ध-कौशल अथवा कौशल पूर्ण उसे अपने कर्त्तव्यों एवं अधिकारों का ज्ञान होता है। वह षोशण से बच सकता है तथा अपना एवं अपने परिवार का भरण-पोषण भी कर सकता है तथा अपना एवं अपने परिवार का भरण-पोषण भी कर सकता है। लेकिन एक अशिक्षित व्यक्ति अपनी असमर्थता के कारण लाचार होता है। परिणामस्वरूप गरीबी एवं उत्पीड़न का चक्र ज्यों का त्यों बना रहता है। इस दृष्टि से शिक्षा का प्रसार हमारी एक बहुत महत्वपूर्ण आवष्यकता है तथा समावेशी शिक्षा इस दिशा में एक बेहतर प्रयास है।

5. शिक्षा का स्तर बढ़ाना; समावेशी शिक्षा न केवल ‘सब के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा’ की अवधारणा पर आधारित है। इस शिक्षा प्रणाली में सभी बच्चों के दैहिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक-साँस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के मूलभूत सिद्धान्त पर पाठ्यक्रम तथा शिक्षण विधियों को लचीला बनाने पर विषेश बल दिया गया है, क्योंकि इस प्रावधान से ही बच्चों का सर्वपक्षीय विकास सम्भव हो सकता है इस पद्धति में शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया को इस प्रकार नियोजित किया जाता है जिससे प्रत्येक बालक का इश्टत्तम विकास होताहै तथा वह अपनी क्षमताओं के सम्पूर्ण उपयोग से उपलब्धि प्राप्त करता है। स्पष्ट है कि ऐसी शिक्षा प्रणाली से गुणात्मक शिक्षा का उद्बोधन होगा।

6. सामाजिक समानता का उपयोग एवं प्राप्ति ; अधिकारों तथा सम्भावनाओं से लाभान्वित होने की समानता का कार्यक्षेत्र समावेशी शिक्षा है। संवैधानिक समानता के सिद्धान्तों का व्यक्तियों तथा समाज को तभी लाभ हो सकता है जब उन्हें कार्यान्वित किया जाए तथा विद्यालय इस दृष्टि से सबसे उपयुक्त स्थान है। जनेवा में हुए अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक सम्मेलन (नवम्बर, **2008**) में समावेशी शिक्षा पर दस प्रश्न’ के अन्तर्गत यह स्पष्ट संकेत दिया गया कि ‘स्कूल ही एक ऐसा स्थान है जहाँ सभी बच्चे भागीदार होते हैं तथा सभी के साथ एक

समान व्यवहार किया जाता है।' ; अभिप्राय यह है कि सामाजिक समानता का पहला पाठ स्कूलों में पढ़ाया जाता है। समावेशी शिक्षा इस के लिए अत्यन्त उपयुक्त स्थल है क्योंकि इस में रंग-भेद, जाति, समुदाय, धर्म, भाषा, लिंग तथा दैहिक एवं मानसिक गुणों की विभिन्नता के कारण किसी भी बालक को शिक्षा ग्रहण करने से वंचित नहीं किया जा सकता। रोजी-रोटी कमाने की दौड़ में 'आषक्त' व्यक्तियों के विषय में और भी अधिक गम्भीरता से विचार करने तथा प्रावधान निष्चित करने की आवश्यकता है। समावेशी शिक्षा प्रणाली के द्वारा समाज के आशक्त, व्यवहारिक रूप से फायदा उठाने की आशा दी जा सकती है।

7. समाज के विकास एवं सषक्तिकरण के लिए; व्यक्तियों का संयोग समाज का निर्माण करता है। व्यक्ति समाज के भवन-निर्माण की नींव है। व्यक्तियों की प्रगति, परिश्रम, सूझबूझ एवं प्रयत्नों से उनका व्यक्गित जीवन संवरता है जिसमें शिक्षा का योगदान सब से अधिक महत्व रखता है। वस्तुतः समाज का विकास एवं सशक्तिकरण उसके सुयोग्य एवं सुशिक्षित नागरिकों पर अधिक निर्भर करता है। वर्तमान समय की माँग है कि शिक्षा के माध्यम से प्रत्येक बालक को सुयोग्य एवं सूझवान नागरिक बनाने के प्रयत्न किए जाएँ ताकि वह अपनी योग्यता एवं बौद्धिक क्षमता का प्रयोग समाज कल्याण के लिए कर सके। समावेशी शिक्षा इस दिषा में एक दूरदर्शितापूर्ण उपयोगी प्रयास है।

8. आधुनिकत्तम तकनीकों का प्रयोग ; कमप्यूटर, इंटरनेट, सेटेलाईट चैनल आदि जैसे आधुनिक उपकरणों का प्रयोग करना अब एक आम बात हो गई है। लेकिन बहुत से विद्यालयों में शिक्षण अभी भी चाक एवं श्यामपट की सीमा में ही बन्द है। अब समय आ गया है जब हम सभी बालकों को शिक्षा में आधुनिकतम सहायक तकनीकों से परिचित करवाएँ। उन में इन के सम्बंध में तथा शिक्षा में इन के महत्त्व सम्बंधी ज्ञान का संचार किया जाए। शिक्षा के प्रसार के बिना ऐसर कर पाना सम्भव नहीं है। यह आवश्यक है कि आज का प्रत्येक बालक इन साधनों की जानकारी रखे तथा इनके प्रयोग का बोध भी प्राप्त करे। समावेशी शिक्षा में इन साधनों के प्रयोग का प्रावधान रखा गया है। जो समय पाकर शिक्षा में एक मील-पत्थर की तरह साबित होगा।

9. अच्छी नागरिकता के उत्तम गुणों का विकास; यह विश्वास जताया जाता है कि समावेशी शिक्षा बालकों में अच्छी नागरिकता के लिए आवश्यक गुणों का विकास करती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह शिक्षा प्रणाली अपने पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों तथा स्कूला एवं कक्षा में तथा इन से बाहर पारस्परिक अपने पाठ्यक्रम, शिक्षण तथा व्यवहार में गतिशीलता तथा समायोजन पर बल देती है। विविध विशेषताओं वाले बालकों की प्रति शिक्षक की अभिवृति तथा उसके व्यवहार में लचीलापन की अपेक्षा की जाती है। इसके अतिरिक्त समावेशी शिक्षा की शिक्षण रणनीतियाँ ;ैजतंजमहपमेद्ध भी गुणवत्ता के पक्ष से मजबूत

होने के साथ-साथ अच्छी नागरिकता के गुणों के विकास में सहायक हो सकती है जैसेः सहयोगी-अधिगम ;ब्वववचमतंजपअम स्मंतदपदहद्धतथा साथी-माध्यम से शिक्षा ;च्ममत ज्नजवतपदहद्ध के प्रक्रम बालकों में सहयोग, सहानुभति, परस्पर उपयुक्त अन्तःक्रिया, सहनशीलता, एक-दूसरे की आवश्यकता को समझना तथा आदर करना, आपसी विचार-विमर्श तथा समूह में कार्य करना आदि गुणों का विकास करते है, जिन्हें अच्छी नागरिकता के उत्तम लक्षण माना जाता है।

कुछ शिक्षाविद् विशिष्ट शिक्षा के पक्षधर नहीं है। उनके अनुसार यह शिक्षा के अवसरों के समान नहीं है तथा बालकों के विचारों में भिन्नता पैदा होती है। सामान्य कक्षाएँ अपंग बालकों में हीन भावना उत्पन्न करती है। कुछ ही समय पहले, मनोवैज्ञानिकों ने विचार दिया है कि समावेशी शिक्षा हमारे सामान्य विद्यालयों में दी जाये जिससे सभी बालकों को शिक्षा के समान अवसर मिले। शिक्षाविद् भी इस प्रकार की शिक्षा के पक्षधर हैं तथा इसे निम्न कारणों से उचित बताते हैं-

1. **सामान्य मानसिक विकास सम्भव हैं**- विशिष्ट शिक्षा में मानसिक जटिलता मुख्य है। अपंग बालक अपने आपको दूसरे बालकों की अपेक्षा तुच्छ तथा हीन समझते हैं जिसके कारण उनके साथ पृथकता से व्यवहार किया जा रहा है। समावेशी शिक्षा व्यवस्था में, अपंगों को सामान्य बालकों के साथ मानसिक रूप से प्रगति करने का अवसर प्रदान किया जाता हैं। प्रतयेक बालके सोचता है कि वह किसी भी प्रकार से किसी अन्य बच्चे से तुच्छ रहा है। इस प्रकार समावेशी शिक्षा पद्धति बालकों की सामान्य मानसिक प्रगति को अग्रसर करती है।

2. **सामाजिक एकीकरण को सुनिश्चित करती है**- अपंग बालकों में कुछ सामाजिक गुण बहुत संगत होते हैं। जब वे सामान्य बालकों के साथ शिक्षा पाते हैं। अपंग बालक अधिक संख्या में सामान्य बालकों का संग पाते हैं तथा एकीरणता के कारण वे सामाजिक गुणों को अन्य बालकों के साथ ग्रहण करते हैं। उनमें सामाजिक, नैतिक गुण, प्रेम सहानुभूति, आपसी सहयोग आदि गुणों का विकास होता है। विशिष्ट शिक्षा-व्यवस्था में छात्र केवल विशिष्ट ध्यान ही नहीं परन्तु विस्तार में शिक्षण तथा सामाजिक स्पर्धा की भावना विकसित होती है।

3. **समावेशी शिक्षा कम खर्चीली है**- निःसन्देह विशिष्ट शिक्षा अधिक महँगी तथा खर्चीली है। इसके अलावा विशिष्ट अध्यापक एवं शिक्षाविदों के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम भी अधिक समय लेते हैं। दूसरे दृष्टिकोण से समावेशी शिक्षा कम खर्चीली तथा लाभदायक है। विशिष्ट शिक्षा संस्था को बनाने तथा शिक्षण कार्य प्रारम्भ करने के लिये अन्य कई स्रोतों से भी सहायता लेनी पड़ती है; जैसे- प्रशिक्षित अध्यापक, विशेषज्ञ, चिकित्सक आदि। अपंग बालक की सामान्य कक्षा में शिक्षा पर कम खर्च आता है।

4. **समावेशी शिक्षा के माध्यम से एकीकरण सम्भव है-** विशिष्ट शिक्षण व्यवस्था की अपेक्षा समावेशी शिक्षण व्यवस्था में सामाजिक विचार-विमर्श किये जाते हैं, अर्थात उच्चारण अधिक है। अपंग तथा सामान्य बालक में सामान्य शिक्षा के अन्तर्गत एक प्राकृतिक वातावरण बनाया जाता है। इस वातावरण में अपने सहपाठियों से सीखना, स्वीकार करना तथा स्वयं को दूसरों द्वारा स्वीकार कराया जाना समावेशी शिक्षा द्वारा सम्भव है।

5. **शैक्षिक एकीकरण सम्भव है** - शैक्षिक योग्यता सामान्यता समावेशी शिक्षा के वातावरण द्वारा सम्भव है। शिक्षाविदों का ऐसा विश्वास है कि विशिष्ट शिक्षा संस्था एक बालक के प्रवेश के पश्चात् समान शैक्षिक योग्यता रखने वाले अपंग बालक उनके गुणों को ग्रहण करता है। शिक्षाविदों को यह भी मालूम होता है कि विशिष्ट विद्यालयों में छात्र तथा अपंग छात्र शिक्षा के पूर्ण ग्राही (ग्रहण करने वाले) नहीं होते। सामान्य विद्यालयों में बाधित छात्रों को प्रवेश दिलाने के कारण, वह ठीक प्रकार से षिक्षण ग्रहण करने से असमर्थ होते हैं। एक प्रकार से कहा जा सकता है कि लचीले वातावरण तथा आधुनिक पाठ्यक्रम के साथ समावेशी शिक्षा शैक्षिक एकीकरण लाती है।

6. **समानता के सिद्धानत का अनुपालन करना है-** भारत में, सामान्य शिक्षा व्यापक रूप से विस्तार की संवैधानिक व्यवस्था की गई है और साथ-साथ शारीरिक रूप से बाधित बालको के लिये शिक्षा को व्यापक रूप देना भी संविधान के अन्तर्गत दिया गया है। समावेशी शिक्षा के वातावरण के माध्यम से समानता के उद्देश्य की भी प्राप्ति की जानी चाहिये, जिससे कोई भी छात्र अपने आपको दूसरों की अपेक्षा हीन न समझे।

7.5 समन्वित, समावेशी एवं विशिष्ट शिक्षा में अन्तरः-

विशिष्ट शिक्षा	समन्वित शिक्षा	समावेशी शिक्षा
1. विशिष्ट शिक्षा विशिष्ट व सामान्य बालकों को अलग–अलग शिक्षा प्रदान करती है।	समन्वित शिक्षा व विशिष्ट व सामान्य बालकों को साथ–साथ व समान रूप से शिक्षा प्रदान करती है।	समावेशी शिक्षा प्रतिभाशाली व सामान्य बालकों को एक साथ पूर्ण समय में शिक्षा प्रदान करती है।
2. विशिष्ट शिक्षा भेदभाव के सिद्धान्त पर आधारित है।	समन्वित शिक्षा समानता के सिद्धान्त पर आधारित है।	समावेशी शिक्षा नये एवं पुराने विचारों दोनों के रूप में है।
3. विशिष्ट शिक्षा, शिक्षा प्रदान करने का एक पुराना विचार है।	समन्वित शिक्षा विशिष्ट शिक्षा का नवीन व प्रगतिशील रूप है।	समावेषी शिक्षा नये एवं पुराने विचारों दोनों के रूप में है।
4. विशिष्ट शिक्षा अधिक महँगी व खर्चीली शिक्षा है।	समन्वित शिक्षा कम खर्चीली होती है।	समावेशी शिक्षा कम खर्चीली होती है।
5. विशिष्ट शिक्षा कुछ–कुछ चिकित्सा का रूप रखती है।		

6. यह व्यवस्था अपंग तथा सामान्य बालकों अलग–अलग करती है।	समन्वित शिक्षा का आधार मनोवैज्ञानिक है। इस व्यवस्था में शिक्षा व अन्य क्षेत्रों में अपंग तथा सामान्य व बालकों के साथ–साथ समान रूप से रखा जाता है।	समावेशी शिक्षा वैज्ञानिक आधार पर है।

समावेशी शिक्षा सभी नागरिकों का समान अधिकार को पहचाने और सभी बालकों को समावेशी आवश्यकताओं के साथ-साथ समान रूप से शिक्षा के समान अवसर देने को कहता है तथा उन्हें कम नियन्त्रित तथा अधिक प्रभावशाली वातावरण में शिक्षा देनी चाहिये। कम प्रतिबन्धित वातावरण जो बाधित बालकों को चाहिये केवल सामान्य शिक्षण संस्थाओं में दिया जाना चाहिये। समावेशी शिक्षा शारीरिक तथा मानसिक रूप से बाधित बालकों को सामान्य बालकों के साथ सामान्य कक्षा में शिक्षा प्राप्त करना विशिष्ट सेवाएँ देकर विशिष्ट आवश्यकताओं को प्राप्त करने में सहायता करती है।

समावेशी शिक्षा में निम्न प्रक्रियाएँ हैं-

1. सामान्यीकरण

2. संस्थारहित शिक्षा

3. न्यूनतम प्रतिबन्धित पर्यावरण एकीकृत

1. **सामान्यीकरण -** सामान्यीकरण से अभिप्राय ऐसी प्रक्रिया और प्रयत्नों से है जिनके द्वारा विशेष तथा अपंग बच्चों की शिक्षा और जीवन जीने के लिये प्रयोग में आने वाले पर्यावरण को सामान्य शिक्षा एवं सामान्य पर्यावरण तुल्य बनाना है। चाहे बालक की अपंगता का रूप और स्तर किसी भी प्रकार का हो, सामान्यीकरण का उद्देश्य यह है कि बालक अपनी शिक्षा और जीवन के पर्यावरण में जहाँ तक सम्भव हो सके, सामान्य बच्चे जैसा अनुभव करे। सामान्यीकरण का विचारधारा ने ही शिक्षा के क्षेत्र में न्यूनतम प्रतिबंधित पर्यावरण एवं मुख्यधारा के प्रत्ययों को जन्म दिया।

2. **संस्थारहित शिक्षा** - अपंग और दिव्यांग बच्चों की अपंगता को अतिरंजित रूप में प्रदर्शित करते हुए, उन क्षतियुक्त बच्चों की देख-रेख करने और उन्हें षिक्षित करने के नाम पर चलने वाली संस्थाओं की विचारधारा को दिखावे और ढोंग पर रोक लगाने के लिये यह शब्द प्रयोग में आया। एक तरह से यह शब्द संस्थान सम्बन्धी विचारधारा के विरोध को प्रकट करने वाला संकेतक शब्द है। इस पारिभाषिक शब्द का अभिप्राय अपंग बालकों को

संस्थानों से बाहर निकलकर दूसरे पर्यावरणों में उपस्थित करना है। संस्थान रहित शिक्षा की विचारधारा ने ही शिक्षा के क्षेत्र में सामान्यीकरण आन्दोलन को जन्म दिया।

3. **न्यूनतम प्रतिबन्धित पर्यावरण एकीकृत**- इस प्रत्यय से अभिप्राय ऐस पर्यावरण से है जिसके माध्यम से विषिष्ट तथा अपंग बच्चों के सीखने और जीवन जीने में आये अवरोधों को कम से कम किया जा सके। ऐसा करने के लिये हमें न्यूनतम प्रतिबन्धित पर्यावरण को इस प्रकार से ढ़ालना होगा कि वह सामान्य पर्यावरण निर्मित हो जाये जिसमें विशेषता शून्य एवं अपंगता रहित है और संजीवतापूर्ण जीवन की आनन्द उठाती हैं।

6.6 समावेशी शिक्षा का मॉडलः-

प्रत्येक कार्य को करने हेतु व्यवस्था बनाई जानी अति आवष्यक होती है। इस प्रकार ही समावेशी शिक्षा प्रदान करने हेतु कुछ व्यवस्था बनाई जानी अति अनिवार्य होती है। विशिष्ट अथवा समावेशी शिक्षा हेतु कुछ विशेष मॉडल बनाये गये हैं जिनके द्वारा निम्नलिखित प्रकार से शिक्षा प्रदान की जाती है-

1. **सांख्यिकीय मॉडल** - सांख्यिकीय मॉडल की उत्पत्ति का कारण है**,** व्यक्तिगत विभिन्नता जिसके कारण व्यक्तियों में तथा बालकों में अन्तर पाये जाते हैं। यह अन्तर ही बालकों की विशिष्टता के विशय में बताते हैं। विभिन्न मनोवैज्ञानिको के अनुसार कभी भी दो बालक एक समान नहीं होते हैं उनमें प्रायः कुछ न कुछ अन्तर अवश्य पाये जाते हैं। यह अन्तर तीन सिद्धान्तों पर आधारित होते हैं-

यदि एक समरूप समूह के बालकों के लक्षणों का मापन किया जाए तो उसका वितरण सामान्य वक्र के समान होगा रेखाचित्र। में सामान्य वक्र के बीच मे पड़ी लम्बवत् रेखा यह बताती है कि सामान्य बालक वे हैं जो इस बिन्दु पर पड़ते हैं। इससे हटने वाले समस्त बालक असामान्य हैं। परन्तु इस प्रकार तो प्रायः सभी बालक सामान्य से भिन्न हो जाएंगे। अतः सामान्य वक्र से बाएं छोर पर पड़ने वाले **10-10**ः बालकों को औसत से भिन्न माना जा सकता है। इन **20**ः बालकों को विशिष्ट बालकों की संज्ञा दी जा सकती है। यह भिन्नता अन्तर व्यक्तिगत है।

(अधिकतर बालक सामान्य होते हैं। उनके दोनों और असामान्य या विषिष्ट बालक होते हैं।)

बालकों में सभी लक्षमणों में धनात्मकता पाई जाती है। परन्तु फिर भी यह सम्भावना होती है कि बालक शारीरिक तथा मानसिक रूप से अलग-अलग हो सकते हैं।

यदि बालकों के शारीरिक लक्षणों को एक समान देखा जाये तो भी लक्षणों का वितरण रेखाचित्र। के ही समान हो जायेगा। यानि कि बालको के **30**ः लक्षण अन्य से भिन्नता लिये होते हैं। यह अन्त व्यक्तिगत भिन्नता कहलाती है।

2. **मौखिक संचार मॉडल -** मौखिक संचार में भिन्न बालक मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं। प्रथम वाच्य क्षतियुक्त बालक हैं। इस प्रकार के बालकों में किसी न किसी प्रकार के बालेने का दोश होता है, जैसे-हकलाना, स्वरदोश दूसरे भाग में भाग में भाषा दिव्यांग बालक हैं। ये वे बालक हैं जो उस भाषा को नहीं जानते जो कि उननके वातावरण यथा- स्कूल, बाजार में बोली जा रही है। साथ ही, भाषा दिव्यांग बालकों के अंतर्गत वे बालक भी आते हैं जो मातृभाषा भी ठीक से नहीं बोल पाते हैं। यद्यपि मौखिक संचार मंे भिन्नता का कारण बालकों में भिन्न-भिन्न होता है, तथापि इस श्रेणी में आने वाले बालकों को एक ही प्रमुख समस्या होती है। वह है- अपने विचारों को दूसरो तक न पहुँचा पाना। इस कारण निम्नलिखित परिणाम सामने आते हैं-

1. संवेगात्मक रूप से अव्यवस्थित
2. सीखने में मन्द गति
3. व्यक्तित्व संबंधी दोष
4. पिछड़ापन
5. भग्नाशा का अनुभव करना

उपर्युक्त कारणों से बालक की शैक्षिक उपलब्धि नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है। इससे उसका व्यावसायिक जीवन में भी प्रभावित होता है। अतः विद्यालयों में इस प्रकार के विशिष्ट बालकों हेतु विशेष प्रोग्राम होने चाहिए।

3. **चिकित्सीय अथवा जीव-विद्या मॉडल**- चिकित्सीय अथवा जीव-विद्या से संबंधित मॉडल के अन्तर्गत वह बालक आते हैं जो कि शारीरिक रूप से अक्षम होते हैं। यह शारीरिक भिननता कई कारणों के फलस्वरूप हो सकती है। यह कारण निम्नलिखित हैं-

1. कई बार आनुवांषिक कारणों की वजह से भी शारीरिक अक्षमता आ जाती है।
2. जन्मोपरान्त चोट के कारण भी शारीरिक अक्षमता आ जाती है।
3. जनम से समय होने वाली क्षति के कारण भी शारीरिक अक्षमता आ जाती है।
4. जनम पूर्व क्षति अर्थात् जन्म से पूर्व यदि गर्भवती महिला कोई दवा खा ले अथवा अन्य कोई ऐसे कार्य कर ले जिनमे गर्भ से समस्या उत्पन्न हो जाए, तो यह जनम पूर्व क्षति कहलाती है।

अर्थात् शारीरिक रूप से भिन्न बालकों को प्रायः लोग मानसिक रूप से कमजोर मान लेते हैं। परन्तु वास्तविकता में ऐसा नहतीं होता है। अतः इनके लिए विषेष शिक्षा का आयोजन इनकी शारीरिक कमी को ध्यान में रखकर करना चाहिए, न कि मानसिक स्तर को। परन्तु इनके मनोविज्ञान को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है।

4. **सांस्कृतिक मॉडल** - सांस्कृतिक रूप से अलग बालकों में मुख्यतः अधिगम असुविधायुक्त तथा सांस्कृतिक रूप से अल्पसंख्यक तथा वंचित बालक आते हैं। अधिगम असुविधायुक्त बालकों को वे सब सुविधाएँ नहीं प्राप्त होती हैं जो प्रायः सामान्य बालकों को प्राप्त हो जाती हैं। अतः इनका अधिगम स्तर गिर जाता है। इससे उनकी शैक्षिक उपलब्धि नकारात्मक ढंग से प्रभावित होती है। सांस्कृतिक रूप से भिन्न बालक वे नहीं हैं जिनकी अपनी कोई संस्कृति नहीं होती हैं, बलिक ये वे हैं जो उस परिवेश से, जिसमें वे रह रहे हैं, एक संस्कृति को रखते हैं। ऐसे बालक समाज के उन अनेकानेक बालकों से भिन्न होते हैं। जिनकी संस्कृति समान है। यह विशिष्टता कई सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षिक समस्याओं को जन्म देती है। अतः सांस्कृतिक रूप से भिन्न बालक भी विशेष शिक्षा का अधिकारी है क्योकि वह अन्य बालको ंसे भिनन इस कारण विशिष्ट है। वचन एक सामाजिक-आर्थिक समस्या है। सामाजिक- आर्थिक कारणों से वचन की स्थिति उत्पन्न होती है। एक वंचित बालक जीवन से कई रूप इसलिए नहीं देख पाता कि वह सामाजिक - आर्थिक रूप से वंचित होता है। ऐसे वंचित बालक भी विशिष्ट बालकों की श्रेण्ी मंे आते हैं। इनके लिए सामान्य शिक्षा के साथ-साथ अतिरिक्त शैक्षिक प्रावधानों की भी आवश्यकता है।

5. **मनोसामाजिक मॉडल** - मनोसामाजिक रूप से अलग-अलग प्रवृत्ति के प्रत्येक बालक इस श्रेणी में आते हैं एक संवेगात्मक रूप से परेशान बालक को अपनी भावनाओं के प्रदर्शन में कठिनाई अनुभव होती है। ऐसे बालक भावनाओं को सही रूप से प्रबंधित नहीं कर पाते, अतः संवेगात्मक असंतुलन का प्रदर्शन करते हैं। इस प्रकार न केवल वे अपने लिए बलिक अन्य लोगों के लिए भी समस्या उत्पन्न करते हैं। प्रायः यह देखने में आता है कि संवेगात्मक रूप से परेषान बालकअन्य लोगों से परेशान रहते हैं, उन्हें समाज और इसके नियम परेशान करते हैं। संवेगात्मक रूप से परेषान बालकों की संख्या काफी होती है। इसके साथ यह समस्या भी है कि ऐसे बालक का पता नहीं चल पाता। सामाजिक रूप से कुसमायोजित बालक अपने परिवार के सदस्यों, मित्रों, सहयोगियों और समाज के विभिन्न सदस्यों से नियमानुसार व सहज ढंग से अन्तर्क्रिया नहीं कर पाता है। इसके कारण वह सामाजिक रूप से स्वीकृत विचारों तथा गुणों को सीखने से वंचित रह जाता है। इसके दुष्परिणाम उसके चरित्र, व्यक्तित्व, कार्यप्रणाली तथा व्यवसाय में देखने को मिलते हैं। अतः मनोसामाजिक रूप से भिन्न बालक एक ऐसा विषिष्ट बालक है जिसे विषेष ध्या नही नहीं विशेष शिक्षा की भी आवश्यकता है। मनोसामाजिक भिन्नता का परिणाम है। दूसरे शब्दों में संवेगात्मक व सामाजिक अस्थिरता इन्हें समस्यात्मक तथा अपराधी बनाती है। इसके लिए विषेष शिक्षा का होना अनिवार्य है।

अतः कहा जाता है कि संसार में प्रत्येक मनुष्य अलग-अलग प्रवृत्ति तथा विचारों का होता है, जिसके आधार पर इन्हें बाँटा जाता है तथा इसके लिए ही अलग-अलग मॉडलों की व्यवस्था की गई है।

6.7 समावेशी शिक्षा की विशेषताएँ:

समावेशी शिक्षा पद्धति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित रूप से अंकित की जा सकती हैं:

1. विभिन्नता की पहचान एवं सम्भाल ; समावेशी शिक्षा बालकों की भिन्न विभिन्नताओं-शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक तथा साँस्कृतिक आदि- की पहचान करती है, उन्हें स्वीकार करती है तथा तदानुसार आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संज्ञानात्मक, संवेगात्मक एवं सृजनात्मक विकास के अवसर प्रदान करती है।

2. विद्यालयों में सब के लिए शिक्षा ; इस शिक्षा पद्धति में सामान्य तथा बाधित बच्चों के लिए सभी विद्यालयों में सभी के लिए शिक्षा के प्रावधान रखे गए हैं। 'सब के लिए शिक्षा' के वास्तविक अर्थ हैं 'सभी के लिए शिक्षा' न कि 'लगभग सब के लिए' शिक्षा।

3. शिक्षाः एक मौलिक अधिकारी ; शिक्षा के मौलिक अधिकार को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूप में अपनाना समावेशी शिक्षा की एक प्रमुख विशेषता है। शिक्षा की अन्य पद्धतियों में भी बालकों के शिक्षा के अधिकार को मान्यता दी गई है लेकिन इस अधिकार की भावना सब से अधिक इस शिक्षा पद्धति में निहित है जिसके अन्तर्गत कोई भी स्कूल किसी भी निम्न दैहिक, मानसिक एवं आर्थिक स्तर के बच्चे को दाखिला लेने से वंचित नहीं कर सकता है।

4. विशिष्ट शैक्षिक आवष्यकताओं के बालकों की स्वीकृति तथा समर्थन ; यह शिक्षा पद्धति विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं के बालकों जैसेः दैहिक रूप से बाधित, श्रवण, दृष्टि एवं वाणी बाधित, मानसिक रूप से असमर्थ, शारीरिक-मानसिक रूप से अवरोधित-लगभग सभी बालकों को उनकी वर्तमान शारीरिक अथवा/तथा मानसिक अवस्था में स्वीकार करती है, उन्हें समर्थन देती है तथा उन्हें इश्टत्तम विकास के अवसर देती है।

5. विशिष्ट शिक्षा प्रावधानः एक राष्ट्रीय शिक्षा उत्तरदायित्व ; शिक्षण की यह पद्धति इस बात को स्पष्ट मान्यता देती है कि सभी बच्चों की शिक्षा के लिए, विशेष रूप से विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं के बच्चों की शिक्षा के लिए समुचित प्रावधाना का आयोजन तथा व्यवस्थापन करना राष्ट्रीय स्कूल शिक्षा संस्थान की जिम्मेदारी है।

6. प्राथमिक शिक्षण एवं पाठ्यक्रम अत्यन्त लचीला ; प्राथमिक शिक्षण एवं पाठ्यक्रम को अधिक लचीला बनाने के लिए नेतृत्व एवं संसाधनों का प्रावधान होना समावेशी शिक्षा की एक अद्वितीय विशषता है, जिस के कारण सामान्य अनुभव तथा विशिष्ट उदेश्यों को प्राप्त

किया जा सकता है। शिक्षण पद्धति के इस गुण के कारण ही अनेकों विद्यार्थियों की वैयक्तिक अवश्यकताओं तथा परिवेश की विभिन्न परिस्थितियों यहाँ तक कि स्थानीय समुदाय तथा समाज की भी आवश्यकताओं को ध्यान मे रखा जा सकता है।

1. सामान्य तथा विशिष्ट में निकट-सम्बंध ; शिक्षा पद्धति में सामान्य एवं विशिष्ट शिक्षा, औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा, तथा विद्यालय एवं समाज में स्पष्ट एवं निकटतक सम्बंध होता है ताकि सभी बालकों को अधिकतम् लाभ मिल सके।

2. अध्यापक-शिक्षण अधिकतम अन्योन्याश्रित, सतत् एवं सहायक ; यह एक विशेष मान्यता है कि इस पद्धति द्वारा बालकों की आवश्यकताओं, अधिगम के ढंग तथा गुणों की विविधता की बहुलता को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षक के कौषल एवं क्षमता में वृद्धि करने के लिए अध्यापक-शिक्षण एक अत्यन्त अन्योन्याश्रित, निरन्तर एवं सहयोगी प्रक्रिया है।

3. अभिभावक एवं समाज की भागीदारी ; समावेशी शिक्षा एक संयुक्त प्रयास है जिसमें माता-पिता तथा अभिभावकों को विशेष रूप से तथ समाज को सामान्य रूप से सम्मिलित किया जाता है चाहे वह नियन्त्रण-वितरण का कार्य हो अथवा उतरदायित्व-निर्वहन का।

4. मजबूत नीतियाँ एवं नियोजन ; इस शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत शिक्षा के अधिकार का रक्षण करने तथा उसे लागू करने के लिए राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर नीतियाँ मजबूत एवं स्पष्ट हैं तथा उनका नियोजन भी सफलता से किया जा रहा है। यही कारण है कि पिछले एक दशक में बालकों की शिक्षा-विशेष रूप से ‘असमर्थ’ एवं ‘सामाजिक हाशिए पर स्थित बच्चों के प्रति विद्यालयों, शिक्षकों एवं समाज की अभिवृत्ति में पर्याप्त परिवर्तन आया है।

6.8 समावेशी शिक्षा के मूलतत्वः-

समावेशी शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए दी गई परिभाषाएं इसके निम्नलिखित मौलिक तत्वों पर आधारित हैः-

1. व्यक्ति के अधिकारों का मुदा; ‘सबके लिए ‘शिक्षा’ का अभिप्राय है सब बालकों के लिए, शिक्षा, न कि ‘लगभग सब के लिए’ ;

2. सब के लिए शिक्षा एक विद्यालय में सब के साथ ; अभिप्राय यह है कि समर्थ एवं असमर्थ बालक एक साथ सामान्य विद्यालयों में इकट्ठे शिक्षा ग्रहण करें तथा सीखें ज्ञान (जानने) के लिए, करने के लिए तथा एक साथ मिलकर रहने के लिए ;

3. मिलजुल कर एक-साथ ; समर्थ तथा असमर्थी बालक प्रारम्भ से ही समाज में एक साथ मैत्री भाव से कार्य करें, सामाजिक एकता में योगदान दें और व्यक्तियों, समूहों, समाजों एवं राष्ट्रों के मध्य पारस्परिक सम्बंध निर्माण करने में प्रेरणा दें

4. अवरोधों का ध्वंस ; समावेशी शिक्षा के परिणामस्वरूप प्राप्त पारस्परिक जानकारी परिचय तथा सहनशीलता भय, रूढ़ियों तथा अस्वीकृति को कम करते हैं ;

संक्षेप में समावेशन की संकल्पना बालकों को प्रारम्भ से ही संकीर्ण संज्ञानात्मक आधार पर वर्गीकृत करके उनकी प्रतिभा एसं क्षमताओं की विविधता को क्षति पहुँचाने वाली शैक्षिक प्रणाली के विरूद्ध एक प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुई है। यह अनेक विविधताओं के बालकों को एक साथ शिक्षा देने का प्रक्रम है जिसमें सभी बच्चे अपनी क्षमता तथा आवश्यकता के अनुसार शिक्षा ग्रहण करें, जीवन की तैयारी करें तथा विद्यालय के कार्यक्रमों तथा समाज की क्रियाओं में अपनी भागीदारी का निर्वहन करें। समावेशी शिक्षा में इस बात का भी विशेष ध्यान रखा जाता है कि शारीरिक अथवा मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों, अतिसंवेदनशील तथा कठिन परिस्थितियों और समाज के हाशिए ;डंतहपदंसप्रमकद्धपर जीने वाले बालकों को सबसे अधिक लाभ पहुँचे। ऐसी शिक्षा-रणनीति ;ैजतंजमहलद्ध में प्रत्येक बालक की प्रतिभा को प्रोत्साहन तथा उसे उसके प्रदर्शन के अवसर दिए जाते हैं। जीवन में आगे बढ़ने में समावेशी शिक्षा जोड़ने ;ज्वहमजीमतदमेेद्ध का कार्य करती है। यह स्वच्छ विवधिता का पोशण करती है तथा उसके विकास के लिए प्रोत्साहन देती है। इसलिए ‘समावेशन की नीति’ को सभी स्कूलों तथा सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की आवश्यकता है।

6.9 समावेशी शिक्षा के उद्देश्यः-

समावेशी शिक्षा प्रजातान्त्रिक संवैधानिक सिद्धान्तों की वास्तविकता को सच करने की दिशा में एक विकासशील कदम है। इसके द्वारा समाज के उन वर्गाे की शिक्षा एवं विकास पर विचार किया गया है जो पहले इससे वंचित रहे हैं और जिन की आवश्यकताओं को सदैव अनदेखा किया गया है। इस प्रणाली के उदेश्य इसके सिद्धान्तों पर आधारित है जिनका वर्णन निम्न प्रकार से किया गया हैः

1. सभी के लिए शिक्षा ; समावेशी शिक्षा समाज के किसी विशेष वर्ग अथवा समूह के लिए नहीं है। इसका मुख्य ध्येय सभी वर्गों के बालकों को शिक्षा देना है। इसकी नीतियों तथा कार्यक्रम को इस प्रकार लचीला बनाया गया है कि कोई भी बालक शिक्षा से वंचित न रहे। बालक शिक्षा कार्यक्रम का केन्द्र है इसलिए इसके विकास एवं शिक्षा के लिए समावेशी शिक्षा वचनबद्ध है।

2. अशक्त एवं बाधित भी समाज का महत्वपूर्ण अंग है ; अशक्त एवं बाधित बालकों को समाज के महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्वीकार करना तथा उन्हें अपनी क्षमताओं के इश्टतम विकास के अवसर प्रदान करना इस प्रणाली का महत्वपूर्ण उदेश्य है। अशक्त व्यक्तियों को समाज की सहानुभूति एवं दया नहीं, बल्कि उन का समर्थन एवं स्वीकृति चाहिए। उन्हें भीख

अथवा दान नहीं, बल्कि काम एवं सम्मान चाहिए, ठीक समाज के दूसरे सामान्य व्यक्तियों की तरह क्योंकि वे भी दूसरों की तरह उसी समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। समाज में ऐसी जागृति लाना समावेशी शिक्षा के उदेश्यों में सम्मिलित है।

3. अधिकारों की रखा ; शिक्षा का अधिकार मूलभूत अधिकारों में से एक है। यह अधिकार समानता के अधिकार से सम्बंधित है। जब प्रजातान्त्रिक गणराज्य में सभी व्यक्ति समाज है तो शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार भी समतावादी धारणा का समर्थन करता है। सभी को (शारीरिक, बौद्धिक अथवा सामाजिक भेदों का ध्यान किए बिना) शिक्षा प्राप्ति का अधिकार समान ही है। समावेशी शिक्षा का उदेश्य व्यक्तियों के शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार की रक्षा करना भी है। इसलिए इसकी पाठ्यचर्या में वांछित परिवर्तन करने की भी सिफारिश की गई है ताकि सभी को शिक्षा प्राप्ति का अधिकार प्राप्त हो सके।

4. संवैधानिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन ; भारत के सविंधान में विभिन्न धाराओं एवं संशोधनों के द्वारा भारतीय नागरिकों के लिए कई ढंगों से शिक्षा के अधिकार का प्रतिपादन किया गया है। इन धाराओं में विशेष सन्दर्भ शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना तथा विशिष्ट लक्षणों के समूहों के शिक्षा तथा विकास के अवसरों तथा अधिकारों की रक्षा करना है जिन में सेः-

1. अशक्त बच्चों के लिए समन्वित ;, **1974**

2. शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के लिए **DPEP** प्रोग्राम, **1985**

3. शिक्षा की राष्ट्रीय नीति ; **1986**

4. ।नजपेउएवं मानसिक मन्दता तथा बहुपक्षीय आशक्तता के सम्बंध में राष्ट्रीष्य स्तरीय ट्रस्ट **1999,** जो समावेशी शिक्षा का अनुमोदन करता है।

5. सर्व शिक्षा अभियान, **2002**

6. समावेशी शिक्षा के लिए वृहद, क्रियात्मक योजना, मार्च, **21, 2005** आदि प्रमुख है।

समावेशी शिक्षा सशक्त रूप से यह स्पष्ट करती है कि किसी भी बालक को बिना उसकी शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक विविधता का ध्यान किए, स्कूल में शिक्षा ग्रहण करने से वंचित नहीं किया जाएगा। ऐसा करके यह शिक्षा प्रणाली अपनी संवैधानिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करती है।

5. सामाजिक चेतना का उद्गम ; शिक्षा से व्यक्तितव-विकास के साथ-साथ सामाजिक चेतना का भी विकास होता है। अधिकारों की रक्षा की चेतना, क्षमता एवं भातृभाव की चेतना, बालकों के पालन-पोषण तथा उनकी शिक्षा के महत्व की चेतना, उनकी शारीरिक मानसिक सामर्थ्य एवं क्षमताओं की चेतना एवं उनके प्रति सकारात्मक दृष्टि कोण एवं व्यवहार सम्बंधी ज्ञान शिक्षा के माध्यम से ही प्राप्त होती है, जिसकी अशक्त एवं बाधित

बालकों के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। भारत में अभी माता-पिता, अभिभावक एवं सामान्यतः समाज इस चेतना से अनभिज्ञ है। समावेशी शिक्षा एक आन्दोलन के रूप में वांछित सामाजिक चेतना पैदा करने का उतरदायित्व लेती है।

6. शिक्षा की गुणवता में सुधार ; शिक्षा की गुणवता में सुधार सामान्यतः निम्नलिखित तीन आधारों पर निर्भर करता हैः

1. आवश्यकता-आधारित शिक्षा ;

2. पाठयचर्या का लचीलापन ;

3. अधिगम में बच्चों की सक्रिय भागीदारी एवं अधिगम में प्राथमिक अनुभवों का प्रावधान ;

जीवन में सकारात्मक उन्नति एवं समृद्धि के लिए केवल शिक्षा प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं होता, परन्तु शिक्षा का दूसरी आवश्यकताओं के अनुरूप होना भी आवश्यक होता है। शिक्षा का रूप ऐसा हो जिसमें बालकों की सक्रिय भागीदारी निश्चित की जा सके तथा वे अपने अनुभवों से सीखें तथा आगे बढ़े। यह तभी सम्भव हो सकता है जब पाठ्यक्रम पर्याप्त रूप से लचीला रखा जाए। समावेशी शिक्षा में ये गुण विद्यमान हैं इसलिए गुणवता सुधार का उदेश्य इसका एक ठोस आधार भी है। यही कारण है कि शिक्षाविद् इस शिक्षा प्रणाली को गुणात्मक समावेशी शिक्षा के नाम से सम्बोधित करते हैं।

7. कौशलों की पहचान ; प्रत्येक बालक किसी न किसी रूप में ‘सृजनात्मक एवं विशिष्ट’ हो सकता है। कोई बालक किसी एक कार्य-क्षेत्र में कुशल हैं तो कोई दूसरा किसी और कार्य में। शोध अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि कला एवं सृजनात्मकता मानसिक-मन्दता के बालकों में भी दृष्टि गोचर होती है। ऐसे बालकों को **Savege Genius** की संज्ञा दी जाती है । यथा बीथोवन संसार का एक प्रसिद्ध संगीतकार बहरा एवं गूंगा था। इसी प्रकार अनेक अशक्त बालक किसी न किसी कौशल में प्रवीण होते है। अभिप्राय यह है कि आवश्यकता तो केवल इन बालकों के विविध कौशलों को पहचानने, उन्हें सम्भालने तथा पोषित करने की है। इस सन्दर्भ में समावेशी शिक्षा बालकों के विशिष्ट कौशलों को पहचानने, उन्हें पोषित करने के माध्यम से समाज-कल्याण का उदेश्य रखती है।

6.10समावेशी शिक्षा की अवधारणाएँ

‘समावेशी शिक्षा’ कुछ मूलभूत अवधारणों पर आधारित है, जो निम्न प्रकार से हैं

1. सभी बच्चे एवं सभी व्यस्क समाज का अंग है।

2. प्रत्येक बालक किसी न किसी रूप से विशिष्ट है।

3. शिक्षा प्रत्येक बालक का मौलिक अधिकार है- प्रताड़ना तथा उत्पीड़न रहित।

4. सभी बच्चे समान रूप से मूल्यवान हैं तथा भागीदारी की समान सम्भावना रखते हैं जब समाज द्वारा संसाधनों के विकास से उन्हें अवसर दिए जाएँ।

5. शिक्षा का वास्तविक ध्येय केवल संज्ञानात्मक विकास नहीं है। शिक्षा प्रणाली ।ठब् पर आधारित है अर्थात् स्वीकृति, सम्बद्धता तथा समाज

6. शिक्षा का मूलभूत संप्रत्यय चार **Rs** पर टिका है तथा ये चार **Rs** हैं- पढ़ना, लिखना, गणित एवं संबंध

7. समावेशी शिक्षा के विद्यालय एकल संस्था द्वारा निर्देशित किए जाने चाहिए जो सभी विद्यालयों की देखभाल करे तथा निर्देश दे।

8. यह एक सतत् प्रक्रिया है कोई एक स्थिर अवस्था नहीं हैं।

9. शिक्षा का स्थान केवल विद्यालय ही नहीं है, समुदाय एवं समाज भी है।

10. शिक्षा की उपयुक्तता अवरोध रहित, अनुज्ञात्मक वातावरण पर टिकी होती है।

6.11प्रतिभाशाली बालकः-

प्रतिभाशीलता का सम्प्रत्यय बहुत ही व्यापक है। प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा पर प्राचीन समय में ग्रीक व रोमन समय में भी काफी ध्यान दिया जाता था। उदाहरण के लिए, रोमन व ग्रीक एम्पायर युद्धों के लिए अपने नागरिकों को युद्ध कौशल सिखाते थे। वे उनकी पहचान व उनका पालन-पोषण व शिक्षा पर बहुत ध्यान देते थे। दूसरे देशों के इतिहास भी इस प्रकार की वास्तविकातओं से भरे पड़े हैं। कौरवों और पाण्डवों को उनके गुरू द्रोणाचार्य ने महाभारत के युद्ध के दौरान बहुत प्रशिक्षित किया था। बाद में हम चन्द्रगुप्त का उदाहरण ले सकते हैं, जिसको उसके बाल्यकाल में ही चाणक्य द्वारा प्रशिक्षित किया गया। इस प्रकार हमें संसार में ऐसे बहुत-से उदाहरण मिलते हैं जिनसे प्रभावशीलता को बढ़ावा मिलता था।

यद्यपति प्रभावशीलता का आधुनिक सम्प्रत्यय **19**वीं शताब्दी के बाद गाल्टन की Hereditary Genius तथा Lombroso की 'The Man of Genius, **1891** के साथ आरम्भ हुआ। इस समय प्रतिभाशाली व विक्षिप्त बच्चों को एक ही समझा जाता था। प्रतिभाशीलता को नई परिभाशा साइमन-बिने (Simon-Binet)के **IQ** टैस्ट द्वारा **1905** में प्रदान की गयी। बिने व उसकी परीक्षण प्रविधियाँ जल्दी ही कम समय में मशहूर हो गयं। **1950** के बाद प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा पर काफी जोर दिया गया तथा उनके हुनर व कौशल को विकसित करने के लिए काफी सुविधाएँ व कार्य-योजनाएँ जुटायी गयीं।

प्रभावशाली बालकों का अर्थ व परिभाषाएं

अर्थ ; वह बालक जिसकी मानसिक आयु अपनी आयु वर्ग के अनुपात में औसत से बहुत अधिक हो, उसे प्रतिभावान या प्रतिभाशाली बालक कहा जाता है। संगीत, कला या किसी अन्य क्षेत्र में अत्यधिक योग्यता रखने वाला बालक भी प्रतिभाशाली बालकों की श्रेणी में आता है। प्रतिभावान बालक ही राष्ट्र के नेता, समाज सुधारक, वैज्ञानिक, इंजीनियर, साहित्यकार व रचनाकार आदि बनते हैं।वैज्ञानिक का मानना है कि प्रतिभावान बालक बुद्धि के साथ-साथ शारीरिक रूप् से, व्यक्तित्व रूप से तथा समायोजन की दृष्टि से भी श्रेष्ठ होते हैं।

हैविंगहर्स्ट के विचारानुसार, ''प्रतिभाशाली बालक वे हैं जो समाज के किसी भी कार्य क्षेत्र में निरन्तर कार्यकुशलता का परिचय देते हैं।''

अब्दुल रऊफ के अनुसार, ''प्रायः उच्च बुद्धिलब्धि को प्रतिभाशाली होने का संकेत माना जाता है। अतः प्रतिभाशाली बालक शब्द का अभिप्राय बालक की उच्च बुद्धिलब्धि से किया जाता है।

प्रेम पसरीचा ने प्रतिभाशाली बालक को इस प्रकार से परिभाषित किया है- ''जो सामान्य बुद्धि की दृष्टि से श्रेष्ठ प्रतीत हो या वह उन क्षेत्रों में जिनका अधिक बुद्धिलब्धि से सम्बन्धित होना जरूरी नहीं, अति विशिष्ट योग्यताएँ रखता हो।''

टरमन के अनुसार, ''प्रतिभाशाली बालक वह है जिसकी बुद्धिलब्धि **140** है।''

केलेसनिक के अनुसार, ''वह प्रत्येक बालक जो अपने आयु स्तर के बच्चों में किसी योग्यता में अधिक हो और जो हमारे समाज के लिए कुछ महत्वपूर्ण नया योगदान कर सके।''

इस प्रकार हम कह सकते है कि प्रतिभाशाली बालक जिनकी बुद्धिलब्धि **140** से अधिक होती है, समाज में प्रायः **2** से **4** प्रतिशत ही होते हैं। ये सामान्य बालकों से हर क्षेत्र में योग्य होते हैं व इनकी शैक्षिक उपल्ब्धि भी अधिक होती है। प्रतिभाशाली बालक समाज में अपने आपको अन्य सामान्य बालकों की अपेक्षा जल्दी समायोजित कर लेते हैं।

प्रतिभाशाली बच्चों की विशेषताएँ

प्रतिभाशाली बालक राष्ट्र की रीढ़ होते हैं। ये समाज के हर कोने में पाये जाते हैं। ये किसी भी जाति धर्म, लिंग और किसी भी समुदाय से सम्बन्धित हो सकते हैं। बहुत-से दिव्यांग बच्चों, जैसे-गूंगे -बहरे, अस्थि बाधित, वाणी और भाशा सम्बन्धी दोश वाले बच्चों में भी प्रतिभाशाली बच्चे देखने को मिलते हैं। हमारे सामने इतिहास के पन्नो में छिपे हुए ऐसे बहुत-से उदाहरण आते हैं जो अपने प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के लिए जाने जाते हैं, जैसे-ग्राहम बेल, थॉमस एडीसन, जॉर्ज वाशिंगटन आदि कुछ ऐसे ही उदाहरण हैं जो अपनी-अपनी अधिगम असमर्थताओं के लिए जाने जाते हैं। सूरदास जो जन्मांध थे, मिल्टन व ब्रीटहोवन आदि भी गम्भीर दृष्टि का श्रवण बाधिता के कारण प्रतिभाशाली लोगों की श्रेणी

में आते हैं। हम बहुत-से ऐसे नामों को भी जानते हैं, जिनका शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य ठीन न होते हुए भी उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में नाम व व्रसिद्धि कमायी है। अतः प्रतिभाशाली बच्चे केवल बुद्धि में उतक नहीं होते बल्कि शारीरिक, संवेगात्मक, सामाजिक शिक्षा तथा अपनी आयु के कई बच्चों से कई और विशेषताओं में भी उतक होते है।

सामान्यतः हम प्रतिभाशाली बच्चों की विशेषताओं का वर्णन दो वर्गों में करते हैं

1. धनात्मक विशेषताएँ ;
2. ऋणात्मक विशेषताएँ ;

1. **धनात्मक विशेषताएँ** ;

शरीरिक विशेषताएँ ; प्रतिभाशाली बच्चे वे होते हैं जो शारीरिक तौर पर विकसित होते हैं। ये सामान्यतः लम्बे होते हैं व इनका वनज ज्यादा होता है।

- इनका डील-डौल उचित होता है और वे अच्छे स्वास्थ्य वाले होते हैं।
- इनकी ज्ञानेन्द्रियाँ प्रखर होती है।
- इनका व्यवहार बहुत अच्छा होता है।
- ये साधारण बच्चों की अपेक्षा बैठना, खड़े होना, निकालना तथा बोलना छोटी आयु में ही सीख जाते हैं।

बौद्धिक विशेषताएँ ;प्दजमससमबजनंस ब्ींतंबजमतपेजपबेद्धरू इसमें निम्नलिखित विशेषताओं को शामिल किया जाता हैं-

- इनकी रूचियाँ भिन्न-भिन्न तथा विस्तृत होती हैं।
- इनका भाषात्मक विकास उच्च स्तर का होता हैं।
- इनमें मौलिक विचारों के निर्माण व समस्याओं को समाधान करने की योग्यता होती है।
- ये सीखने व समझने में तेज होते हैं तथा इनकी ग्राहा्र शक्ति अच्छी होती है।
- इनकी स्मृति बहुत तेज होती है। ये बहुत तेज गति से सीखते हैं।
- इनमें तर्क-वितर्क शक्ति व समस्या समाधान की योग्यता अधिक होती हैं।
- ये निरन्तर ध्यान दे सकते है और जब किसी चीज को दोहराया जाता है तो ऊब अनुभव करते हैं।
- इनका शब्द-भण्डार विशाल होता है। इनका साधारण ज्ञान भी अच्छा होता है।

- इनकी आत्माभिव्यक्ति अच्छे स्तर की होती है। यह फुर्तीली और स्पष्ट होती है।

व्यक्तित्व की विशेषताएँ ; प्रतिभाशाली बच्चों की व्यक्तित्व विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

- इनमें समायोजन, प्रबन्धन, विश्लेषण व संश्लेषण योग्यताएँ पायी जाती हैं।
- कई बार ये बच्चे संवेगात्मक अस्थिरता भी दिखाते हैं।
- इनका व्यक्तित्व सामान्यतः विशिष्ट होता है।
- इनमें हास्य-विनोद का स्वभाव अधिक होता है।
- ये घर, स्कूल व समाज के कार्यो में रूचि लेते हैं और कार्य का सौंपा जाना पसन्द करते है, क्योंकि ये कार्य उत्तरदायित्व की भावना से पूरा करना चाहते हैं। इनमें उत्तरदायित्व की भावना अधिक होती है।
- ये बालक सामाजिक दृष्टट से भी सुदृढ़ होते हैं।

2. ऋणात्मक विषेशताएँ ;

प्रतिभाशाली बच्चों में कुछ ऋणात्मक विशेषताएँ भी पायी जाती हैं, जो इस प्रकार हैं-

- ये बच्चे सामान्य कक्षाकक्ष में उदासीनता महसूस करते हैं। सामान्यतः तब जब विषय इनकी पसन्द का न हो।
- ये अभिमानी और ईर्श्यालु व्यवहार की अभिव्यक्ति करते हैं।
- ये बेकरार, गाफिल तथा ऊधम मचाने वाले होते हैं।
- इनकी लिखाई खराब तथा वर्तनी अशुद्ध होती हैं।
- प्रतिभाशाली बालक कई बार लापरवाह हो जाते हैं।
- ये सामान्य बच्चों के लिए बनाये गये पाठ्यक्रम को पसन्द नहीं करते हैं।
- ऐसे बच्चों की रूचि दूसरों की आलोचना करने में अधिक होती हैं।

प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान

प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान क्यों आवश्यक हैं? इसके निम्न कारण हैं-

1. इनकी छिपी हुई शक्तियों को बाहर निकालना।
2. यह प्रतिभाषाली बच्चों के लिए विशिष्ट शिक्षा योजना की तरफ पहला कदम है।
3. गलत पहचान होने के कारण उत्पन्न होने वाली समस्याओं से बचाने के लिए।
4. इनकी शक्ति, योग्यता व सृजनात्मकता को सही दिशा में प्रयोग करने के लिए।

5. बिना पहचान के कारण बहुत-से बच्चे धरती में छिपे हीरे की भाँति छिपे रह जाते हैं।

पहचान प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करना इतना आसान नहीं है जितना दिखाई देता हैं। इनकी पहचान करने के लिए हमं े विभिन्न प्रकार की तकनीकों, जिसमें माता-पिता, अध्यापक, साथी-समूह, विशेषज्ञों व प्रतिभाशाली बच्चे के गुणों आदि की आवश्यकता होती हैं।

बहुल दिव्यांग के कुछ उदाहरण हैं- बहरा-अन्धा बालक, प्रमस्तिश्कीय पक्षाघात और मेरूदण्ड के वक्र से पीड़ित बालक, गूँगा-बहरा-अन्धा बालक, मिर्गी और अपगता से पीड़ित बालक, मेरूदण्डीय द्विशाखी और गूँगेपन से पीड़ित बालक, माँसपेशीय डायस्ट्रोफी, पाँव फिरा-वाक् दोश से पीड़ित बालक, बहरा, एक आँख वाला, हथकटा-वाक् दोश से पीड़ित बालक आदि। शारीरिक रूप से दिव्यांग बालक अध्याय में अपगता के विभिन्न प्रकार दिये हैं। उन विभिन्न प्रकारों तथा अन्य का कोई भी संचय ;ब्वउइपदंजपवदद्ध बहुल दिव्यांगता के अन्तर्गत आता है।

यद्यपि प्रभावशीलता का आधुनिक सम्प्रत्यय **19**वीं शताब्दी के गाल्टन की व लोम्ब्रोसो 'The Man of Genius,1891'के साथ आरम्भ हुआ। इस समय प्रतिभाशाली व विक्षिप्त बच्चों को एक ही समझा जाता था। प्रतिभाशाली को नई परिभाषा साइमन-बिन के**IQ** टेस्ट द्वारा **1905** में प्रदान की गयी। बिने व उसकी परीक्षण प्रविधियाँ जल्दी ही कम समय में मशहूर हो गयी। स्टेनफोर्ड बिने बुद्धि पैमाने को **1916** में स्थापित या प्रकाशित किया गया। **1950** के बाद प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा पर काफी जोर दिया गया तथा उनके हुनर व कौशल को विकसित करने के लिए काफी सुविधाएँ व कार्य-योजनाएँ जुटायी गयी।

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के निर्देशक सिद्धान्त

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा की योजना बनाना एवं उसे संचालित करना एक कठिन कार्य है, परन्तु यदि हम इनकी शिक्षा के लिए निम्नलिखित सर्वमान्य निर्देशक प्रनियम प्रयुक्त करें तो काफी सीमा तक यह समस्या हल हो सकती है।

1. **अवसर की समानता का नियम**- प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा व्यवस्था में अवसरों की समानता का प्रनियम सर्वोच्च है। सामान्य बालकों के समान ही उन्हें भी अपनी प्रतिभा के अधिकतम विकास के लिए स्वतन्त्रता एवं अवसर मिलने चाहिए। अवसर की समानती का तात्पर्य यह भी है कि प्रतिभाशाली बालकों को उनके उच्च बौद्धिक स्तर के अनुसार शिक्षा देनी चाहिए।
2. **मिथ्याभिमान एवं आडम्बर से बचने का नियम**- प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा व्यवस्था ऐसी होना चाहिए जिससे उन बालकों में मिथ्याभिमान एवं आडम्बर आदि को भावना विकसित नहीं पाए।

3. **सम्बर्धित एवं विकसित पाठ्यचर्या का नियम** - प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा में वास्तविक संविर्धत पाठ्यचर्या का प्रावधान होना चाहिए। प्रतिभाशाली बालक कक्षाओं में सामान्य बालकों की तुलना में पढ़ाई जाने वाली विषय-वस्तु को शीघ्र समझ लेते हैं। अतः उनके बचे हुए समय को सवंर्धित पाठ्यक्रम में लगाना चाहिए ताकि वे अपने समय का सदुपयोग करते हुए अपनी प्रतिभा के अनुरूप अपना अधिकतम विकास कर सकें।
4. **बुरी सामाजिक आदतों की रोकथाम का नियम** - सामान्य बालकों की तुलना में प्रतिभाशाली बालक अपने कार्य को जल्दी सीखते व समझते हैं। उनके कार्य का स्तर भी सामान्य बालकों में उच्च होता है। यदि प्रतिभाशाली बालकों के पास बचे हुए समय व शक्ति का समुचित उपयोग कराया गया तो उनमें बुरी आदतें विकसित होने की आशंका होती है। अतः प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा ऐसी होनी चाहिए, जिससे उनहें बुरी आदतों व विद्रोही आदतों से बचाया जा सके। यद्यपि इन क्रियाओं की ये बालक संगत समझ कर नहीं करते हैं परनतु समाज के सामान्य नियमों के प्रतिकुल होने के कारण वे समाज में अपना स्तान बनाने में असफल होते हैं और सामाजिक तिरस्कार के शिकार बनते हैं। बच्चों में विकसित होने वाले ऐसे व्यवहारों पर ध्यान रखना चाहिए।
5. **बाल अध्ययन पर आधारित शिक्षा का नियम** - प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो कि प्रत्येक बालके के गहन अध्ययन व विश्लेषण पर आधारित हो। उनकी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, अभिरूचियों और व्यक्तित्व की पूरी जानकारी करने के पश्चात् उसी के अनुरूप उनकी शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए।
6. **सर्वांगीण बाल-विकास का नियम**- प्रतिभाशाली बालक को कभी भी ऐसी शिक्षा देनी चाहिए, जिससे कि उनका एक पक्षीय विकास ही हो सके, बल्कि उनके लिए एक स्वस्थ और सर्वांगीण विकास करने वाली शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे प्रतिभाशाली बालक का शैक्षिक, सामाजिक, शारीरिक एवं नैतिक विकास हो सके।
7. **विशिष्ट प्रतिभाओं के विकास का नियम** - कुछ प्रतिभाशाली बालकों की अद्वितीय क्षमताएँ अथवा प्रतिभाएँ होती हैं अर्थात् वे अन्य प्रतिभाशाली बालकों की तुलना में प्रतिभा सम्पन्न होते है। अतः उन बालकों के प्रतिभा के स्तर को विकसित करने के लिए अलग से ध्यान देने की आवश्यता होती है। इन बालकों की प्रतिभा एवं शिक्षा का विकास समाज, राष्ट्र और विश्व के नितान्त आवश्यक है।

शारीरिक अशक्तता वाले व्यक्तियों का आकलन

भौतिक रूप से अशक्त बच्चों का प्रारम्भिक आयु में परीक्षण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है ताकि उन्हें प्रारम्भ से ही उपयुक्त शैक्षिक अनुभव प्रदान किया जा सके। इस प्रकार का प्रयास संकलित अधिगम न्यूवता की रोकथाम में सहायक होता है अन्यथा बौद्धिक विकास

पर बाद में यह बड़ा प्रभाव डाल सकता है। किसी भी आयु पर शारीरिक अशक्त व्यक्तियों का परीक्षण, परीक्षण के प्रशासन तथा उसके निष्पादन व्याख्या करने के सन्दर्भ में विशेष समस्यायें प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के परीक्षण को सुचारू रूप से चलाने की मुख्य विधि- (1) परीक्षण के माध्यम, समय सीमा और विद्यमान परीक्षण को सुचारू रूप से चलाने की मुख्य विधि है- (1) परीक्षण के माध्यम, व्यक्तिगत इतिहास, साक्षात्कार और दैनिक जीवन का निरीक्षणकर्ता द्वारा उपययुक्त सूचना जैसे अध्यापक आदि सूचना को मिलाकर व्यक्तिगत नैदानिक आंकलन करना। शारीरिक अशक्त व्यक्तियों के लिए विलग मानक स्थापित करना और ऐसे समूहों के लिए विशेष परीक्षण तैयार करने में सबसे बड़ी बाधा इनकी उपलब्ध कम संख्या है। यह सीमा विशेष रूप से बहुआयामी अशक्तता की अवस्था में देखने को मिलती है। एक सर्वोत्तम आकांक्षी परीक्षण शृंखला जिसमें मानकीकृत और अमानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया गया है वह शारीरिक अक्षमताओं के चार वर्गों पर यथा- श्रवण असमर्थता, दृष्य असमर्थता, अधिगम असमर्थता और शारीरिक असमर्थता वाले व्यक्तियों पर प्रयोग किया। मनोमिति विशेषताओं जिनका अध्ययन किया गया उसमें विश्वसीनयता, विभेदी पद, प्रकार्य, कारक संरचना और वैधता से सम्बन्धित सूचकांक सम्बन्धित निश्पादन स्तर पूर्वकथन, शक्ति, परीक्षण सामग्री, समय और सामंजस्य का अध्ययन भी किया गया। सामान्य रूप से परिणामों से प्रक्रियात्मक अनुकूलन अधिकांश पक्षों पर मानक परीक्षण से तुलनात्मक पाया गया जिसमें प्राप्तांको के अर्थ भी सम्मिलित हैं पर शैक्षिक निश्पादन का पूर्वकथन असमर्थ व्यक्तियों के साथ उतना सही नहीं हैं जितना अन्य लोगों के साथ। अमानकीकृत परीक्षणों की अवस्था में सापेक्षिक रूप से लचीला था। अतः तुलनात्मक समय से सम्बन्धित इन्द्रियानुभवित आधारित परीक्षण विकसित करना एक मुख्य प्रश्न है।

नीचे की पंक्तियों में श्रवण असमर्थता, दृष्य असमर्थता और गति असमर्थता से सम्बन्धित विशेष्य परीक्षणों का विवरण देंगे।

इकाई 7- समावेशी शिक्षा का अनुकूलन

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 बहु दिव्यांगता

7.5 श्रवण बाधिता ग्रस्त बालक

7.6 दृष्टि बाधित निःशक्त बालक

7.7 अस्थि बाधित निःशक्त बालक

7.8 वाणी बाधित बालक

7.10 अधिगम क्षतियुक्त निःशक्तता

7.11 समावेशन में अनुदेशनात्मक एवं पाठ्यक्रम सम्बंधी अनुकूलन

7.12 अनुकूलन के प्रकार

7.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में दिव्यांगता समाज कें सामने एक चुनौतीपूर्ण एवं ज्वलंत समस्या कें रूप में उपस्थित है जिसके लिए सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन आवश्यक सुविधाएँ देने के लिए तत्पर है। दिव्यांग व्यक्तियों को प्रशिक्षित लोगो के द्वारा उत्तम सुविधाएँ प्रदान की जाए। बहुदिव्यांगता में अनूकूलन, समायोजन कैसे किया जा रहा है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

1. बहु दिव्यांगता के बारे मे जान सकेंगे।
2. बहु दिव्यांगता की समावेशी शिक्षा के बारे मे जान सकेंगे।

7.3 बहु दिव्यांगता

बहु दिव्यांगता की विशेषताएं

बहु दिव्यांगता की मुख्य विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं-

1. बहुबाधित बालकों के लक्षण, गुण, स्वरूप सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं।
2. यह उन बालकों पर लागू होता है जो सामान्य बालकों से अलग हो, स्मरणशक्ति अधिक हो।
3. एक बहुबाधित बालक शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक आधार पर सामान्य बालक से बिल्कुल अलग होते हैं। सामान्य बालक की अपेक्षा उसका विकास तीव्र गति से होता है।
4. एक बहुबाधित बालक वह जो सामान्य शिक्षा कक्ष तथा सामान्य शिक्षा कार्यक्रमों से पूर्णतया लाभान्वित नहीं हो सकता, क्योंकि उसकी विकास की सामर्थ्य अधिक होती है।
5. बहुबाधित बालक की व्यवहार में अधिकतम सामर्थ्य के विकास के लिये उसे स्कूल की कार्यप्रणाली तथा उसके साथ किये जाने वाले व्यवहार में परिवर्तन की आवश्यकता होती हैं।
6. एक बहुबाधित बालक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक तथा शैक्षणिक उपलब्धियाँ जैसी सभी धाराओं में सम्मिलित होता है।

बहु दिव्यांगता के प्रकार

बहु दिव्यांगता बालक कई प्रकार के होते हैं, वह निम्नलिखित हैं-

1. श्रवण बाधित बालक- भाशा बाधित तथा वाणी बाधित भी होते हैं।
2. दृष्टि बाधित बालक- मानसिक मन्दित तथा भावात्मक रूप से बाधित भी होते हैं।
3. मानसिक मन्दित बालक- अधिगम असमर्थी बालक भी होते हैं।
4. अस्थि बाधित बालक- शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार से बाधित होते हैं।
5. संवेगात्मक रूप से विक्षिप्त बालक- सामाजिक रूप से असमायोजित भी होते हैं।
6. बहुविकारों से बाधित बालक- यह बालक अनेक बाधिताओं से ग्रस्त होते हैं।
7. प्रतिभाशाली बालक- ऐसे बालकों में सृजनात्मक बाधिता भी आ जाती हैं।

8. रचनात्मक कार्योंमें निपुण बालक- प्रतिभाशाली भी होते हैं।

बहु दिव्यांगता के कारण

बहु दिव्यांगता के कुछ कारण इस प्रकार हैं-

1. माँ की बीमारी।
2. माँ द्वारा ली गई दवाइयों का प्रभाव, मुख्यतः उन दवाइयों का जो थैलीडोमाइट से बनायी जाती हैं।
3. दुर्घटना में प्राप्त चोटें।
4. रोगग्रस्तता।
5. जर्मन खसरा ;ळमतउंद तनइमससंद्ध से पीड़ित माँ (जर्मनी में **1964-65** में जब जर्मन खसरा महामारी के रूप में फैला तो अनेक गर्भवती माताओं ने जो इस बीमारी से प्रभावित हुई बहुल दिव्यांग बालकों को जन्म दिया)।

बहुल दिव्यांगता के प्रभाव

बहुल दिव्यांगता के प्रभाव शैक्षिक, सामाजिक, मानसिक, शारीरिक और संवेगात्मक होते हैं। बहुल दिव्यांग बालक को माता-पिता बहुधा एक बोझ मानकर चलते हैं। उनके प्रति माता-पिता का दर्शन पापों का एक प्रतिफल ही होता है। इस दर्शन को वे अक्सर बालक के समक्ष कहते भी हैं। अपनी कठिनाइयों और कुण्ठाओं को माता-पिता बालक के साथ दुर्व्यवहार करके भी व्यक्त करते हैं। दिव्यांगता के कारण स्वाभाविक है कि बालक का मानसिक विकास अवरूद्ध हो जायेगा। एक बहरा-गूँगा-अन्धा बालक न तो सूचनाओं को एकत्रित कर सकता है, और न ही अपने विचारों को दूसरों तक पहुँचा पाता है। सूचना के अभाव में उसका ज्ञानात्क संसार कितना अन्धकारमय होगा यह स्पष्ट है। इसी प्रकार प्रमस्तिश्कीय पक्षाघात और गूँगापन एक बहुल दिव्यांग बालक को ज्ञान के संसार में प्रवेश करने से रोकते हैं। इस प्रकार, सामाजिक व मानसिक विकास न हो पाने के कारण अनेकानेक संवेगात्मक समस्याओं का उत्पन्न होना प्राकृतिक है। बालक संवेगात्मक रूप से अस्थिर व अशान्त रहने लगता है। बढ़ती उम्र के साथ वह अधिक अशान्त हो जाता है। फलस्वरूप एक सामाजिक, मानसिक, शारीरिक और संवेगात्मक रूप से विकारयुक्त और अविकसित बालक वह शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाता जिसका वह अधिकारी है। अतः वह शैक्षिक रूप से या तो शून्य होता है अथवा अत्यन्त पिछड़ा हुआ। एक बहुल दिव्यांग बालक जो दो या इससे अधिक प्रकार की इन्द्रिय अपगता, जैसे- अन्धापन और गूँगापन अथवा अन्धापन-बहरापन से पीड़ित है, सबसे अधिक शैक्षिक समस्या का शिकार होता है।

बहुल दिव्यांग बालक की शिक्षा

बहुल दिव्यांग बालक को शिक्षित करना एक जटिल कार्य है तथापि यह नहीं कहा जा सकता है कि उसे शिक्षित नहीं किया जा सकता है। जगत प्रसिद्ध हेलन केलर ;भ्मसमद ज्ञमससमतद्ध श्रवण, दृष्टि,

वचन और संवेग के क्षेत्र में अपंग थी, परन्तु माता-पिता के प्रयास तथा अपने आत्मबल के कारण वह अपनी अपंगता पर विजय प्राप्त रकने में सफल रही और उसने एक अपेक्षाकृत स्वतन्त्र जीवन व्यतीत किया।

बहुल (विशेष दोषयुक्त) दिव्यांग बालक एवं उनकी शिक्षा का ढंग

बहुल दिव्यांग बालक ऐसे दोश से पीड़ित होते हैं जिसके कारण वे साधारण दशाओं में अपनी माँसपेषियाँ, हड्डी या जोड़ का अभ्यास नहीं कर पाते। ये बालक या तो पैदा ही दोषयुक्त होते हैं या दुर्घटनाओं के परिणास्वरूप या किसी बीमारी के प्रभाव के कारण दोषयुक्त हो जाते हैं।

इनकी मानसिक योग्यता या तो साधारण होती है या तीव्र होती है। ये लोग दूसरों का ध्यान अपनी और आकर्षित करते हैं, लेकिन जब दूसरों से बात करते हैं तो शारीरिक कमी के कारण इनमें हीनभावना आ जाती है। इस प्रकार बहुल दिव्यांग बालक की शिक्षा को संगठित करने के साथ उनमें समायोजन भी लाया जाये। इसमें कुछ बातें आवश्यक हैं जो उनकी शिक्षा में ध्यान में रखनी चाहिए-

1. क्योंकि शारीरिक न्यूनता ग्रसित साधारण बुद्धि के होते हैं अतः उन्हें शिक्षा द्वारा मानसिक विकास के लिये पूर्ण अवसर देना चाहिए।
2. शिक्षा द्वारा उनके अन्दर इस प्रकार की भावना उत्पन्न करनी चाहिए, जिससे वे अपनी हीनता कम कर सकें और उपयुक्त से उपयुक्त व्यवहार को विकसित कर सकें।
3. उनके भेदपन को पाठषाला में पूर्णरूपेण व्यवस्थित करने के लिये पूर्ण सामग्री होना चाहिए। उनके लिये विशेष प्रकार की मेज, कुर्सी आदि होनी चाहिए, जिससे वह आराम से बैठ सकें और अपने षरीर पर जोर दिये बगैर पढ़ने और लिखने का कार्य कर सकें।
4. ऐसे बालकों के लिये अलग कक्षा के कमरे हो तो अच्छा है। जैसी कि विद्यालय की इमारत में जगह हो, उसके अनुसार उचित प्रबन्ध करना चाहिए। अलग कमरा होने से ऐसे बालकों को शारीरिक विकास की सुविधा मिल सकती है। किन्तु उनका सामाजिक विकास उचित रूप से न हो सकेगा।
5. अपंग बालकों या बहुल दिव्यांग को हमें ऐसी व्यावसायिक शिक्षा देनी चाहिए जो उनकी शारीरिक न्यूनतम ग्रसितता में बाधक न हो। वह एक फौजी या भट्टी में कोयला डालने वाला नहीं हो सकता किन्तु बैठने वाली नौकरी के योग्य उसे बनाना चाहिए, जिसे वह आसानी से कर सके और सफलता प्राप्त कर सके।

इसके अतिरिक्त निम्नानुसार कुछ विशेष प्रयास करने पडेंगे-

प्रथकीकरण (Segregation)

बहुल दिव्यांग बालक को सामान्य कक्षा में बैठाकर पढ़ाना असम्भव-सा है। अध्यापक ऐसे बालकों की ओर व्यक्गित ध्यान इसलिए नहीं दे सकते हैं क्योंकि उन्हें अन्य बालकों को पढ़ाना और अन्य विद्यालयी कार्य करने होते है। बहुल दिव्यांग बालक भिन्न-भिन्न प्रकार की दिव्यांगता से पीड़ित होते

हैं। अतः उन्हें विशेष और व्यक्तिगत ध्यान की अति आवश्यकता है। इसलिए उन्हें सामान्य कक्षा में न विशेषज्ञ विशेष पृथक कक्षा में बैठाया जाना चाहिए जहाँ साधन अध्यापक ;त्मेवनतबमे जमंबीमतद्ध विशेषज्ञ ;म्गचमतजद्ध और मनोवैज्ञानिक की देख-रेख में बालक शिक्षा ग्रहण करेगा। परन्तु, यदि दिव्यांगता गम्भीर है और बालक दो से अधिक प्रकार क दिव्यांगता का शिकार है तो उसके लिए विशेष विद्यालयों का आयोजन करना चाहिए क्योंकि जिन अनेक उपकरणों, विशेषज्ञों, चिकित्सा सुविधाओं और मनोचिकित्सकों की आवश्यकता ऐसे बालकों को है वह प्रत्येक सामान्य बालक हेतु बनाये विद्यालयों में उपलब्ध नहीं करायी जा सकती। इन पृथक विद्यालयों में बालकों को यदि पूर्णकालिक रहने की सुविधा दी जाय तो वह विशेषाज्ञों की देख-रेख में रहेगा और विषेश उपकरणों की सुविधा प्राप्त कर सकेगा।

शैक्षिक सुविधाएँ ; **(Educational Facilities)**

बहुल दिव्यांग बालक को कुछ विशेष सुविधाओं की आवश्यकता होती है। एक अपंग बालक अथवा ऐसे दिव्यांग बालक जो केवल एक प्रकार की दिव्यांगता से पीड़िता होता है को दी गयी सुविधा में बहुल दिव्यांग बालक हेतु रूपान्तर अथवा सुधार अथवा परिवर्तन करना पड़ता है। जैसे- एक श्रवण क्षतियुक्त बालक को शिक्षित करने के लिए चमकीली ;थ्सं़ेीपदहद्ध रोशनी का प्रयोग किया जाता है परन्तु एक ऐसे बालक के लिए जो श्रवण क्षतियुक्ता से पीड़ित तो है ही साथ ही अन्धा भी है उसके लिए चमकीली रोशनी कोई अर्थ नहीं रखती है। इसी प्रकार रंग द्वारा गूँगे और बहरे बालकों को पढ़ाया जा सकता है परन्तु बहरे-अन्धा बालक को नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि यह समझना कि जो सुविधाएँ हम एक ऐसे बालक को देते हैं जो अन्धा है और जो सुविधाएँ हम एक ऐसे बालक को देते हैं जो बहरा है, उनका समुच्चय उस बहुल दिव्यांग बालक को दिया जा सकता है जो अन्धा और बहरा दोनों है, सर्वथा अनुचित और प्रभावशाली है। बहुल दिव्यांग बालक हेतु उनकी दिव्यांगता के विभिन्न संचयों ;क्पि़िमतमदज ब्वउइपदंजपवदेद्ध के अनुसार शैक्षिक सुविधाएँ उपलब्ध करायी जानी चाहिए। उसके लिए प्रत्येक के प्रोग्रामों की सूची निम्नलिखित हैं-

1. एम. आई. टी. लोगो प्रोग्राम
2. कुछ जैव-चिकित्सकीय इन्जीनियरिंग विशेषज्ञों ने अभिनव साधनों की रचना की है जिसकी सहायता से कुछ बहुल दिव्यांग बालक गति कर सकते हैं और अपने को संचारित कर सकते हैं।
3. सेटली में एक स्नायुशारीरिक वैज्ञानिक, विद्युत इन्जीनियर और इलेक्ट्रॉनिक तकनीषियन ने मिलकर एक ऐसा प्रोग्राम बनाया है, जिसमें कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो-
   a. गम्भीर रूप से पीड़ित बहु दिव्यांग बालक को सिर सन्तुलन में सहायता करते हैं।
   b. माँसपेशियाँ को नियन्त्रित करने में सहायता करते हैं, और
   c. श्रवण उत्तेजकों को संचानर हेतु दृश्य चित्रों में परिवर्तित कर देते हैं।

इस प्रकार ये प्रोग्राम प्रमस्तिश्कीय पक्षाघाती, अन्धे, बहरे, गूँगे आदि गम्भीर रूप से बहुल दिव्यांग बालकों के लिए एक वरदानस्वरूप हैं। भारतवर्श में भी ऐसे प्रोग्राम विकसित किये जाने

चाहिए और पृथक बहुल दिव्यांग विद्यालयों को उपलब्ध कराये जाने चाहिए। इस प्रकार उचित शैक्षिक सुविधाएँ बहुल दिव्यांग बालक की शिक्षा में एक महत्वपूर्ण सोपान हैं।

शिक्षण (Teaching):

सभी बहुल दिव्यांग बालकों के लिए एक-सी शिक्षण व्यवस्था नहीं हो सकती है, क्योंकि प्रत्येक बालक में दिव्यांगता का अनोखा संचय होता है। अतः शिक्षण व्यवसाय भी प्रत्येक भिन्न प्रकार के संचय के अनुसार भिन्न होगा। सर्वप्रथम बहुल दिव्यांगता के अनुसार उदेष्य निर्धारित किये जाने चाहिए जो बहुल दिव्यांग बालकों में प्रत्येक के लिए भिन्न होंगे। प्रायः बहुल दिव्यांग बालकों को षिक्षित करने के दो उदेष्य होते हैं-

- गामक क्रियाएँ सिखाना
- बौद्धिक कार्य सिखाना

गामक क्रियाओं का शिक्षण-जिन गामक क्रियाओं का शिक्षण किया जाना है, वे हैं-

1. बैठना
2. खड़े होना
3. पानी का पीना
4. खाना खाना
5. खड़े रहना
6. च्लना
7. खेल कौशल सीखना
8. शौच आदि करना।
9. कैलवर्ट आदि ने व्यवहार में सुधार और विकास हेतु निम्नलिखित क्षेत्र की क्रियाओं पर जोर दिया हैं-
10. खाना और पीना
11. कपड़े पहनना
12. शौचादि की शिक्षा
13. माँसपेशियों को मजबूत करना और आसन
14. गति
15. खेल
16. अनुकूल प्रतिक्रियाएँ

इन सभी क्रियाओं में धनात्मक परिवत्रन लाने का प्रयास किया जाना चाहिए। इस प्रकार बहुल दिव्यांग के शिक्षण का प्रथम अध्याय उन्हें दिन प्रतिदिन के काय्र करने योग्य बनाना है और स्व-सहायता करने की कला सिखाता है।

बौद्धिक कार्य सिखाना- बौद्धिक कार्य सिखाने के लिए सम्पूर्ण तैयारी और कार्य विश्लेषण ;ज्ंेा ।दंसलेपेद्ध की आवश्यकता है। यारनाल द्वारा ज्यामिति में बहरे और अन्धे बालकों को पढ़ाने का अत्यन्त प्रभावशाली तरीका है और यह एक उदाहरण भी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के पाठ विभिन्न विषयों और क्षेत्र में विकसित किये जाने चाहिए। गोल्ड और रिटनहाउन के द्वारा प्रतिपादित उन निर्देशों जो अन्धे और बहरे बहुल दिव्यांग को शिक्षित करने के लिए आठ मानक चिह्नों के सम्बन्ध में हैं, का पालन भी बौद्धिक कार्यो के शिक्षण में सहायक हो सकता है। संगीत और कला का प्रयोग भी शिक्षण विधि के रूप में हो सकता है। संगीत और कला मुख्यतः निम्नलिखित रूप से सहायक सिद्ध होते हैं-

1. गति शिक्षण
2. संबोध शिक्षण
3. सामंजस्य शिक्षण
4. विश्राम शिक्षण

मुख्य धारा में लाना Main Streaming)

बहुल विकलांगों को मुख्यधारा से जोड़ना एक मुख्य उदेश्य है। सभी बहुल दिव्यांग बालकों को मुख्य धारा से नहीं जोड़ा जा सकता अर्थात् सामान्य बालकों वाले स्कूलों में नहीं ला सकते, क्योंकि गम्भीर रूप से पीड़ित बालकों को व्यक्तिगत ध्यान, विशेष प्रोग्राम, विशेष उपकरण और विशेष अध्यापक की आवश्यकता होती है। परन्तु कुछ बहुल दिव्यांग बालकों को प्रारम्भिक प्रशिक्षण के उपरान्त सामान्य बालकों वाले विद्यालयांे में बैठाया जा सकता है और बैठाना भी चाहिए। ऐसे बहुल दिव्यांग बालक जो सीमित रूप से पीड़ित हो उन्हें सामान्य बालकों के साथ बैठाकर पढ़ाना चाहिए। जैसे एक बालक अपंग है, थोड़ा बोलने का दोष रखता है और कम देखता है। यह सीमित बहुल अपगतायुक्त बालक सामान्य कक्षा में प्रवेश लेने योग्य है। परन्तु ये ही अपंगताएँ यदि अत्यधिक हो तो बालक को पृथक कक्षा में बैठाना होगा। एक अपंग, गूँगा और अन्धा बालक पृथक् विद्यालय में ही शिक्षा ग्रहण कर सकता है।

शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन (Educational and Vocational Guidance)

बहुल दिव्यांग बालक की शिक्षा के अन्तर्गत उसे शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन देना भी शामिल है। बालक को किन कौषलों को सीखना चाहिए कि वह समुचित व्यवसाय कर सके, यह निर्देशन का उदेश्य है। कुछ बहुल दिव्यांग बालक छोटे-मोटे कार्य तथा वस्तुएँ रखना-उठाना, दरवाजा खोलना, बन्द करना, ढक्कन उठाना, लेबल लगाना, कागज मोड़ना आदि कर सकते हैं। अतः फैक्टरी मालिकों से सहयोग कर ऐसे बालकों को उनकी क्षमतानुसार इन कौषलों की शिक्षा दी जानी चाहिए।

इस प्रकार, बहुल दिव्यांग बालक की शिक्षा विशेष शिक्षण प्रोग्रामों, विशेष कार्यशालाओं, संविधाओं, विशेषज्ञों और निर्देशन सेवाओं के आधार पर की जा सकती है। परन्तु इन सबसे ऊपर है- मनोवैज्ञानिक व्यवहार। मनोवैज्ञानिक उपचारिक वातावरण, व्यक्तिगत स्नेह व प्रोत्साहन बहुल दिव्यांग की शिक्षा हेतु अनिवार्य शैक्षिक कारक है।

बहुबाधित बालकों सम्बन्धित प्रारूप

(Structure of Multi-Handicapped Children)

प्रमुख वर्ग से बाधित	शारीरिक रूप से मन्दित	बहुबाधिता मानसिक रूप असमर्थी बालक	अधिगम	शिक्षण प्रावधान
1. प्रतिभाशाली बालक	स्वास्थ्य बाधित दमा रोग अस्वस्थ	प्रखर बुद्धि स्तर	सामान्य तथा अधिक	विशिष्ट शिक्षा तथा मुख्यधारा
2. मानसिक मन्दित	अस्वस्थ	मन्द बुद्धि	मन्द अधिगामी अधिगम असमर्थी भाशा तथा वाणी बाधित	विशिष्ट शिक्षा तथा मुख्यधारा
3. दृष्टि बाधित बालक	शारीरिक अपंग स्वास्थ्य बाधित	मनसिक मंदित	मंद अधिगामी अधिगम असमर्थी	विशिष्ट शिक्षा बेल लिपि का उपयोग मुख्य धारा उदाहरण सूरदास तथा मिल्टन
4. श्रवण बाधित बालक	शारीरिक अपंग	कम तथा सामान्य	भाषा तथा वाणी बाधित	विशिष्ट शिक्षा तथा समन्वित शिक्षा मुख्य धारा
5. अस्थि बाधित बालक	स्वास्थ्य बाधित शारीरिक अपंग	मंद बुद्धि	अधिगम असमर्थी	सामान्य शिक्षा उदाहरण अष्टावक्र
6. स्वास्थ्य बाधित बालक	शारीरिक दोष अजीर्ण रोग दमा आदि	सामान्य तथा अधिक बुद्धि स्तर	अधिगम असमर्थी	मुख्यधारा उदाहरण डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद

7. वाणी बाधित बालक	शरीरिक अपंग श्रवण बाधित	सामान्य बुद्धि स्तर	भाषा तथा वाणी बाधित	विशिष्ट शिक्षा तथा मुख्यधारा
8. अधिगम असमर्थी बालक	सामान्य	मनसिक मंदति	भाषा व वाणी बाधित	समन्वित शिक्षा तथा मुख्यधारा
9. मन्द अधिगामी बालक	समान्य	मनसिक मंदित	भाषा व वाणी बाधित	विशिष्ट शिक्षा सामान्य शिक्षा
10. सामाजिक तथा संवेगात्मक विक्षिप्ता बालक	ममूली स्वास्थ्य दोष का होना	मंद बुद्धि स्तर	अधिगम असमर्थी मंद अधिगामी	मुख्यधारा की शिक्षा

7.4 श्रवण बाधित बालक

जब किसी बच्चे/व्यक्ति की श्रव्य षक्ति सामान्य से कम हो जाये तो उसे श्रव्य बाधिता ग्रस्त निःशक्तता माना जाता है। इसमें पूर्ण श्रव्य बाधिता ग्रस्त अपनी श्रवण शक्ति को पूर्णतया गंवा देता है। तथा उसे संकेतात्मक भाषा पर निर्भर रहना पड़ता है। ऐसे बच्चों को सामान्य स्कूलों में पढ़ाना दुष्कर कार्य होता है।

श्रवण बाधित बालक वह होते हैं जिनकी श्रवध संबंधी शारीरिक रचनाएं क्षतिग्रस्त होती हैं तथा उनकी वाणी तथा भाषा के विकास में कठिनाई होती है। ऐसे बालकों की सुनने की क्षमता कम होती है। कुछ बालकों में श्रवण क्षमता का स्तर कम होता है जबकि अन्य बालकों में अधिक।

श्रवण बाधिता ग्रस्त बालक से अभिप्राय

श्रवण बाधित बालक ऐसे बालक हैं जिनकी सुनने की क्षमता नष्ट हो जाती है तथा बोलने और भाषा में परेशानी का सामना करते हैं ऐसे बालकों को किसी अन्य व्यक्ति की भाषा सुनने तथा समझने में परेशानी होती है क्योंकि ये सुनने की क्षमता खो चुके होते हैं। सभी बालकों के श्रवण बाधिता की क्षमता समान नहीं होती है। जो बालक सुुनने की क्षमता को पुर्ण रूप से खो देते हैं वे अन्य बालकों की अपेक्षा गंभीर रूप से कठिनाईयों का सामना करते हैं।

कम सुनने वाले बालक वे हैं जो श्रवण क्षमता को कुछ सीमा तक खो देेते है। ऐसे बालक जोर से की गई ध्वनि अथवा बोली गई आवाज को सुन सकते हैं। इस प्रकार की आवाज को सुनने के लिये उन्हें श्रवण यंत्र की आवश्यकता नहीं होती है। श्रवण यंत्र यदि इन्हें उपलब्ध हो तो आवाज को और अच्छी प्रकार से सुन सकेंगे। ऐसे बालकों को सामान्य स्कूलों में तथा सामान्य बालकों के साथ शिक्षा देने में कठिनाई नहीं आती। ऐसे अधिकांष बालक सामान्ष शिक्षा कक्ष में शिक्षा प्राप्त कर

सकते हैं गंभीर श्रवण बाधित वे बालक हैं जो जोर से बोली गई आवाज को भी सुनने में असमर्थ हैं। ऐसे बालकों को विशेष प्रविधियों द्वारा प्रारंभिक निपुणता की आवश्यकता होती है तथा इसके पश्चात् बालकों का सामान्य स्कूल में शिक्षा के लिये प्रवेश कराया जा सकता है। श्रवण यंत्र उन्हें सुनने तथा कार्य करने में सहायक होती है।

जब किसी बालक के श्रवण अंगों में कोई दोश होता है तब उसे श्रवण बाधित कहते हैं। ये दोष कान के बाहर, अंदर तथा मध्य में भी हो सकता है। श्रवण बाधिता से बालक सुनने में असमर्थ हो जाता है। जिसे श्रवण असमर्थता भी का सकते हैं। श्रवण बाधित बालक की श्रवण इन्द्री सामान्य रूप से कार्य नहीं करती।

श्रवण विकार युक्त (निःशक्तता): अधिगम में श्रवण कौशल का महत्वपूर्ण स्थान है, यह छात्र की ग्रहणीय क्षमता पर अत्यधिक प्रभाव डालता है। जब एक व्यक्ति छात्र/बच्चे की श्रवण षक्ति (सुनने की क्षमता) सामान्य (औसत) सुनने वाले की षक्ति से कम हो जाए तो वह श्रवण विकार युक्त निःशक्तता कहलाती है। इसमें सुनने की क्षमता पूर्णतः प्रभावित होती है। यह जन्मजात भी होती है, कभी-कभी दो-तीन वर्ष की आयु में बीमारी या दुर्घटना के कारण अर्जित भी हो सकती है।

आंशिक श्रवण बाधिता ग्रसत निःशक्तता

इसमें श्रवण क्षमता आंशिक रूप से प्रभावित होती है। इस प्रकार के बहरेपन से पीड़ित बच्चे, व्यक्ति लगभग **6** फीट की दूरी पर हो रही बातचीत को सुन पाने में कठिनाई महसूस करते है। यदि इस प्रकार का बहरापन अधिक आयु में हो तो भाषा के विकास पर ज्यादा फर्क नहीं पड़ता।‘‘कम सुनाई देने की निःशक्तता’’ से बेहतर कान में बातचीत स्वरूप की श्रेणी की आवृत्तियों में साठ डेसिबल अथवा उससे अधिक का लोप अभिप्रेत है।

आंशिक श्रवण क्षीणता वाले बच्चे वे होते हैं जिनकी श्रवण क्षतिग्रस्त हो गई हों और उनके बोलने और भाषा विकास में कठिनाई आती हो। श्रवण क्षीणता की मात्रा कुछ बच्चों में कम होती है और जबकि कुछ में अधिक। श्रवण क्षीणता वाले अधिसंख्य बच्चे सामान्य विद्यालयों में श्रवण सहायक साधनों की सहायता से पढ़ रहे हैं। बहरे बच्चों को अधिगम से पहले तैयार करने की आवश्यकता होती हैं। उनको होठों को पढ़ने जैसे विशेष प्रविधियों द्वारा आधारभूत कौशलों के लिए तैयार करने की आवश्यकता होती हैं। हल्की श्रवण क्षीणता को पहचानना कठिन है क्योंकि यह दूसरी अशक्ततओं की भांति दिखाई नहीं पड़ती है।

श्रवण बाधित बालकों की पहचान के उपाय/विधियां

श्रवण बाधित क्षमता के आकलन हेतु जांच के क्षेत्र-

1. सुनने की क्षमता
2. वाणी का विकास

3. भाषा का विकास
4. संकेतिक संप्रेषण
5. संज्ञानात्मक क्षमता
6. विकासात्मक स्तर
7. शैक्षिक कौशल
8. व्यावसायिक स्तर
9. व्यवहार परीक्षण आदि

इन परीक्षाओं के लिए कुछ उपकरण एवं प्रशिक्षण का प्रयोग जैसे श्रवण के लिए ओडियो मीटरी जांच, ई.ई.जी., मनोवैज्ञानिक परीक्षण-सिंगवीन, फार्म बोर्ड, वाईन लैंड सोशल मैच्यूरिटी स्कूल, व्यक्तित्व परीक्षण, व्यवहारिक चैकलिस्ट आदि।

बाधित बालकों की पहचान उनसे बोलने पर हो सकती है। पंरतु उनकी पहचान श्रवण यंत्रों के द्वारा करना उचित होगा। इसी प्रकार, अन्य श्रवण क्षतियुक्त बालकों की भी पहचान श्रवण यंत्रों, तथा-श्रवणमापक तथा अन्य तकनीकों से की जानी चाहिए।

1. **बालक का जन्म से अब तक एकल अध्ययन**- ये विधि सबसे उत्तम विधि मानी जाती है। क्योंकि इसके अन्तर्गत जन्म से लेकर वर्तमान स्थिति तक के सभी प्रकार के बालक संबंधी सूचनाओं को संकलित किया जाता है। इन सूचनाओं के अध्ययन से श्रवण बाधिता के सही कारणों का बोध होता हैं।
2. **विकासात्मक अवस्था का मापन**-श्रवण बाधित बालकों की पहचान के लिये उनकी विकासात्मक अवस्थाओं का ध्यान में रखा जाता है। क्योंकि बालक के विकास की अवस्थाओं का सीधा संबंध उसकी ज्ञानेन्द्रियों के विकास से होता है।
3. **मेडिकल परीक्षण**-इस प्रकार की मापनी के द्वारा श्रवण बाधितों की पहचान सुगमता से होती है। इसमें चिकित्सक की भूमिका महत्वपू्ूर्ण होती है।
4. **बालक के व्यवहार का निरीक्षण**- निरीक्षण से ही उसकी श्रवण बाधिता का बोध होता है। इसके मुख्य व्यवहार के लक्षण निम्नलिखित है-

1. अपने सिर वह एक तरफ मुड़कर वह बात सुनने का प्रयत्न करता है।
2. वह अनुदेशनों का अनुसरण करने में समर्थ रहते हैं।
3. कक्षा के अंतर्गत अक्सर शिक्षक से पाठ्यवस्तु की पुनर्रावृत्ति या दोहराने को कहते है।
4. ऐसे बालकों की दृष्टि बोलने वाले के होटो की तरफ अधिक रहती है।
5. वह वाद-विवाद के कार्यक्रम में हमेशा संकोच करते हैं।
6. वाणी की कठिनाई के कारण अपनी अभिव्यक्ति में अधरे हो जाते हैं।
7. मनोनाड़ी परीक्षण-इसकी सहायता से श्रवण बाधित से संबंधित नाड़ी की क्रियाओं का आकलन किया जाता है। इसका कारण मानसिक दोष होता है। अधिकांश श्रवण बाधितों में इसी प्रकार

का दोष पाया जाता है। एक योग्य चिकित्सक इसकी पहचान करके और इसका उपचार कर देता है।

श्रवण बाधित ग्रस्त बालकों के लक्षण

श्रवण बाधिता ग्रस्त बालकों के व्यवहारिक लक्षण निम्नलिखित होते है-

1. शाब्दिक निर्देशनों को समझने में और अनुसरण करने में कठिनाई होती है।
2. एक ओर को अपना सर झुका करके सुनने का प्रयास करता है।
3. ऐसे बालक पहले किए हुए विधियों के बारे में अधिक सजग कहते हैं तथा ध्वनि पर ध्यान नहीं दे पातें हैं।
4. जानकारी के अभाव में भी वार्ता के बीच में निर्रथक बोल पड़ते है।
5. प्रश्नों को बार-बार दोहारने के लिये अध्यापक से कहते है।
6. धीमी आवाज में बोलते हैं।
7. समान ध्वनि के षब्दों में उसे अक्सर वहम होता है।
8. व्यवहार में एकाग्रता, निन्तरता नहीं होती।
9. शब्दों के सही उच्चारण में भी उसे कठिनाई होती है।
10. बिना जानकारी के भी कुछ बड़-बड़ाता रहता है।
11. कक्षा में ध्वनि के आने/बजने के स्त्रोत नहीं जान जाता।
12. अध्यापकों के होटों की गतिविधि और उसे हाव-भाव पर ध्यान देते हैं।

श्रवण बाधितग्रस्त बालकों को वर्गीकरण

- वे समस्त बालक जिन्हें सुनने के संबंध में कोई कठिनाई है श्रवण बाधित बालक कहलाते हैं। ध्वनि के परिसर के अनुसार श्रवण बाधित बालकों को चार भागों में बांटा जा सकता है-
- न्यून श्रवण बाधित बालक-सामान्य बातचीत का स्तर **65** डी. वी. होती है। किंचित श्रवण बाधित बालकों को **35-51** डी. वी. का श्रवण बाधित होता है, अर्थात् ये बालक **54** डी. वी. तक की ध्वनि को नहीं सुन पाते हैं यदि सामान्य स्तर पर बातचीत की जाये तो ये बालक आसानी से सुन लेते हैं परंतु उससे धीमें स्तर से बोलने पर ये बालक नहीं सुन पाते हैं।
- मंद श्रवण बाधित बालक-ये बालक **55-69** डी. वी. का क्षय रखते है अतः सामाय स्तर, अर्थात् **65** डेसिबल्स स्तर पर बोलने पर ये बालक सामान्यतः नहीं सुन पाते। थोड़ा ऊंचा बोलने पर सुन पाते हैं।
- गंभीर रूप से श्रवण बाधित बालक-इन बालकों में **70-89** डी. वी. श्रवण बाधिता होती है और ये काफी ऊंचा बोलने पर जो सामान्यतः कठिन होता है, सुन पाते हैं।

- पूर्ण श्रवण बाधित बालक-ऐसे बालकों को श्रवण बाधित **90** और इससे आगे डी. वी. स्तर का होता है। ये बहुत ऊंचा बोलने पर भी कुछ ही शब्द सुन पाते हैं अथवा कुछ अक्षर सुन लेते हैं तो कुछ बालक कुछ भी नहीं सुन पाते हैं। ये बधिर (कमं)ि हैं। इस वर्गीकरण को सारांश रूप में निम्नलिखित तालिका में दिया गया है-

श्रवण बाधिता का वर्गीकरण

स्तर	श्रवण बाधिता के प्रकार	डी. बी. स्तर	बाधिता प्रतिशत
1.	कम बाधित बालक Mild	25 से 40 डी.बी. तक	40 प्रतिशत
2.	मंद बाधित बालक Modrate	41 से 55 डी.बी. तक	40 से 50 प्रतिशत
3.	गंभीर बाधित बालक Modrate Severe 56.69	70 से 90 डी.बी. तक	50 से 75 प्रतिशत
4.	पूर्ण / गहन बाधित बालक	90 से 100 डी.बी. तक	100 प्रतिशत

श्रवण बाधिता के कारण

जन्म के बाद बीमारी, चोट, दुर्घटना, सिर पर चोट लगना, ऊंचाई से गिरने पर कान के श्रवण यंत्र में कमी आना, कान पर जोरदार तमाचा मारना आदि।

यह दो अवस्थाओं में मुख्यतः

- जन्मजात
- गर्भावस्था में कोई कमी हो जाना, नशीली औशधि सेवन प्राण वायु के अभाव, जन्म के बाद कान में संक्रमण, दुर्घटना, घातक रोग कनफेडा, इन्फ्लुएंजा आदि के कारण हो सकता है। श्रवण बाधित बालकों के कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं-

जन्म से पूर्व और जन्म के समय के कारण

श्रवण बाधित कुछ बालकों में जन्मजात होती है। इसके पीछे जो कारण कार्य करते हैं, वे इस प्रकार हैं-

1. असुरक्षित प्रसव प्रक्रिया के कारण- यदि प्रसव के समय रक्तप्रवाह अधिक हो जाय, रक्त का विकृति संचार हो, ऑक्सीजन का अभाव हो तो बालक के श्रवण यंत्र प्रभावित हो सकते हैं।
2. गर्भाव्यवस्था के दौरान श्रवण बाधिता-जब मां कोई जहरीले पदार्थ का सेवर कर ले, शराब का सेवन करे, असंतंलित भोजन ग्रहण करे, दूषित भोजन करे अथवा बीमार रहे।
3. असंतुलित भोजन के कारण- इस अवस्था में जब मां को संतुलित भोजन नहीं मिलता तो बालक विभिनन रोगों से पीड़ित भी होने लगता है।
4. जर्मन खसरा के कारण-**1980** में जर्मन खसरा महामारी के रूप में फैला है। चिकित्सकों के अनुसार यह श्रवण दिव्यांगता का एक कारण है।
5. आनुवांशिक कारण-श्रवण संबंधी दोषों का एक प्रमुख कारण आनुवंशिकता है।
6. समय से पूर्व प्रसव-असामयिक प्रसव से श्रवण दोष उत्पन्न होता है।
7. दवाओं का अधिक उपयोग-गर्भावस्था में समय उन्हें अधिक दवाओं के सेवन करने से या किसी तेज दवा के सेवन से भी बालक के विकास और उसके अंगों को प्रभावित करती है।

जन्म के पश्चात् के कारण

ऐसा निम्नलिखित कारणों से होता है-

1. दीर्घ आयु के कारण-वृद्धवस्था में शारीरिक तंत्र कमजोर लगते हैं। अतः सुनाई कम पड़ता है।
2. बीमारी के कारण-कुछ बीमारियां ऐसी हैं जो श्रवण दोष उत्पन्न करती हैं।
3. उच्च ध्वनि के कारण-कभी जोर का धमाका कर्ण पटल को फाड देता है। इसी प्रकार निरन्तर उच्च ध्वनि को सुनते रहने से श्रवण दोष उत्पनन करती है।
4. असंतुलित आहार के कारण-यदि बालक को संतुलित आहार नहीं मिलता है तो भी उसकी श्रवण षक्ति विपरीत रूप से प्रभावित हो सकती है।
5. दुर्घटना के कारण-कोई दुर्घटना भी श्रवण तंत्र को हानि पहुंचा सकती है जिससे श्रवण दोष उत्पन्न हो सकता है। किसी लकड़ी या पिन से कान का मेल निकालते समय भी बालक अनजाने में कर्ण पटल (प्दहजमतदंस म्ंत डमउइतमंदबम) को नुकसान पहुंचा देता है।
6. अन्य कारण-आनुवांशिकता, माता-पिता के बीच रक्त अयोग्यता, कान के पीछे की तनी हड्डियों में हलचल (गति) अभाव, सक्रमण, आघात के कारण कान के पर्दे पर चोट लगना, लंबे समय से चली आ रही कान की समस्या का समुचित उपचार न कराना।

श्रवण बाधिताग्रस्त बालकों की समस्याएं

बालक के श्रवण बाधिज होने के परिणामस्वरूप कई कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं इन्हें शैक्षिक और व्यक्तिगत-सामाजिक दो भागों में रखा जा सकता है। ये प्रकार हैं-

- शिक्षा संबंधित समस्याएं

कुछ प्रमुख शैक्षिक समस्यायें निम्नलिखित हैं-

1. शैक्षिक उपलब्धि निम्न हो जाती है।
2. बोलने का विकास नहीं हो पाता है।
3. कक्षा-कक्ष में पढ़ाई गयी बातों का अधिगम अन्यंत कठिन हो जाता है।
4. परीक्षणों का प्रयोग भली प्रकार नहीं किया जा सकता है।
5. भाषा का विकास नहीं हो पाता है।

1. व्यक्तिगत-सामाजिक समस्याएं
    1. बालक में स्वभाव संबंधी झल्लाहट आ जाती है।
    2. उसमें भावना ग्रंथियों जन्म लेती हैं।
    3. प्रत्याहार या पलायन की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है।
    4. बालक विभिन्न सामाजिक क्रियाकलापों में पिछड़ जाता है।
    5. आत्मविमोह उत्पन्न होता है।
    6. सामंजस्य की समस्या उत्पन्न होती है। बालक सामान्य छात्रों के साथ हिल-मिल नहीं पाता है।
    7. जीवन के प्रति निशेधात्मक अभिवृत्ति उत्पन्न होती है।
    8. बालक के मन में नकारात्मक स्वबोध उत्पन्न होता है।
    9. श्रवण बाधित बालक का व्यवहार कुछ सीमा तक अनुचित हो जाता है।
    10. बालक कुंठाग्रस्त होता है।

इस प्रकार शैक्षिक और व्यक्तिगत-सामाजिक परिणाम मिलकर बालक के व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं होने देते हैं। यह देखा गया है कि ऐसे बालक बहुधा संभ्रान्तिपूर्ण व्यक्तित्व हो जाता हैं।

श्रवण क्षतिग्रस्त बालकों की विशेषताएं

कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

1. श्रवण क्षतियुंक्त बालकों के साथ परिक्षणों का प्रयोग भली प्रकार नहीं किया जा सकता है।
2. श्रवण क्षतियुक्त बालकों का कक्षा-कक्षा में पढ़ायी गई बातों को अधिगम अत्यंत कठिन हो जाता है।
3. श्रवण क्षतियुक्त बालकों के बोलने का विकास नहीं हो पाता है।
4. श्रवण क्षतियुक्त बालकों में भाषा का विकास अन्य बालको की भांति नही हो पाता।
5. श्रवण क्षतियुक्त बालकों की शैक्षिक उपलब्धि अन्य बालकों की अपेक्षा बहुत कम होती है।

सावधानियां

1. कक्षा में बाहरी षोर न आए।
2. लिखित निर्देशों के लिए ष्यामपट्ट, बुलेटिन बोर्ड की समुचित व्यवस्था हो।
3. कक्षा में प्रकाश की उचित व्यवस्था हो।
4. शिक्षक का चेहरा बच्चों के सम्मुख स्पष्ट नजर आए जिससे बच्चे ओष्ठ पठन कर सकें।
5. शिक्षक सांकेतिक भाषा का प्रयोग करे।
6. कक्षा में समूह श्रवण यंत्र की व्यवस्था हो।
7. शिक्षक छात्रों के पास खड़ा होकर पढ़ाये।
8. पढ़ाने की गति धीमी, स्वर तेज हो।
9. शिक्षक पढ़ाते समय मुंह पर कुछ न रखें।
10. भाषा एवं वाक् प्रशिक्षण की व्यवस्था हो।
11. वाक् चिकित्सा कराई जाए।
12. संसाधन कक्ष में आवश्यक उपकरण एवं शिक्षण सहायक सामग्री की व्यव्स्था हो।

7.5 दृष्टि बाधित निःशक्त बालक

इंद्रियों में दृष्टि इंद्री का महत्वपूर्ण स्थान है। अधिकतर सूचनाएं दृष्टि द्वारा मस्तिष्क में पहुुंचती हैं। अतः दृष्टि की छोटी-सी अक्षमता अत्यंत महत्व रखती है। दृष्टि संबंधी दोष बालक के मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक शैक्षिक तथा व्यवसायिक क्षेत्रों पर प्रभाव डालता है।

दृष्टि बाधित बालकों का अर्थ एवं परिभाषा

दृष्टि बाधित बालक वे बालक होते हें जो ठीक प्रकार से देख पाने में असमर्थ होते हैं। कुछ दृष्टि बाधित बालक मोटे छापे की पुस्तक अथवा पठन सामग्री पढ़ पाने में समर्थ होते हैं। कुछ बालक गंभीर रूप से दृष्टि बाधित होते हैं। उनमें देखने की क्षमता पर्याप्त रूप से कम होती है। ऐसे बालक देखने की विधियों द्वारा शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकते हैं। दृष्टि बाधित को स्नेलन चार्ट के माध्यम से मापन किया जाता है ऐसे बालकों की दृष्टि क्षमता खो देते हैं वह नेत्रहीन रोग से प्रभावित होेते हैं तथा वे कुछ नहीं देख पाते।

दृष्टि बाधित निःशक्तता की परिभाषाएं

(क) नेत्रहीनः ''नेत्रहीन का अभिप्राय जब कोई व्यक्ति निम्नलिखित परिस्थितियों से ग्रसित हो।

दिव्यांग जन अधिनियम **1995** के अनुसार-

1. दृष्टि का पूर्ण अभाव, अथवा

2. बेहतर आंख में दृष्टि सुधारने वाले लैंसों के साथ दृष्टि-बाधिता **6/60** अथवा **20/200** (स्नेलैन) से अधिक, अथवा

3. दृष्टि क्षेत्र की सीमा जिससे **20** डिग्री का कोण व्याप्त हो अथवा इससे बदतरः

1. अमेरिका के मैडिकल संघ **(1934)** में कानूनी परिभाषा दी थी जिसे सभी देश स्वीकार करते हैं। परिभाषा इस प्रकार है-

कानूनी दृष्टि से पूर्ण दृष्टि बाधित उन्हें मानते-

1. जिनका दृष्टि का क्षेत्र सीमित हो और **200** का कोण बनाती है। उनकी आंखों सुधार के बाद उत्तम हो।

2. जिनकी दृष्टि क्षमता **20/200** तथा इस से कम हो उनकी आंखों में सुधार के बाद उत्तम हो।

3. भारतवर्ष सरकार के समाज कल्याण मंत्रालय ने **(1987)** में दृष्टि बाधितों की परिभाषा दी,वह इस प्रकार है।

- दृष्टि बाधित **6/60** या **20/20** से अधिक न हो और चश्में के प्रयोग से आंख उत्तम हो। स्लैलन चार्ट से परीक्षण हो।
- दृष्टि का क्षेत्र सीमित हो और **200** का कोण बनता हो और से कम।
- अपनी पूर्ण दृष्टि खो चुके हो।

इन परिभाषाओं के आधार पर दृष्टि बाधित बालकों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. आंशिक रूप से या निम्न दृष्टि बाधित तथा

2. पूर्ण रूप से दृष्टि बाधित या नेत्रहीन बालक।

शिक्षा की दृष्टि से दृष्टि बाधित बालकों की परिभाषा की गई है- दृष्टि बाधित बालक उन्हें कहते है जिनकी दृष्टि से खो चुकी हो और ब्रेललिपि, तथा अन्य श्रवण शिक्षण सामग्री का लाभ उठा सकते हैंउन्हें आंशिक रूप से बाधित बालक कहते हैं जो चश्में की सहायता से मुद्रित पाठ्यवस्तु तथा दृश्य शैक्षिक सामग्री का उपयोग कर लेते हैं।

(ख) निम्न दृष्टि निःशक्तताः दृष्टि हमारे शरीर का अति महत्वपूर्ण भाग है जो कि हमारे जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके कारण संसार की अधिकतम गतिविधियां को देख पाने का सौभाग्य संभव होता है, दृष्टि में होने वाले विभिन्न विकार दृष्टि निःशक्तता के कारण बन जाते हैं। इसके तहत जो बच्चें/छात्र स्नेलन चार्ट से **20** फुट की दूरी पर खड़ा होकर केवल उसनाम या शब्द चिह्न को पहचानता है जिसे सामान्य दृष्टि **(20/70)** वाला **70** फीट की दूरी से पहचानने में सक्षम हो। उसे निम्न दृष्टि निःशक्तता से ग्रस्त माना जाएगा।

(अ)**आंशिक रूप से दृष्टि बाधित बालक**

आंशिक रूप से दृष्टि बाधित बालक वह हैं जो कि यद्यपि दृष्टिकोण से असमर्थी हैं तथापि वह पढ़ सकते है। इस समूह के बालकों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. ऐसे बालक, जो नेत्र संबंधी रोगों से पीड़ित हैं या ऐसे रोगों से, जो दृष्टि को प्रभावित करते हैं।

2. ऐसे बालक, जिनकी दृष्टि एक्यूटी (टपेनंस ।बनपजल) **20/70** तथा **20/200** के मध्य होती है।

3. ऐसे बालक, जो कि उपरोक्त बालकों में सम्मिलित नहीं है और जिनके पास औसत मस्तिष्कहै तथा जो डाक्टरों तथा शिक्षाशात्रिस्यिों के अनुसार कम देखने वाले बालकों को दिये गये साधनों तथा सामान द्वारा अधिक लाभान्वित हो सकते हैं।

4. ऐसे बालक, जो गंभीर तथा बढ़ाने वाली दृष्टि संबंधी कठिनाइयों में पीड़ित होते है।

आंशिक दृष्टिहीनता: ''आंशिक दृष्टि बाधिता ग्रस्त'' से वह व्यक्ति होता है जिसकी दृष्टिक-क्रिया उपचार के अथवा मानक परावर्तित सुधार करवाने के बाद भी खराब हो परंतु जो समुचित सहायक यंत्र से किसी काम की योजना बनाने अथवा उसे निष्पादित करने में दृष्टि का प्रयोग करता हो अथवा उसका प्रयोग करने में संभावनीय रूप से समर्थ हो।

मध्यम रूप में ऐसे दृष्टि बाधितों के नेत्रों के देखने की क्षमता **20/70** होती है। इसका अर्थ यह है कि सामान्य बालक यदि **70** फीट दूर से किसी वस्तु की देख सकता है तो ऐसे दृष्टि बाधित बालक केवल **20** फीट पर रखी हुई वस्तु को देखने के योग्य होते हैं। दृष्टि बाधित (नेत्रहीन) वे बालक होतहैं जो मौखिक अथवा ब्रेल के माध्यम से शिक्षा पाने की आवश्यकता रखते हैं। ऐसे बालकों की देखने की क्षमता का परिमाण **2/20** तक भी हो सकता है। शिक्षा ग्रहण करने स्कूल में प्रवेश पाने से पहले विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। ऐसे बालकों का **;** प्रशिक्षण तथा अधिकांश मौखिक अनुदेशन उनकी दृष्टि की क्षमता पर निर्भर करता है।

दृष्टि बाधित बालक ऐसे बालक होते हैं जो ठीक प्रकार से देखने में समर्थ नहीं होते हैं। कुछ बालक मोटे छापे की पुस्तकें पढ़ सकते हैं तथा वे सामान्य वातावरण में शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। लेकिन गंभीर रूप से दृष्टि बाधित बालक जो वस्तुओं को देखने में असमर्थ होते हैं वे दृश्य **;**टपेनंसद्धविधियों द्वारा शिक्षित नहीं किये जा सकते। उनकी देखने की क्षमता स्नेलन चार्ट की सहायता से मापी जाती है।

शैक्षिक दृष्टि पूर्ण रूप से दृष्टि बाधित उनकों कहते है जिन्हें ब्रेल लिपि से सीखने में सुगमता होती है। आंशिक रूप से दृष्टि बाधित उन्हें कहते है जो मुंद्रित पाठवस्तु का लाभ लेते है। इन्हें मुद्रित बाधित भी कहते हैं।

दृष्टि बाधित/पूर्णदृष्टिहीन निःशक्त बालक

पूर्ण दृष्टिहीनताः ऐसी स्थिति जिसमें बालक को प्रकाश तथा अंधकार का अनुभव नहीं होता, तथा वह पूर्ण रूप से कुछ भी देखने के योग्य नहीं होता। ऐसे बच्चों के लिए विशेष विद्यालय

पहचानः

1. चश्में की मदद से कं ेद्रीय तीक्ष्णता (सेंट्रल एक्यूटी) ज्यादा बेहतर आखें में **6/60** या **20/200** से ज्यादा नहीं बढ़ती।
2. जब दृष्टि अत्यंत सीमित हो वह **20** प्रतिशत से ज्यादा अपनी आंख की पुतली नहीं घूम पाती हो।

दृष्टि बाधित बालकों के लिए पहचान चिह्न

इनकी पहचान के लिए स्नैलन चार्ट का उपयोग किया जाये। यह सबसे सरल परीक्षण है। यह दृष्टि बाधितों को पहचान की सरल विधि है। शिक्षक द्वारा इस चार्ट का प्रयोग किया जा सकता है। जो बालक जन्म से नेत्रहीन होते है उनकी पहचान माता-पिता द्वारा ही कर ली जाती है। जो आंशिकरूप से बाधित होते हैं उनकी पहचान पूर्व प्राथमिक कक्षाओं में विद्यालय के कार्यों जैसेपढ़ने, लखने से पहचान हो जाती है। प्रशिक्षित अध्यापकों की सहायता से इनकी पहचान ही जाती है। कुछ बालकों की आंखें सामान्य दिखाई देती है और चेहरा भी सामान्य प्रतीत होता है, इनकी पहचान अधिक समय में हो पाती है। एक शिक्षक सामान्य रूप से दृष्टि-बाधित बालकों की पहचान कर लेताहै। इसके लिये व्यवहार सूची का उपयोग करता है। इस व्यवहार सूची को राष्ट्रीय शिक्षा परिषद ने बनाया है। यदि एक से अधिक व्यवहार के मिलने पर ऐसे बालकों का डाक्टरी परीक्षण कराया जाय।

(ब) दृष्टि बाधित बालकों के लिए पहचान के प्रमुख लक्षण

दृष्टि बाधित बालकों के कुछ प्रमुख लक्षण होते हैं जो इस प्रकार हैं-

1. प्रकाश के प्रति क्रियाशील होता है।
2. प्रकाश के प्रति अनावश्यक रूप से संवेदन शील रहना।
3. श्यामपट पर लिखे हुए को नहीं पढ़ पाता है।
4. पढ़ने तथा लिखने की समस्याये रहती हैं
5. पाठ्यवस्तु को पास रखकर ही पढ़ता है।
6. पढ़ते समय वर्तनी तथा अक्षरों में भ्रम होता है।
7. श्यामपट पर लिखे हुए को नहीं पढ़ पाता है।
8. वाक्यों के ऊपर व नीचे के शब्दों का चयन कर लेता है।
9. आंखे तिरछी होना।
10. सिर की अवस्था असमान्य रहती है।

इसके अतिरिक्त पढ़ते समय जल्दी-जल्दी, बार-बार पलकें झपकाना, आंखे निकट लाकर पढ़ना इत्यादि की दृष्टि बाधित बालकों की पहचान दें।

दृष्टि बाधित ग्रस्त बालकों का वर्गीकरण

दृष्टि बाधित बालकों का वर्गीकरण डाक्टरी परीक्षण के आधार पर किया जाता है।

दृष्टि बाधितों का वर्गीकरण

वर्ग स्तर	उत्तम आंख	क्षति पूर्ण आंख	बाधित की प्रतिशत
वर्ग –ट	6/6 से 6/18	6/24 से6/36	20 प्रतिशत
वर्ग –ι	6/18 से 6/36	6/60 से शून्य	40 प्रतिशत
वर्ग –ιι	6/36 से 6/60 या दृष्टि का क्षोम (100–20)	3/60 से शून्य	75 प्रतिशत
वर्ग –ιιι	3/60 से 1/60	1 से शून्य	100 प्रतिशत
वर्ग –प्ट	1 से शून्य	दृष्टि क्षेत्र 100	100 प्रतिशत

दृष्टि बाधिता का कारण वातावरण तथा वंशानुक्रम दोनों ही हो सकते है। दृष्टि बाधिता का कारण आवासीय समस्या होती है। मायोपिया से तात्पर्य निकट दृष्टि-बाधिता का होना। दृष्टि बाधितों में दूर की वस्तुओं को देखने में कठिनाई होती हैं और पास की वस्तुओं को देख लेते हैं। आंशिक रूप से दृष्टि बाधित बालकों का कारण मायोपिया का होना है। हाइपरशि के कारण निकट की वस्तुओं को देखने में कठिनाई होती है और दूर की वस्तुओं को देख लेते है।

इनका सुधार दर्पण अथवा चश्में के उपयोग से हो जाता है इसके लिए उचित चश्में का उपयोग किया जाता है और आंख आपरेशन से भी समस्या का समाधान हो जाता है।

आंश्कि रूप से दृष्टि बाधित तीन प्रकार के होते हैं-

(अ) बालक का जन्म शून्य द्वारा किया जाये, बेहोशी की दवाओं के कारण, समय से पूर्व जन्म हो जाना आदि के प्रभाव से भी दृष्टि बाधित हो जाता है।

(ब) जन्म के बाद चेचक रोक के कारण, संक्रामक बीमारियों के कारण आंख में चोट लगना, गलत दवा डालने से कं ेसर या फोडा होने तथा विष के खाने आदि कारणों से बालक दृष्टि बाधित हो जाता है।

(स) जन्म से पूर्व अवस्था अथवा गर्भ के समय से ही होते हैं मां प्रबल औषधियों का सेवन करने से, असंतुलित आहार के कारण मानसिक रोग के कारण, आवासीय स्थान ठीक न होना आदि।

दृष्टि बाधित बालकों की समस्यायें

दृष्टि बाधित बालकों की अनेक समस्यायें होती है जैसे- व्यवहारिक समस्यायें अधिगम की समस्याये, स्थानापन की समस्या, समाज में समायोजन की समस्या, कभी-कभी जीवकोपार्जन की समस्या भी होती है।

1. **धीमी गति से वाणी विकास**-पूर्ण रूप से दृष्टि बाधिता बालक वाणी की कला और कौशल का अनुकरण नहीं कर सकते है। जो उन्होंने सुना है उसी से वाणी का विकासहोता है। वाणी का विकास सार्थक रूप में नहीं होता है। शोध अध्ययन से स्पष्ट होता हैकि शब्दों के उपयोग एवं उच्चारण में कठिनाई का अनुभव करते हैं।
2. **सामाजिक समायोजन की समस्याएं**-समाज में दृष्टि बाधितों को हेय दृष्टि से देखा जाता है क्योंकि वह समाज की सहायता चाहते हैं। इन्हें व्यक्तिगत तथा सामाजिक समस्यायेंरहती हैं। इनमें हीन भावना आ जाती है और समाज में समायोजन की कठिनाई भी आती है।
   मनोवैज्ञानिक इनके समायोजन की समस्याओं के संबंध में एक मत नहीं है। कुछ शोध अध्ययनों के निष्कर्ष है कि इस प्रकार के बालकों का विद्यालय में समायोजन नहीं होता है। अन्य शोध निष्कर्षों में पाया कि विद्यालय में इनका समायोजन उत्तम होता है। उनकी साथी तथा सहयोगी पर्याप्त सहायता करते हैं।
3. **बुद्धि-लब्धि स्तर कम होना**-शोध अध्ययनों से यह विदित हुआ कि दृष्टि बाधित बालकों का बुद्धि स्तर भी समान्य से कम होता है। इसलिए समुचित वातावरण तथा अवसर खोजने की असमर्थ रहते हैं। बुद्धि परीक्षण पर यह अच्छा नहीं कर पाते हैं। अधिकांश बुद्धि परीक्षण से ज्ञान, अनुभव तथा सूचनाओं पर आधारित प्रश्न होते हैं इसलिए इनका बुद्धि-लब्धि स्तर कम होता है। व्यहवहारिक दृष्टि में इनकी कार्यशैली सामान्य से निम्न स्तर की होती है।
4. **शैक्षिक मंदिता**-दृष्टि बाधित ब्रेल लिपि का उपयोग करने पर भी सामान्य बालकों से शैक्षिक उपलब्धि कम रहती है। दृष्टि बाधित बालक सामान्य बालक से एक या दो वर्ष मंदिता रहते है तथा शैक्षिक निष्पत्ति कम रहती है। यह बालक मंद गति से तथ्यों तथा सूचनाओं को बोधगम्य कर पाते हैं क्योंकि यह अवलोकन नहीं कर सकते नहीं अनुकरण कर सकते है। ज्ञान के श्रोत श्रव्य तथा स्पर्श इन्द्रियों तक सीमित रहते हैं। पढ़ने की गति मंद होती है अनुदेशानात्मक प्रक्रिया में संबंध स्थापित नहीं कर पाते हैं।
5. **व्यक्तित्व विक्षिप्त होना**-व्यक्तित्व के विकास में वंशानुक्रम तथा वातावरण का विशेष महत्व तथा योगदान होता है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है, जीवन के अनुभवों इसमें सुधार रहता है। दृष्टि-बाधित बालकों का समुचित वातावरण और जीवन के अनुभव से उनकेव्यक्त्तिव का विकास

अपने ही प्रकार से होता है जो पूर्णतः सामान्य बालकों से भिन्न प्रकार का होता है। इनके विकास में नाड़ी संस्थान, उनके अनुभव तथा मानसिकता कागहन प्रभाव होता है। इन मंे असुरक्षा तथा विक्षिप्ता अधिक रहती है जो व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करती है।

7.6 अस्थि बाधित निःशक्त बालक

स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। चानलाके की यह परिभाषा पुष्टि करती है कि जब तक शरीर स्वस्थ नहीं होगा तब तक मनुष्य सामान्य रूप से कार्य नहीं कर सकता।

शारीरिक स्वास्थ्य उसके कार्य व विकास को प्रभावित करता है। अस्थि बाधित अथवा निःशक्त बालक शारीरिक रूप से दिव्यांग कहलाते हैं।

कुछ बालक विभिन्न प्रकार के अस्थि रोगों से बाधित होते हैं। ऐसे बालकों के शरीर की विभिन्न अस्थियां ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर पाती। अस्थि बाधिता का अर्थ अस्थियों, अस्थियों के जोड़ों (अर्थात् शरीर का ऐसा अंग जहां दो अस्थियां एक-दूसरे में फंसती है अथवा शरीर की मांसपेशियां के कार्य न करने से है) कुछ परिस्थिति में तो इस प्रकार की बाधिता इतना गंभीर रूप धारण कर लेती है कि ऐसे बालकों अथवा व्यक्ति के चलने के लिये कृत्रिम (बनावटी) हाथ या पैर की आवश्यकता होती है। अन्य परिस्थितियों में उन्हें पहियों वाली कुर्सी अथवा वैशाखी की आवश्यकता होतीहै। ऐसे बालकों के लिए शिक्षण हेतु शिक्षा संस्थाओं में अथवा कक्षों में इमारत संबंधी अथवावातावरणसंबंधी बाधाओं को पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है। सामान्य अस्थि बाधित बालकों को अधिगम समस्यायें नहीं होती है। ऐसे बालक बिना किसी कठिनाई के सामान्य विद्यालय में शिक्षित किये जा सकते है।

शारीरिक रूप से निःशक्तता से तात्पर्य

यदि कोई व्यक्ति हाथ से अक्षम हो तो ऊपरी अस्थि दिव्यांगता तथा पैर से अक्षम हो तो निचलेअंग की निःशक्तता का शिकार माना जाएगा। इस निःशक्तता श्रेणी में शरीर के किसी भाग में असमानता अथवा अंग-भंग होना, जिससे गत्यात्मक अयोग्यता का जन्म होता है। ऐसे व्यक्ति अपने दैनिक क्रियाओं जैसे उठने-बैठने, चलने-फिरने, लिखने आदि में बाधा महसूस करते हैं।

1. शारीरिक रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के सभी मामले, ''चलने-फिरने की निःशक्तता अथवा प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात (फालिज)'' की श्रेणी के अंतर्गत आएंगे।
2. चलने-फिरने की निःशक्तता: ''चलने-फिरने की निःशक्तता'' से हड्डियों जोड़ों अथवा मांसपेशियों की निःशक्तता अथवा किसी भी तरह का प्रमस्तिष्कीय पक्षघात (फाजिल) अभिप्रेत है जिससे अंगों के हिलने-डुलने में अत्यधिक बाधा हो।

3. प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात (फाजिल): ''प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात (फाजिल)'' से किसी व्यक्ति की गैर-विकासोन्मुख स्थितियों का समूह अभिप्रेत है जो, जन्म से पूर्व, जन्म के आसपास अथवा विकास की आरंभिक अवधि में घटित मस्तिष्क-आघात अथवा चोटों के परिणामस्वरूप चलने-फिरने की असामान्य नियंत्रण-भंगिमा के रूप में परिलक्षित होता है।

अस्थि बाधित निःशक्तता ग्रस्त बालकों का अर्थ एवं परिभाषा

अस्थि बाधित बालक ऐसे बालक होते हैं जिनकी अस्थियों, अस्थियों के जोड़ अथवा शरीर में विभिन्न मांसपेशियों सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पाती। उनका कार्य करने का परिमाण इतना क्षीण होता है कि उन्हें कृित्रम हाथ या पैर की आवश्यकता होती है। इसके साथ-साथ उनके शिक्षण कक्ष को भी उनकी विशेष कक्ष को भी उनकी विशेष आवश्यकताओं के अनुरूप आकृति देनी पड़ती है। कुछ बालक मस्तिष्क के ठीक प्रकार कार्य न करने के कारण वह शारीरिक (उवजवत) हाथ/पैर से कार्य करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं।

अस्थि बाधितों को बोधगम्य करने के लिये अनेक परिभाषा दी गई है। उनमें से व्यापाक परिभाषा यहां दी गई हैं।

''अस्थि बाधित उन बालकों को कहते हैं। जिनकी किसी एक या अधिक हड्डियों में दोष आ गया हो या क्षतिग्रस्त हो गया हो। ऐसे बालकों की मांसपेशियों तथा जोड़ों अथवा अस्थियों में किसी कारण दोष आ जाता है।''

अस्थि बाधित बालकों को शारीरिक रूप बाधित या दिव्यांग भी कहते हैं। साहित्य में इन्हें कई शब्दों में संबोधित किया गया है जैसे- शारीरिक असमर्थी, अपंग, अस्थि बाधित तथा स्वास्थ्य बाधित आदि। शारीरिक रूप से बाधित बालकों को दो वर्गाें में विभाजित किया गया है-

1. अस्थि बाधित बालक तथा

2. स्वास्थ्य बाधित बालक

यह वर्गीकरण विशेष शिक्षा की दृष्टि से किया गया है।

वैधानिक परिभाषा के अंतर्गत अस्थि बाधित उन्हें माना गया है जो गंभीर रूप से अस्थि बाधित हैं और उन्हें शिक्षा प्राप्त करने में अधिक कठिनाई होती है। बालकों की शैक्षिक प्रक्रिया को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। जैसे-कुछ शारीरिक अंगों का न होना। हाथ, पैर का वक्र होना, जल जाना या टूट जाना किसी रोग से क्षतिग्रस्त हो जाना आदि। इस परिभाषा अन्य स्वास्थ्य बाधितों के लिए भी की है-

सवैधानिक परिभाषा अन्य स्वास्थ्य बाधितों के लिए भी की है-

''अस्थि बाधित उन बालकों को है जिन्हें किसी रोग के कारण संप्रेषण में गंभीरता, विकास की समस्या, सीमित शक्ति का होना जिससे स्वास्थ्य संबंधी समस्या गंभीर हो जाती है। जैसे-क्षय रोग, दमा, मधुमेह आदि अन्य रोग से ग्रस्त होना''।

अस्थि बाधिता की **व्यापक परिभाषा** इस प्रकार है-

''दिव्यांग बालकों को अस्थि बाधित भी कहते हैं जब जन्म से बीमारी, दुर्घटना तथा जन्म से उनकी हड्डियों, मांसपेशियों तथा जोड़ों में दोष व वक्रता आती है और सामान्य कार्य करने तथा चलने फिरन में असमर्थ होते हैं।''

चलन संबंधी निःशक्तता

इस प्रकार की निःशक्तता वाले बच्चों में हड्डी के जोड़ों और मांसपेशियों से संबंधित कोई शारीरिक समस्या होती है। इस समस्या के कारण वे कक्षा में आसानी से चल-फिर नहीं सकते। यद्यपिइन बच्चों को सीखने में कोई समस्या नहीं होती परंतु उन्हें दृश्य-शारीरिक विकृति या दोष केकारण समायोजन में समस्या आ सकती है। इन बच्चों को बड़ी आसानी से पहचाना जा सकता है। क्योंकिउनकीअशक्तता सामने दिखाई देती है। उपयुक्त साधनों, उपकरणों और प्रोत्साहन द्वारा इन बच्चों को आसानी से व्यवहार किया जा सकता है।

शारीरिक रूप से निःशक्तता

शरीर के मांसपेशियों में इतनी विकृति आ जाए जिसके कारण अंगों का घूमना कठिन हो जाऐ। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने मे बाधा पेश आए, शारीरिक कार्यक्षमताएं सीमित हो जाए। यह निःशक्तता स्पष्ट दृष्टिगोवर होती है इससे ग्रस्त बच्चे, व्यक्ति वॉकर, बंधनी, बनावटी अंग इत्यादि का प्रयोग करते है।

यदि छात्र कुछ कदम सामान्य रूप से न चल पाता हो या कुछ दूर तक न दौड़ पाता हो अथवा किसी छात्र से अथवा किसी छात्र में शारीरिक विकृति, कमजोरी से अंग संचालन में बाधा आये जिससे यह सामान्य छात्रों की तुलना में कठिनाई अनुभव करं◌े की शारीरिक रूप से निःशक्त माने जाएंगें।

अस्थि बाधित बालकों का वर्गीकरण

अस्थि बाधित बालकों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है। अंगों की बाधिता अथवा क्षतिग्रस्त होने का आधार पर करते हैं◌े। पोलियों से ग्रस्त होने से निःशक्तत हो जाते◌े हैं यह दो प्रकार के होते हैं- सामान्य निःशक्त और गंभीर रूप से निःशक्तत। सामान्य रूप से निःशक्त बालक सामान्य विद्यालयों में शिक्षण ग्रहण कर लेते हैं। जबकि गंभीर रूप से निःशक्त को अस्पताल में प्रवेश कराया जाता है।

अंगों की असमर्थता के आधार पर तीन वर्गों में अस्थि बाधितों को बांटा गया है-

1. ऊपरी अंगों की असमर्थता
2. कुछ अंगों का न होना या स्वास्थ्य संबंधी समस्या का होना
3. नीचे के अंगों की असमर्थता।

ऊपरी अंगों में अस्थि बाधित होने पर समस्यायें और कठिनाईयां भिन्न प्रकार की होती हैं। उनकी मांसपेशियां काम नहीं करती जिससे उन्हें कार्य करने में कठिनाई होती है और विशेष प्रकार की सहायता की आवश्यकता होती है। उन्हें पढ़ने तथा लिखने में समस्या होती है। इन्हें थ्रेपी की आवश्यकता होती है। इन्हें सामान्य विद्यालय में शिक्षा दी जाती है। क्योंकि बाधिता अधिगम में समस्या नहीं उत्पन्न करती है। उन्हें अनुकूलित भौतिक वातावरण की आवश्यकता होती है।

अस्थि बाधिता का मैडिकल साइंस में विकलांगिक अक्षमता शब्द है। अस्थि बाधित बालकों के संभावित प्रकार निम्नलिखित हैं-

1. मस्तिष्कीय पक्षाघात
2. मेरूदंडयी द्विशाखी
3. लूले-लंगड़े, हथकटे
4. मांसपेशीय असमर्थता
5. पांवफिरा
6. एक या इससे अधिक अंगों का लकवा
7. मेरूदंड का वक्र होना
8. विकृत नितंब

इन समस्त प्रकारों में मस्तिष्कीय पक्षाघात अधिकतर निःशक्त बालकों में पाया जाता है। इसका कारण मस्तिष्क में किसी प्रकार की चोट लगना है। इस प्रकार की मस्तिष्कीय चोट प्रायः गर्भावस्था में लगती है। इस प्रकार की निःशक्तता में एच्छिक जंगीय क्रियाप्रणाली (टसनदजंतल उवजवत निदबजपवदपदह) अस्त-व्यस्त जाती है। यह अस्थव्यस्ता मात्रा में बालक से बालक में भिन्न होती है। मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि मस्तिष्क का कौन-सा भाग तथा कितना भाग प्रभावित हुआ ळें मस्तिष्कीय आघात के तीन प्रकार है-

1. एथिटोसिस
2. एटेकसिया
3. मस्तिष्क-संस्तंभ

मस्तिष्क-संस्तंभ में अकस्मात व झटकेदार गति होती है। एथिटोसिक में धीमी तथा बार-बार होने वाली गति होती है। इसमें प्रायः गले और मुंह की मांसपेशियों में नियंत्रण नहीं रहता है। इस कारण निम्नलिखित लक्षण देखने को मिलते हैं-

1. बोलने में कठिनाई का अनुभव।

2. मुंह से लार टपकती रहती है।
3. चेहरे की मांसपेशियां का लटक जाना।

एटासिया में अंगों में सामंजस्य व संतुलन नहीं रहता है।

प्रमस्तिष्कीय आघात के निम्नलिखित प्रभाव देखने में आते हैं-

- श्रवण बाधित तथा वाणी बाधित
- मानसिक रूपसे पिछड़ापन अथवा प्रति भावुकता
- दृष्टि बाधित
- भाषा असमर्थता, तथा
- अधिगम अक्षमता।

मस्तिष्कीय चोटों अथवा बीमारियों अथवा कमियों से सबंधित है। अतः निम्नलिखित प्रकारों से ग्रसित बालक मानसिक रूप से दिव्यांग भी कहलाते हैं।

1. प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात
2. मांसपेशीय डायसडोफी
3. लकवा

वास्तव में उपरोक्त प्रकारों में बालक मानसिक निःशक्तता के कारण शारीरिक रूप से निःशक्त हो जाता है।

अस्थि बाधित बालकों की पहचान

अन्य प्रकार बाधित, मंद तथा असमर्थी बालकों की अपेक्ष अस्थि बाधित बालकों की पहचान करना सरल होता है।

पहचान चिह्न: सामान्यता शारीरिक रूप से निःशक्तता स्वतः दृष्टिगोचर होती है इसमें जन्मगत अथवा दुर्घटना शारीरिक अंगों का शरीर से अलग होना, अनियंत्रित या विकृत मांसपेशियों से अंग संचालन में बाधा आना आदि प्रमुख पहचान चिह्न है। ऐसे छात्र पहिये वाली कुर्सी, बैशाखी आदि लेकर चलते हैं। यह अयोग्यता शरीर में मांसपेशियों तथा जोड़ों में बाधा को जन्म देती है। ऐसे प्रकार व्यक्ति हाथ पैर की उंगलियों को मोड़ने, पकड़ने उठने-बैठने, जोड़ो दर्द की शिकायत करते है। हाथ-पैर या शारीरिक अंगों का छोटा बड़ा होना, कुष्ठ रोग से मांस पेशियों का क्षतिग्रस्त होना, वस्तुओं को उठाने, नीचे रखने में कठिनाई पेश आना, हाथ-पैर या किसी अन्य शारीरिक अंग का कट जाना इत्यादि पहचान चिह्न शारीरिक रूप से दिव्यांगता के तहत् स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं।

सामान्यता यह निःशक्तता गर्दन हाथ, उंगली, कमर आदि में साफ दिखाई देती है। रीढ़ की हड्डी का टेड़ापन, अंगों में अवांछित हलचल, अंगों, सिकुड़ने, मोडने, घूमाने में परेशानी अनुभव

होती हैं। जोड़ों में दर्द को शिकायत शारीरिक कार्य में लचीलापन को फैलाने की जगह सख्त होने के कारण ऐसे बच्चे व्यक्ति शारीरिक रूप से अक्षमता की श्रेणी में आते हैं।

अस्थि बाधिता के कारण

पोलियो लकावा कुपोषणा श्वास संबंधी रोग, मानसिक रोग, शारीरिक रोग, शारीरिक दुर्घटना आदि से शारीरिक अक्षमता/निःशक्तता का जन्म होता है।

अस्थि बाधित बालकों में कई समान दिखाई देते हैं पंरतु उनकी बाधिता का कारण भिन्न-भिन्न होता है। निःशक्तता के कुछ कारण इस प्रकार है-

1. बीमारी-कुछ बीमारियां जो या तो अपनी प्रकृति अथवा लंबे समय तक रहने के कारण निःशक्तता का करण बन जाती है। उदाहरणार्थ पोलियों और मस्तिष्क-सोच शारीरिक निःशक्तता देते हैं। इनसे अस्थियों, अस्थि संधियों, जोड़ों, मांसपेशियों, रूप, आकृति में दोष आ जाता है।
2. जन्मजात अनियमितता-गर्भावस्था में कुपोषण आदि के कारण बालक का विकास भली प्रकार नहीं हो जाता और उसमें कुछ दोष उत्पन्न हो जाते हैं। जन्मजात शारीरिक निःशक्तता प्रायः चिकित्सा द्वारा ठीक नहीं हो पाती। उसके लिए सहायक उपकरण, कौशल तथा शिक्षण की आवश्यकता पड़ती है।
3. दुर्घटना-किसी दुर्घटना से प्रभावित हो जाने पर बालक शारीरिक रूप से निःशक्तता हो जाता है। वाहन दुर्घटना, गोली का लगना, गिर जाना, किसी अस्त्र से चोट लग जाना आदि दुर्घटनाओं के उदाहरण हैं।
4. जन्म के पश्चात कारण-इसके अन्तर्गत पोलियों, मस्कुलर डिस्ट्रीफी, प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात, बच्चें का जन्म के समय देर से रोना, सक्रमण आदि।
5. अन्य कारण-गरीबी, अशिक्षा, अस्वस्थ्य स्थिति में जीवन यापन, रूढ़िवादिता आदि।

अस्थि विकलांगों की समस्यायें-

1. निःशक्तता के कारण शारीरिक क्रियाओं में भाग लेने में असमर्थ होते हैं
2. ये विद्यालय एवं समुदाय में भावात्मक समायोजन करते हैं कि लोग उनकी निःशक्तता के बारे में निम्न स्तर की धारणा रखते हैं।
3. वे हीन भावना से ग्रस्ति होते हैं।
4. वे कक्षा में अपनी दिव्यांगता के अनुरूप जगह पाने में कठिनाई महसूस करते हैं।
5. वे खेल आदि क्रिया में भाग लेने में कठिनाई महसूस करते हैं।

अस्थि दिव्यांग की आवश्यकताएं-

1. कक्षा में बैठने हेतु उन्हें विशेष व्यवस्था की आवश्यकता होती है।
2. आवागमन हेतु सहायक उपकरणों की जरूरत हाती है।

3. विशेष प्रकार की चिकित्सीय आवश्यकता होती है।

4. शिक्षक, मित्रों से भावात्मक लगाव की आवश्यकता होती है।

5. यथा संभव शारीरिक मदद की जरूरत होती है।

6. स्वयं के देखरेख कौशलों में भी मदद की जरूरत होती है।

7. गामक कौशलों के विकास हेतु विशेष प्रशिक्षण की जरूरत होती है।

शैक्षिक प्रावधान

कक्षा के अंदर आप इन बच्चों को अगली पंक्ति में बैठा सकते हैं इससे अन्य शिक्षार्थियों को भी कक्षा में खुला स्थान मिल जाएगा। कक्षा में इन शिक्षार्थियों के बैठने के व्यवस्था उनके साधनों और उपकरणों के आधार पर की जानी चाहिए, जैसे कि पहियों वाली कुर्सी के लिए अधिक स्थान चाहिए। आप उनकी योग्यता के अनुसार समूह/अधिगम क्रियाकलापों को आयोजित कर सकते हैं और उन्हें सहजता का अनुभव कराने के लिए कम समस्याएं हो। आप ऐसे बच्चों को खेलों, मनोंरजन और शारीरिक क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए पर्याप्त अवसर दे सकते हैं। आपको यह स्मरण रखना होगा कि प्रत्येक बच्चे की आवश्यकताएं वैयक्तिक रूप से पूरी की जानी चाहिए।

7.7 वाणी बाधित बालक

अनुसंधानों द्वारा प्राप्त जानकारी हेतु हकलाने तथा वाणी बाधित वाले बालकों की श्रेणी में वह बालक आते हैं। जो नाक से बोलते हैं, धीरे-धीरे बोलते हैं, कर्कश स्वर में बोलते हैं, तुतलाते या हकलाते हैं। वाणी संबंधी दोषों का कारण त्रुटिपूर्ण अनुकरण तथा माता-पिता की लापरवाहर है। हकलाने का कारण सांवेगिक होता है।

1. वाणी बाधित बालक

वाणी बाधित बालकों का अर्थ एवं परिभाषा

वाणी बाधित से अभिप्राय है भाषा तथा वाणी (बोलने) में समस्या होना। सामान्य कक्षाओं में वाणी बाधित और सामान्य रूप से भाषा में बाधित बालक होते है। ऐसे बालक कभी-कभी अध्यापक का ध्यान भी आकर्षित नहीं कर पाते तथा सरलता से ऐसे बालकों में किसी प्रकार का दोष नहीं मालूम पड़ता। ऐसे बालक या लिखते समय शब्दों का प्रयोग तोड़-मरोड़कर, अपभ्रंश करके, कुछ शब्द अपनी तरफ से जोड़कर अथवा दूसरे शब्दों अथवा अक्षरों का विसथापन करके अपना कार्य करते हैं। ऐसे बालक किसी वाक्य को रूक-रूक कर बोलते हैं। दो या तीन शब्दों के बीच बोलने में सामान्यता अधिक समय लेते हैं अथवा कभी-कभी बोलते-बोलते चुप भी हो जाते हैं। ऐसे बालकों

की समस्या को सुधारना आवश्यक है। इससे पहले कि उन्हें सामान्य स्कूल में शिक्षा के लिये प्रवेश दिलाया जाये। बालक की वाणी असमर्थता (ेचममबी कपेवतकमते) मुख्यतया तीन प्रकार की होती हैं-

- बालक के बोलने में धारा प्रवाह अभिव्यक्ति न होना।
- बालक की आवाज का व्यवस्थिता न होना।
- बालक के उच्चारण में अस्पस्टता।

'वाणी बाधित' वे बालक हैं जो मुख की आवाज, बोले गये शब्दों में तालमेल तथा शब्दों को संयोजित करने में कठिनाई का सामना करते हैं। वे बोलते समय शब्दों को छोड़ देते हैं, बदल देते हैं, तोड़-मरोड देते हैं या अपनी ओर से कुछ जोड़ देते हैं। ऐेसे बालक शब्द अथवा वाक्य को ठीक प्रकार से नहीं बोल सकते। ऐसे बालकों के बोलने में कुछ शब्दों पर जोर देकर उनको बोलना, बोलते-बोलते रूक जाना, उनकी आवाज कभी धीमी, कभी तेज हो जाना आदि आसानी से कोई भी देख सकता है। जो सामान्य बालकों के बोलने के ढंग से सर्वथा भिन्न होता है। बाधित बालकों के बोलने की लय तथा क्रम टूट जाता है तथा उनकी आवाज में हकलाहट होती है अर्थात् बोलते समय बालक हकलाता है। यह धारा प्रवाह बोलने की अक्षमता कहलाती है।

परिभाषा

रांइपर **(1978)** के अनुसार- ''बालक जिसको संप्रेषण में समस्या होती है और उसका स्वर या वाणी अन्य सामान्य बालकों से भिन्न प्रकार की होती है। वह स्वयं भी सजग होता है कि अपनी बात कहने में असमर्थ है। उसकी वाणी मधुर नहीं होती है।''

परकिन्स **(1977)** कं अनुसार-'वाणी बाधित तभी मानी जाती है जब व्याकरण की दृष्टि से सांस्कृतिक रूप से असंतोषजनक हो क्योंकि वाणी अंग क्षतिग्रस्त है। इसके संप्रेषण दोषयुक्त होता है।''

जॉन डिसेनसन के अनुसार-''जब कोई बालक बोलता है और श्रोता की दृष्टि से समुचित संप्रेशण नहीं होता है ध्यान देने पर भी स्पष्ट नहीं होता तब वाणी बाधित अथवा भाषा का दोष मानते है।''

पिन्टर आट सेन्सन के अनुसार-''वाणी को दोषयुक्त तब मानते हैं जब वे सरलता से नहीं सुन पाते हैं। वाणी बाधित का स्वर भी अच्छा नहीं होता है। बालक संप्रेषण उसकी आुय और बुद्धि स्तर के अनुरूप नहीं होता है। शारीरिक विकास की अवस्था से निम्न स्तर का होता है।''

वाणी बाधिता का सीधा संबंध संप्रेषण के स्वरूप और भाषा से होता है। उससे संप्रेषण के कठिनाई होती है तथा श्रोता को अच्छा नहीं लगता है।''

वाणी बाधित बालकों का वर्गीकरण

बोलने के दोष में अशुद्ध उच्चारण, हकलाना, आवाज की समस्या तथा अंगीय दोष आदि आते हैं जो विद्यालय के लिये समस्या बनते हैं और विद्यालय व्यवस्था में अशुद्ध उच्चारण व हकलाने आदि की समस्या अधिकांशतः रहती है जिसका मूल कारण यह है कि शुरू की शैशवावस्था में यह दोष बालपन के कारण नजरबंदाज कर दिये जाते हैं लेकिन बाद में यह एक समस्या के रूप में अवतरित होते हैं। वैसे सामान्य पाठ्यक्रम में यह बच्चे चल जाते हैं लेकिन सामान्य शैक्षिक प्रविधि में यह बालक नहीं चल पाते और इनकी काई बात या उच्चारण दोष सामान्यतः सही रूप में नहीं समझ पाते। वाणी के कुछ प्रमुख दोष इस प्रकार है-

हकलाना

1000 बालकों में **6** से **10** तक बालक हकलाने वाले होते हैं। यह बोलने के भय का, विस्तृत रूप है। हकलाने में बालक में हिचकिचाता है, बोलने में रूकावट का अनुभव करता है, शब्दों को दोहराता है। बोलने में उलझन अनुभव होती है। कभी-कभी मंुह पर भी उलझन के भाव आते हैं, जैसे- अंाख बंद करना, शरीर के अंगांे को हिलाना-डुलाना आदि।

प्रक्रियात्मक उच्चारणात्मक दोष

यह दोष अधिकतर बालकों में पाया जाता है। यदि बालक कुछ ध्वनियां नहीं निकाल पाता; जैसे- 'तोता' शब्द को 'तो' कहता है और 'ता' शब्द उच्चारित नही कर पाता, तो उसमें उच्चारणात्मक दोष है। एक ध्वनि के लिए दूसरी ध्वनि देना भी इस प्रकार का दोष है; जैसे- 'तोता' शब्द को 'टोटा' कहना। इस प्रकार के दोष वाले बालक कभी कोई ध्वनि बहुत धीरे से हकलाते हैं या किसी ध्वनि को टेढ़ा करके उच्चारित करते हैं। किसी ध्वनि पर रूक जाना भी उच्चारणात्मक दोष कहलाता है।

आवाज की समस्या

मनुष्य की आवाज का स्वर स्तर, उच्चता तथा गुण द्वारा किया जा सकता है। इन्हीं से संबंधित आवाज के दोष हैं, जो इस प्रकार हैं-

गुण संबंधी दोष- ये मुख्यतः चार प्रकार के होते हैं-

1. आवाज में कशीलापन
2. आवाज में भारीपन
3. सांस ले-लेकर बोलना
4. नाक से बोलना।

स्वर के दोष- बहुत ऊंचा बोलना या बहुत धीरे बोलना या एक स्वर में बोलना। एक प्राकृतिक स्वर स्तर होता है। यदि कोई व्यक्ति इस स्तर से बहुत अधिक ऊंचा या नीचा बोलता है तो उसका स्वर दोषपूर्ण होता है।

एक आवाज- जो बहुत ऊंचा अथवा धीमी है या बिना उत्तर-चढ़ाव वाली है, यह भी दोषपूर्ण मानी जायेगी। ये प्रवृत्तियां उन बालकों में होती हैं जो शर्मीले प्रकृति के होते हैं।

1. आंशिक वाणी दोष

तालू प्लेट में वायु मुंह तथा नाक के छेद से बिना रूकावट के आती-जाती है। अतः बालक नाक से बोलने लगता है। प्रायः ऐसी स्थिति में प, ब, ट, ड, क, ज वह नाक से बोलते हैं। अन्य शब्द भी नाक से बोल सकता है। असंतुलित भोजन, गर्भाशय के समय के दोष, पैदा होते समय की चोट तथा बचपन की आघात मस्तिष्कीय पाल्सी रोग का कारण हो सकते हैं। प्रायः ऐसे बालकों, जिन्हें मस्तिष्कीय पाल्सी होती है, का बोलना अस्पष्ट, धीमा, जोर देकर तथा झटके वाला होता है। इनकी ध्वनि अनिंयत्रित होती है। ऐसे बालकों के साथ सामाजिक तथा शैक्षिक सामंजस्य की समस्या होती है।

2. धीमी गति से वाणी का विकास

निम्नलिखित में देरी से उन्नति देखी जाती है-

1. बोलने की सामान्य बुद्धि
2. बोलने का अभ्यास
3. उत्तर देने की देरी
4. सही ध्वनि प्रयोग
5. शब्दों की संख्या
6. पहला शब्द या पहला वाक्य कहने की अवस्था
7. बचपन में बोलने के खेल की संख्या
8. सही उच्चारण

देर से बोलने की सामान्य कारण हैं-

1. माता-पिता का चुप रहना
2. सदैव क्रोध या शर्म करना, अथवा संकोची होना
3. माता-पिता द्वारा कठोर व्यवहार देना या डाटना
4. बीमारी या शारीरिक अयोग्यता
5. मानसिक असामान्यता
6. बोलने के उदीपन का अभाव

3. श्रवण बाधिता ग्रस्त बालकों के साथ वाणी की समस्या

बोलने की समस्या कभी-कभी कम सुनने वाले बालकों के साथ ही होती है। यह दोष सुनने के दोष पर निर्भर रहता है। कानों द्वारा बोलना सीखते है। जब बालक ठीक से नहीं सुन पाता तो वह अनुमान

लगाता है कि बोलने वाले ने क्या बोला होगा? कभी वह स्वयं की आवाज ठीक से नहीं सुन पाता इस कारण उसे पता नहीं चलता कि उसकी आवाज ठीक से निकली है अथवा नहीं।

श्रवण बाधिता के कारण-वाणी बाधिता बचपन में हुए जुकाम, इन्फ्ल्यूएंजा तथा अन्य सामान्य बीमारियों के कारण यह हो जाता है। इसके प्रभाव स्थायी होते हैं। यदि प्रारंभ में ही चिकित्सा की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो बालकों में गंभीर सुनने से संबंधित दोष उत्पन्न हो सकते हैं। इसके फलस्वरूप बालक बोलने के गंभीर दोषों से पीड़ित हो सकता है।

वाणी बाधित बालकों के पहचान चिह्न

1. अंगीय बोलने के दोष के कारण की पहचान की जा सकती है लेकिन इस व्यवस्था में गलत शब्दों का बोलने वालों में गिरावट आती है।
2. इसके अतिरिक्त भय, सदमा, क्रोध व शर्म के कारण भी कभी-कभी बालक सामान्य से असामान्यता की स्थिति में आ जाता है और हकलाने या फिर शब्दों कें संयोजन में गड़बड़ी या व्यवधान करने लगता है।
3. जो बालक नाक से बोलते हों, या जिनकी आवाज में भारीपन है या जो बहुत धीमे या तेज बोलते हों इनकी पहचान करं े।
4. सबसे पहले कक्षा शिक्षण में अध्यापक का यह कर्त्तव्य है कि उच्चारण दोष वह हकलाने वाले बच्चों को अलग करे व उनकी सही पहचान कर उनकी सही परामर्श चिकित्सा की व्यवस्था करें।
5. कम सुनने वाले बालकों व देर से बोलने वालों की समस्या भी सामान्य रूप से कक्षा शिक्षण में आति है। ये बालक कम सुनने व देर से बोलने वाले होते हैं और कभी-कभी इनमें उच्चारण दोष व हकलाना भी पाया जाता है। मूलतः यह बालक किसी भी कक्षा में पाये जा सकते हैं।

वाणी बाधिता के कारण

वाणी बाधिता के अनेक कारण होते हैं। वाणी बाधित बालकों के मुख्य कारण इस प्रकार हैं-

1. भावात्मक एवं मनोवैज्ञानिक कारण-वाणी दोष भावात्मक तथा मनोवैज्ञानिक कारणों से भी आता है। वाणी की सक्षमता स्वर अंगों के साथ बालक की स्वयं की परिपक्वता पर निर्भर करती है। स्वयं की अभिप्रेरणा तथा अभिवृत्ति प्रभावित करते हैं। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि वाणी दोष भावों एवं विचारों की विक्षिप्तता के कारण आता है।
2. सामाजिक वातावरण का प्रभाव-भाषा संप्रेषण का प्रभावशाली साधन है इसका विकास सामाजिक वातावरण उनको उच्चारण की परिस्थिति प्रदान करता है। भाषा कौशल का विकास घर, विद्यालय तथा सामाजिक वातावरण में संप्रेषण से होता है। घर के अच्छे वातावरण में बालक के भाषा का विकास आरंभ में ही हो जाता है।

3. व्यवहारिक या कार्य करने के दोष के कारण-कुछ बालकों के वाणी अंगों में कोई दोष नहीं होता परंतु बोलने तथा स्वर में दोष होता है। यह दोष अपने बड़ों के तथा साथियों के अनुकरण में आ जाता है। यह सत्य है कि बोलना सुनकर तथा अनुकरण करके ही सीखते हैं। माता-पिता तथा शिक्षकों के शब्दों का सही उच्चारण करना चाहिए।

4. जैविक कारण-जैविक दोष कई प्रकार के होते हैं जो वाणी दोष उत्पन्न करते हैं- तालू में असामान्यता, दंातों में अनियमितता का दोष, फालिज पड़ना, जीभ में असामान्यता का होना। इसके अतिरिक्त जबड़ों तथा होटों में असामान्यता का होना। स्वर संबंधी अंगों में दोष होने से बोलने में कठिनाई होतीे है।

5. मनोजैविक कारण-शोध अध्ययनों द्वारा यह निष्कर्ष प्राप्त हुए कि वाणी बाधिता का कारण मनोजैविक भी होता है। जब वाणी दोष का जैविक तथा व्यवहारिक नहीं होता है। तब माता-पिता तथा घर के वातावरण के कारण वाणी बाधित होती है। घर के अंदर बोलने की भाषा शुद्ध नहीं होती तथा उच्चारण अशुद्ध होता है। बालक इसी प्रकार की भाषा बोलने का अनुकरण कर लेता है। यह दोष असमायोजन के कारण भी आ जाता है। माता-पिता के अवंाछित व्यवहार भी वाणी दोष कारण होते हैं। परिवार के सदस्यों को शब्दों का सही उच्चारण करना चाहिए।

6. मानसिक क्षीणता के कारण-मानसिक दोष के कारण भी श्रवण-बाधिता हो जाती है। इस प्रकार के दोष का निरीक्षण द्वारा पहचाना जा सकता है। उच्चारण में दोष होता है। उनके बोलने में लय या निरंतरता नहीं होती, वे रूक-रूक कर के बोलते हैं। इसलिए उनके स्तर में उतार चढ़ाव अस्वाभाविक रूप से प्रकट होता है।

7. श्रवण क्षीणता के कारण-वाणी विकास में श्रवण प्रणाली की आवश्यकता होती है। यदि बालक श्रवण बाधित है तो वह वाणी बाधित भी होगा। वाणी कौशल के अभाव में बालक का विकास भी सामान्य नहीं होता है। बालक में दोषयुक्त पृष्ठपोषण मिलने के कारण वाणी-दोष आ जाता है। श्रवण बाधिता, भाषा तथा वाणी दोष उत्पन्न करता है। नकारात्मक पृष्ठपोषण का प्रयोग नहीं किया जाय।

वाणी बाधित बालकों की समस्याएं

जीवन में वाणी बाधितों की अनेक समस्याएं होती है। कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं का उल्लेख यहां किया गया है वह समस्यायें इस प्रकार हैं-

1. अन्य बालक उन्हें चिढ़ाते हैं उनकी हंसी उड़ाते हैं क्योंकि वे शब्दों का शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते हैं। इसलिये इनमें विद्यालय से पलायन की प्रवृत्ति आ जाती है। इसी कारण इनका समाजीकरण नहीं हो पाता है।

2. यह बालक अपनी बाधिता के प्रति अक्सर सजग होते हैं। उन्हें अपने संप्रेषण में कठिनाई का अनुभव करते हैं कि अपनी बात दूसरों से नहीं कह पाते हैं और सांकेतिक भाषा तथा

शारीरिक भाषा (हाव-भाव) की सहायता लेते हैं। यह बालक खेल-कूद में भी भाग नहीं लेते हैं। सामूहिक क्रियाओं में भी सम्मिलित नहीं देते हैं। इन्हें ऐसे कार्यों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

3. इस प्रकार के बालकों को असमायोजन की समस्यायें रहती है। इस प्रकार के बालकों को उत्तेजना, उत्सुकता एवं भय की भावना होती है।
4. स्वर अंगों के दोष के कारण उनका उच्चारण शुद्ध नहीं होता है। इसलिए शब्दों की वर्तनी और शब्दों को नहीं पहचान पाते हैं। इसलिये वाणी बाधितों में भाषा का दोष होना स्वाभाविक है।
5. सामान्य बालकों की अपेक्षा इनमें पढ़ने संबंधी हीन भावना अधिक होती है। विद्यालय में इनका निष्पत्ति स्तर नीचा होता है। सामान्य व्यवहार भी नहीं कर पाते हैं।
6. इन बालकों को मानसिक विकास अधिक धीमी गति से होती है, यह वाणी बाधिता की गंभीरता पर निर्भरत करता है।

वाणी बाधित बालकों की वाणी में सुधार के प्रयास

इसके लिए एक वाणी सर्वेक्षण कराना चाहिए। एक वाणी में सुधार कार्यक्रम बनाना चाहिए। यह कार्यक्रम तभी सफल हो सकता है जब बालकों का साथ-साथ उपचार भी होता जाये। यदि वाणी के दोष रखने वाले बालकों का पता लगा लिया जाए परंतु उनका उपचार न किया जाए तो निम्नलिखित हानियां हो सकती हैं-

1. वाणी सुधारक भी बदल सकता है।
2. इस प्रकार के कार्यक्रम से माता-पिता में भी व्यर्थ की आशा जाग्रत होती है।
3. बालक बेकार की आशाएं लगाये रखते हैं। उनमें विक्षिप्तता स्थान ले लेती है।
4. बालकों को दोषपूर्ण बता दिया जाता है, परंतु इस संबंध में उन्हें विस्तृत जानकारी नहीं दी जाती और न ही इलाज का प्रयत्न किया जाता है। इससे माता-पिता चिंतित रहते हैं। बालक भी हीन भावना से ग्रस्त हो जाते हैं।
5. यदि एक वर्ष में सर्वेक्षण का कार्य होता है परंतु उसी साल से उपचार आरंभ नहीं होता है ब बालक के एक स्कूल से दूसरे स्कूल में जाने की संभावनाएं हैं वे अगली कक्षा में चले जाते हैं। नये विद्यार्थी भी आ जाते हैं। यह भी संभव हो सकता है कि कुछबालकों का दोष कुछ ठीक हो गया हो तथा कुछ अधिक दोषों से पीड़ित हो सकते हैं।

वाणी बाधित बालकों के लिए उपचार व्यवस्था

अधिकतरा बोलने के दोष विद्यालय से आरंभ होते हैं। बालकों को बोलने के दोषों से बचाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं-

1. बहुत से बालक विद्यालय में आने से पहले ही हकलाना आरंभ कर देते हैं। हकलाने से बचने के लिए आवश्यक है कि घर और विद्यालय का वातावरण अच्छा हो। इसके लिए एक योग्य और कुशल अध्यापक, जो कि बालक का सम्मान करें, ऐसा भी आवश्यक है। इसके साथ ही अभिभावकों का सहयोग लेकर ज्ञात करें कि क्या बच्चा पहले भी हकलाता था या केवल घर में या केवल विद्यालय में हकलाता है या केवल पढ़ाई के समय ही हकलाता है। सामान्यतः पढ़ाई के दौरान ही हकलाना कुछ बालक प्रदर्शित करते हैं।
2. किसी भी कक्षा अध्यापक को कभी भी किसी बालक को हकलाने वाले की श्रेणी में स्वयं नहीं रखना चाहिए। यदि बालक का परिवार, पड़ोसी, अन्य अध्यापक व साथी उसे हकलाने वाला नहीं मानते तो उसे हकलाने वालों की श्रेणी में रखना हानिकारक हो सकता है।
3. आवाज संबंधी समस्याओं से इस प्रकार सुधारा जा सकता है-

a. किशोरावस्था में होने वाले आवाज परिवर्तन की ओर सहानुभूति विचार रखना शिक्षकों को इससे परिचित होना चाहिए।
b. स्वर तंत्र को अशुद्ध प्रकार के प्रयोग से बचाना।
c. बाल्यकाल में होने वाले असमायोजन की ओर ध्यान देना। इससे उनमें भय आदि संवेग नहीं उत्पन्न होंगे।
d. एक अच्छे आधारभूत स्कूल कार्यक्रम का प्रबंध करना।

4. सुनने की क्षमता कम होने के कारण उत्पन्न होने वाले दोषों से बचने के लिए आवश्यक है कि सुनने के दोषों से बचा जाय। सुनने के परीक्षण होने चाहिए। अमेरिका में नेत्र विज्ञान तथा स्वरःयंत्र विज्ञान समिति ने यह सुझाव दिये हैं-

a. केवल आधुनिक मशीनें व उपकरण ही प्रयोग में लानी चाहिए।
b. बालकों को परीक्षण प्रत्येक तीसरे वर्ष होना चाहिए।
c. विस्तृत सुनने के कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए
d. विद्यालय में प्रवेश लेने वाले प्रत्येक विद्यार्थी का परीक्षण होना चाहिए। उपचार के कुछ अन्य नियम व सूत्र इस प्रकार हैं-

1. बालकों के समक्ष एक अच्छा बोलने वाले बालक का प्रतिमान व आदर्श रखना चाहिए।
2. बालकों को वाद-विवाद व अन्य संभाषण प्रतियोगिता में भाग दिलाना चाहिए जिससे वे धाराप्रवाह बोलें व इसी अविधि की गयी त्रुटियों कासमाधान किया जा सके।
3. इसके अतिरिक्त परिवारजनों व अभिभावकों का कर्त्तव्य भी है कि ऐसे बालकों की समस्याओं का समुचित चिकित्सा व परामर्श द्वारा उपचार किया जाए जिससे समाज को स्वस्थ व्यक्ति मिल सकें और बालक का समुचित विकास हो सके।

4. अभिभावकों व शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि ऐसे बालकों के साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार न अपनायें, बल्कि सुधार को प्रोत्साहित करें।
5. यदि बच्चा किसी की हकलाने की नकल करता है तो उसे तुरंत रोका जाना चाहिए व उस पर नियंत्रण तथा ध्यान रखा जाए।
6. बालक,उसके अध्यापक तथा माता-पिता को समस्या के विषय में ठीक ज्ञान होना चाहिए।
7. बालक द्वारा किये सुधार की प्रशंसा करनी चाहिए।
8. अंगीय दोषों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।
9. सामाजिक समायोजन की ओर ध्यान देना चाहिए।
10. आमोद-प्रमोद के साधन उपलब्ध कराने चाहिए।

7.9 अधिगम क्षति युक्त निःशक्तता

अधिगम क्षतियुक्त निःशक्त बालक

अधिगम क्षतियुक्त निःशक्त बालकों के बारे में विचारकों के मन में विभिन्न भ्रांतियरां है। इन बालकों को अधिगम में पिछड़े बालक भी कहा जाता है। बहुत समय तक मनावैज्ञानिक यही मानते आये थे कि अधिगम पिछड़ापन मानसिक योग्यता से सीधा जुड़ा हुआ है किंतु अच्छी बुद्धिलब्धि से युक्त बालकों द्वारा कुछ विषयों में बहुत खराब अंक पाने पर पिछड़ेपन और उसके कारणों पर अनुसंधानशुरुहुआ। इस अनुसंधान का फल यह हुआ कि पिछडेपन को शैक्षिक उपलब्धि से जोड़ा गया। सीरिल बर्ट ;ब्लतपस ठनतजद्ध ने इस क्षेत्र में भौतिक अनुसंधान किए। बर्ट ने अधिगम में पिछड़े बालक की परिभाषा देते हुए कहा है कि पिछड़ा बालक वह बालक है जोकि विद्यालय में पढ़ रहा है और कक्षा के कार्यों में अपनी उम्र तथा कक्षा के सामान्य सहपाठियों की तुलना में पिछड़ा हुआ है। बर्ट ने इसी आधार पर एक ओर सम्प्रत्यय को जन्म दिया, जिसे ‘‘शैक्षिक आयु’’ । का नाम दिया गया। शैक्षिक आयु का मापन मानवीकृत उपलब्धि परीक्षणों द्वारा मापा जा सकता है। मान लें कि एक दस वर्ष का बालक अपने से नीचे की एक कक्षा के भी कार्य नहीं कर सकता है। और वह अपने से दो कक्षा नीचे का ही आधा कार्य कर सकता है तो उसकी शैक्षिक आयु **8.5** वर्ष ही हुई और उसकी शैक्षिक उपलब्धि (Education Quotient)

E.Q. = EA/CA x 100 = 8.5/10 x 100 = 85

इस प्रकार यह बालक अपनी कक्षा में काफी पिछड़ा हुआ है।

अधिगम अक्षमता का अर्थ एवं परिभाषा

अधिगम असमर्थी बालक वे होते हैं कि जिनमें भाषा के बोलने अथवा लिखने में मनोवैज्ञानिक कमियां होती हैं। उनमें सुनने, सोचने, पढ़ने, लिखने, षब्दों का उच्चारण व वर्तनी करने, व गणित से

संबंधित गणना करने की योग्यता नहीं होती है। फिर भी ऐसे बालकों में सामान्य से अधिक बुद्धि स्तर पाया जाता है तथा वे श्रवण अथवा दृष्टि बाधित नहीं होते हैं।

'अधिगम अक्षमता' शब्द का प्रयोग कई समस्याओं को इंगित करने में किया जाता है। जैसे कि विशेष अधिगम निःशक्तता अल्परूप से मस्तिष्कीय असमान्य प्रक्रिया, अथवा अल्परूप से असमान्य तंत्रकीय क्रिया आदि। नेशनल ज्वाईंट कमेंटी ऑफ लर्निंग डिसेब्लिटिज (यू. एस. ए. **1998)** के अनुसार, अधिगम अशक्तता (निःशक्तता) एक सामान्य शब्द है जिससे कई प्रकार की निःशक्तता का ज्ञान होता है, यह निःशक्तता अधिगम, श्रवण, वाचन, पठन, लेखन, तार्किकता, गणितीय कुशलता के उपयोग करने में समस्या के प्रतिरूप में दृष्टिगोचर होती है। सभी प्रकार के विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में से कुछ का शारीरिक रूप से निःशक्तता ग्रस्त होते है जोकि सामान्य छात्रों की तरह मुख्य शैक्षिक धारा से जुड़ने में परेशानी महसूस करते हैं। ऐसे छात्र विद्यालय में संचालित होने वाली पाठ्य सहभागी गतिविधियों में षामिल होना चाहते हैं। परंतु इन्हें समुचित मौके उपलब्ध नहीं हो पाते। ऐसे अधिगम अक्षमता से पीड़ित छात्रों को मुख्य शैक्षिक धारा से जोड़ने के लिए शिक्षक को ऐसे छात्रों के साथ स्नेहपूर्ण, संवेदना से भरपूर व्यवहार करना चाहिए।

अधिगम में क्षतियुक्त वाले अथवा अधिगम में पिछड़े बालकों की विशेषताएं

पिछड़े बालकों की विशेषताएं-पिछड़े बालकों पर हुए अनेक अनुसंधानों के आधार पर इनकी कुछ सामान्य विशेषतायें इस प्रकार हुई है।

1. शारीरिक विशेषताएं- सामान्य बच्चों की तुलना में पिछड़े बालकों का शारीरिक विकास निम्न कोटि का पाया गया। पेशीय संतुलन में कमी, गंदी प्रतिक्रिया ज्ञानेंद्रियों के दोष और वाणी के दोष पिछड़े बालकों में पाये जाते हैं।

2. मनसिक योग्यताएं-पिछड़े बालकों में मुख्य कमी मानसिक योग्यता की ही है। उनमें अभूतपूर्व चिंतन तथा तर्क की योग्यता का अभाव होता है। वे किसी भी समस्या पर अधिक समय तक ध्यान एकाग्र नहीं कर पाते।

3. समाजिक और नैतिक विशेषताएं-अपनी उम्र के सामान्य बच्चों की तुलना में उनका सामाजिक समायोजन निम्न कोटि का होता है। चूंकि कक्षा में अन्य बालक इन्हें अपने मित्र के नाते स्वीकार नहीं करते ओर उनकी आलोचना करते हैं, अतः इनमें अवांछित सामाजिक विशेषताएं विकसित हो जाती है। गोर्डेन ने एक अनुसंधान द्वारा यह निष्कर्श निकाला कि निम्न बुद्धि लब्धि वाले बालकों में धोखाधड़ी करने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है।

लैविस (स्मूपे) ने एक सर्वेक्षण में बालक और बालिकाओं का अध्ययन कर यह निष्कर्श निकाला कि सामान्य बालक मंदित बालकों की तुलना में अधिक भरोसा करने योग्य और ईमानदार है।

अधिगम अक्षमता पहचान एवं उपचारात्मक विधियां: प्रत्येक कक्षा में कुछ ऐसे छात्र दृष्टिगोचर होते हैं, जिन्हें शिक्षण देने (पढ़ाने) के दौरान सामान्य निर्देशों से कुछ अधिक लाभ नहीं होता है। अधिगम अक्षमता की अवधारणा का सर्वप्रथम उपयोग किर्क द्वारा **1963** में न्यूयार्क में आयोजित अभिभावकों के सम्मेलन में किया गया। अधिगम अक्षमता से प्रभावित छात्र सामान्य छात्रों की तुलना में ज्यादा भिन्न दृष्टिगोचर नहीं होते। सामान्य व्यक्तियों को इनकी कठिनाई स्पष्टतः नजर नहीं आती। बहुत से कार्य करने का, इनका ढंग सामान्य छात्रों के जैसा ही होता है। तथा कुछ विशेष कार्य करने का, इनका ढंग सामान्य छात्रों की तुलना में अधिक कुशलतापूर्वक कर सकते हैं। इनकी बुद्धि स्तर सामान्य अथवा सामान्य से अधिक होती है।

स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों में औसतन दस से पंद्रह फीसदी छात्र सीखने की प्रक्रिया में कठिनाई महसूस करते हैं। इन्स्ट्रीट्यूट ऑफ न्यूरोलॉजी केरल में किए गए सर्वे के अनुसार ऐसे छात्र लगभग उस फीसदी तथा बंगलौर में किए गए सर्वे के अनुसार पंद्रह फीसदी छात्र अधिगम अक्षमता से पीड़ित होते हैं इसलिए ऐसे छात्रों की मानसिक जरूरतों को समझना हम सबके लिए जरूरी है।

इनमें किसी प्रकार की निःशक्तता (अक्षमता) जैसे दृष्टिविकार, शारीरिक अक्षमता मानसिक अल्पविकास, श्रवण अक्षमता स्पष्टतः दृष्टिगोचर नहीं होती। परंतु ऐसे छात्रों में पठन-लेखन में अशुद्धता विशेष विषयों की कठिनाइयों के हल करने में परेशानी महसूस करते हैं। लेकिन इसका आधार मानसिक पिछड़ापन नहीं होता। इस प्रकार के छात्र जिन्हें पठन-लेखन, विशेष जैसे गणित, भाषा, विचार आदान प्रदान (संप्रेशण) की समस्या का सामना करना पड़ता है उन्हें विशिष्ट प्रकार के अधिगम अक्षमता से पीड़ित छात्रों के रूप में पुकारा जाता हे। ऐसे छात्र मानसिक दृष्टि से अक्षम ने होनें के बावजूद अपने आयु वर्ग एवं स्तर के छात्रों की भांति अधिगम उपलब्धि हासिल नहीं कर पाते हैं।

अधिगम असुविधायुक्त बालकों की श्रेणियां

अधिगम असुविधायुक्त बालों को तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है-

1. **छूरदराल (विलग) क्षेत्रों में रहने वाले बालक**
   कुछ क्षेत्र भौगोलिक रूप से अलग-थलग पड़ जाते हैं, जैसे- कोई टापू, पहाड़ी क्षेत्र, रेगिस्तानी क्षेत्र। यहां के निवासी सभ्यता से दूर रह जाते हैं। बालक विद्यालय नहीं जा पाते। जब ये बालक विद्यालयों में लाये जाते हैं तो इनके ज्ञान का स्तर काफी निम्न होता है। अर्थात् पूर्वविद्यालयी ज्ञान जो एक साधारण बालक अपने परिवार व वातावरण से प्राप्त कर लेता है, ये दूर-दराज के बालक प्राप्त नहीं कर पाते हैं। अतः जब ये विद्यालय में प्रवेश लेते हैं, इनका ज्ञान अत्यंत सीमित होता है।
2. **माता-पिता तथा घरेलू परिस्थितियों के शिकार बालक**

कुछ बालकों के माता-पिता अशिक्षित, गरीब, समाज से बहिष्कृत आदि होते हैं। जैसे माता-पिता अपने बच्चों को एक उचित व प्रेरक वातावरण देने में सफल नहीं हो पाते हैं। घर में पुस्तकों का, समाचार-पत्रों का अभाव रहता है। अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी नहीं होती है। कुछ माता-पिता षराब आदि की लत से पीड़ित होते हैं। उनका यह व्यवहार बच्चों को परेशान करता है। षराब के कारण आर्थिक स्थिति निम्न होती है और घर ज्ञानवर्धक परिस्थितियों से वंचित रह जाता है। यदि माता-पिता सांस्कृतिक रूप से भिन्न वातावरण के हैं तो भी अधिगम हेतु उचित वातावरण नहीं बन पाता है, क्योंकि परिवार का सामाजिक दायरा सीमित होकर रह जाता है। कभी माता-पिता का धन संपन्न होना भी बालक को कोई लाभ नहीं देता है। बालक आया की देख-रेख में रहता है और उसके सीमित ज्ञान में पलता है। जब माता-पिता दोनों नौकरी करते हैं अथवा माता बच्चों के लालन-पालन की अपेक्षा क्लब आदि में रूचि लेती है तो ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है। यदि बालकों को खटोले (ब्तपइ) में ही अधिकतर समय रखा जाय तो बालक गामक क्रियाएं भली प्रकार नहीं सीख पाता है। उसकी वातावरण को खोजने की मूल प्रवृत्ति भी नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है।

3. **सामाजिक संस्थओं में पले-बढ़े बालक**

समाज में कुछ ऐसी विशेष संस्थाएं हैं जो अनाथ और छोड़े हुए बच्चों का पालन-पोषण करती हैं, उदाहरणार्थ-अनाथालय। इन संस्थाओं का उदेश्य बालक का भरण-पोषण हैं इन संस्थाओं के पास उतना ही पैसा और सुविधाएं होती हैं जो बालक को जीवित रखने और प्राकृतिक विकास करने के लिए ही पर्याप्त होती है। इसलिए बालक को ऐसा भौतिक वातावरण नहीं मिल पाता जो रंग, संगीत और अन्य उत्तेजनाओं से भरपूर हो। संस्था के कर्मचारी प्रशिक्षित नहीं होते हैं और संस्था के पास इतना पैसा नहीं होता है कि बालक को शिक्षित करने के लिए प्रशिक्षित आया और शिक्षक रख सकें। फलस्वरूप बालक का ज्ञानात्मक विकास सूचनाओं के अभाव में अवरूद्ध-सा हो जाता है।

ये तीनों श्रेणी में आने वाले बालक शारीरिक व मानसिक योग्यता रखते हुए भी असुविधाओं के कारण उन भावों का अधिगम नहीं कर पाते जो स्कूल प्रवेश के समय एक सामान्य बालक सीख कर आता है।

अधिगम अक्षमता के विभिन्न प्रकार

अधिगम अक्षमता में छात्रों का आचरण एकल लक्षणों पर आधारित न होकर, व्यापक एवं विशिष्ट प्रकार का होता है जिनमें निम्नलिखित प्रमुख होते हैं-

1. मौखिक रूप से अधिगम संबंधी क्षतियुक्त निःशक्तता

a. मौखिक कौशलात्मक, विचारात्मक, अभिव्यक्ति का अभाव होना- इसमें छात्रों को लिखे हुए शब्द का अर्थज्ञान प्राप्त करने को बोलकर अभिव्यक्त करने की कुशलता का निम्न स्तर होता है।

b. षब्दों को अभिव्यक्ति करने तथा अर्थज्ञान प्राप्त करने की आंशिक अक्षमता जोकि मस्तिष्कीय चोट, बीमार अल्पविकसित दिमाग के कारण हो सकती है।

2- पठन संबंधी क्षतियुक्त निःशक्तता

(अ) पुस्तक पर लिखी हुई अथवा मुद्रित सामग्री को पठन करने की क्षमता की कमी का होना।

(ब) मौन पठन अथवा सस्वर पठन की योग्यता की कमी जोकि सामान्यतः दृष्य एवं मौखिक दोनों के आपसी सहयोग की कमी के कारण होता है। इसमें कभी-कभी देखी तथा सुनी बातों की सामान्य, शब्द का अर्थ ज्ञान करने संबंधी समस्या भी दृष्टिगोचर होती है।

3. लेखन संबंधी क्षतियुक्त निःशक्तता

(अ) लेखन तथा षुद्ध वर्तनी की अकुशलता।

(ब) ऐसे कार्य निष्पादन में अकुशलता जिसमें मांसपेशी के आधारभूत समन्वय की जरूरत होती है।

(स) भाषा के उचित उपयोग या समझने की अकुशलता।

(द) लेखन संबंधित अकुशलता जिसमें अक्षर, शब्द, अंक की नकल करने की अकुशलता दृष्टिगोचर होती है।

(व) लेखन या चित्रांकन करने समय उत्तम क्रिया में अकुशलता दृष्टिगोचर होती है।

4. वर्तनी संबंधित क्षतियुक्त निःशक्तता

ज्यादातर अधिगम निशक्त छात्रों में कम या ज्यादा वर्तनी संबंधित समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

5. गणितीय संबंधित क्षतियुक्त निःशक्तता

(अ) मौखिक अकुशलता-गणितीय समस्या को जब मौखिक रूप से व्यक्त किया जाए अथवा मौखिक उत्तर की अपेक्षा की जाए तब अधिगम निशक्त छात्र असफल सिद्ध होते हैं।

(ब) भिन्न वस्तुओं के मध्य तुलना स्पष्ट करने में अकुशलता-इनमें वस्तु की विभिन्नताओं को समझकर अथवा एक-दूसरे से षेपस् (आकार), कलर आदि में भिन्नात्मक वस्तुओं के मध्य तुलना स्पटीकरण में अकुशलता प्रकट होती है।

(स) इसमें अधिगम निःशक्त छात्रों को बताए गए अंकों क ेलेखन में व प्रतीकों में नकल करने में निःशक्तता प्रकट होती है।

(द) उसमें अंक प्रतीकों, बहुअंकीय संख्या के पठन में निम्न स्तरीय कमी अथवा कठिनाई दृष्टिगोचर होती है।

(व) इसमें मुख्यतः गणितीय विचार तथा संबंध की जानकारी तथा मस्तिष्कीय गणना करने संबंधित अकुशलता दृष्टिगोचर होती है।

6. संवेगीय (आवेगिय) क्षतियुक्त निःशक्तता

ऐसे छात्र आमतौर पर संवेगीय अधिकता के कारण कार्य को बिना सोचे, समझे तेजी से कार्य करते हैं। अकुशल योजना, हड़बड़ाहट गलत निर्णय करने की योग्यता अधिगम निःशक्तता वाले छात्रों की विशेषताएं होती हैं।

7. व्याकुलता/विभ्रन्ति से पीड़ित निःशक्तता

ऐसे छात्रों में आमतौर पर अपने द्वारा निर्धारित मूल लक्ष्यों को पूर्ण करने की जगह दूसरे साधारण दृश्य, ध्वनि (आवाज) के प्रति आकर्षित हो जाना सामान्य बात होती है।

8. एकाग्रचितता की कमी वाले बालक

ऐसे छात्र अपने निर्धारित मूल लक्ष्य या गतिविधि पर ज्यादा एकाग्रचिचता से ध्यान दे पाने में सामान्य छात्रों की तुलना में कमजोर रहते हैं। गतिविधियों, कार्यों को असंतोष के कारण बीच में ही अधूरा छोड़ देते हैं।

9. निर्देशों के अनुपालन करने संबंधी क्षतियुक्त निःशक्तता

अधिगम निःशक्तता से ग्रस्त बच्चे निर्देशानुसार उचित कार्य के संपादित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इनकी स्मरण षक्ति कमजोर होने के कारण कही-सुनी बातों को शीघ्र भूल जाते है।

10. बेचैनी/अति सक्रिया से पीड़ित बालक

ऐसे छात्र किसी एक विशिष्ट जानकारी पर ध्यान केंद्रित करने की जगह सभी तरफ से दृश्यों, ध्वनियों, घटनाओं पर ध्यान देते हैं। निरन्तर विचलित रहते हैं तथा कुछ समय भी स्थिर उठ या बैठ नहीं सकते।

11. निम्न सक्रियता से ग्रस्त बालक

ऐसे छात्र सुस्त, सोते, धीरे-धीरे कार्य करते हुए निम्न सक्रियता के लक्षणों से युक्त होते हैं।

12. पुनरावृत्ति दोहराने वाले बालक

ऐसे छात्र किन्हीं कार्यों (गतिविधियों) को बार-बार निरंतर दोहराते हैं उन्हें अपने लक्ष्य के आरंभ करने एवं अंत करने की जानकारी ही नहीं होती है। उन्हें कार्य के आरंभ तथा अंत पर रोकने की याद ही नहीं रहती।

13. सामान्य अकुशलता/अपटपटापन से पीड़ित बालक

ऐसे छात्र सामान्य छात्रों की तुलना में अधिक फूहड़, बेढ़गें होते है जो कि स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों प्रकार के प्रतिप्रेरण समायोजन में कठिनाई महसूस करते है। व्यक्ति, एवं वस्तु से टकराते रहते है।

14. हस्त कौशल स्थापित न कर सकने वाले बालक

ऐसे छात्र किसी एक हाथ से कार्य करने में कुशल होने के स्थान पर दोनों हाथ से कार्य करने में अकुशल होते हैं।

15. झगड़ालू किस्म वाले बालक

ऐसे छात्र उपरोक्त आचरण संबंधी लक्षणों के कारण कक्षा के अन्य छात्रों को नाराज करने वाली परेशानी पैदा कर सकते हैं। अतः इनका निर्वाह (सामंजस्य) उतना अच्छा नहीं हो सकता, जितना सामान्य छात्रों का।

अधिगम अक्षमता से पीड़ित छात्रों के पहचान चिह्न

1. क्रियात्मक गति कौशल संबंधी पहचान चिह्न

ऐसे छात्रों में कूदने, उछलने, फुदकने, फेकनें, लात मारने एवं वस्तुओं को उठाने जैसी सामंजस्यपूर्ण गतिविधियों के शारीरिक नियंत्रण में कमी दृष्टिगोचर होती है। जो निम्नलिखित है-

a. बांहों, टांगों, धड़ एवं पैरों की मांसपेशियों का सामंजस्यपूर्ण संचालक, शारीरिक कमी वाला होता है।

b. कांटने, चिपकाने, रंगने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

c. दोनों हाथों, बांहों के एक साथ द्विपक्षीय संचालक से वस्तु उठाने, फेंकने आदि में कठिनाई पेश आती है।

d. विपरीत बांहों एवं टांगों के एक साथ उपयोग में कठिनाई पेश आती है। सुतंलन में बेढ़ंगापन नजर आता है।

e. सही लेखनी बताकर, दिखा सकता है, लेकिन वैसा लिख नहीं सकता।

f. बार-बार एक जैसी प्रतिक्रिया व्यक्त करना, उम्र के अनुसार बात न करना, मंुह से आवाज निकलना आदि दृश्टिगोचर होती है।

2. दृश्य अवलोकन बोध कौशल संबंधी पहचान चिह्न

g. ऐसे छात्रों में दृष्टि अनुभूति, देखकर मार्ग खोजना, याद रखना, दृष्टि एवं प्रेरकता समन्वय की कमी दृष्टिगोचर होती है जैसे कि-देखे हुए दृश्य सामान इत्यादि अर्थ लगाने, आकृति, आकार, स्थिति, रंग, संचालन के निर्णय कर पाने की कौशल की कमी।

h. आकृति, चित्र इत्यादि को देखकर उनकी समानता एवं असमानता (भिन्नता) के अंतर को जानने के कौशल की कमी।

i. किसी आंरभिक बिंदु पर आंखों को केंद्रित ऊपर-नीचे, दाएं-बाएं धूमाने की दृष्टिमार्ग खोजने की क्षमता की कमी।

j. किसी चीज को थोड़ी देर पहले देखकर, उनकी समानता को कुछ समय बाद उस वस्तु के स्थान परिवर्तन करने या हटाने पर सही उत्तर न दे पाने अर्थात् देखकर याद रखने के कौशल की कमी।

k. कुछ छात्र साधारण रूप से आधार, रूपाकृति को नकल कर पाना दृष्टि द्वारा गति प्रेरकों के समन्वय के अभाव की कमी से ग्रस्त हे।

l. ऐसे छात्र सीधे पंक्ति में लिखने में कमजोर होते हैं तथा लिखते समय अक्षर एक दूसरे के ऊपर लिखते हैं। अक्षरों के बीच जंग को छोड़ते, विचित्र प्रकार के अक्षर लेखन, उल्टा लेखन आदि से ग्रसत होते हैं।

m. इनका लेखन अस्पष्ट लाईनों में रंग भरने की अक्षमता काटना, चिपकाना, जोर से पैंसिल पकड़कर लिखवाना आदि।

3. श्रवण कौशल संबंधी पहचान चिह्न

1. ध्वनि/शब्दों के बीच भिन्नता करने की कमी। परिचित/अतिरिक्त स्वरों/आवाजों की भिन्नता को पहचानने की कमी।
2. सुने हुए को याद रखना, ध्वनि के आने की दिशा, स्थिति का पता लगाने की क्षमता, सामान्य आवाज पहचानने की कमी।
3. सामान्य गति से सस्वर पढ़ने, बातचीत को समझने में कठिनाई, मौखिक निर्देशों के अनुपालन करने की कमी।
4. अध्यापक तथा अन्य आवाजों के बीच अंतर कर पाने की कमी।

4. बोधात्मकता कौशली संबंधी पहचान चिह्न

1. सामाजिक परिस्थिति, भाव भंगिमा को समझने की कमी।
2. एक जैसी अवधारणा के मध्य संबंधों को समझने की कमी।
3. वस्तु समानता/भिन्नता तुलना वर्गीकरण करने में कठिनाई।
4. कल्पनाशक्ति, हास्य विनोद न समझना, चुटकले न समझ पाना अत्यधिक भोलापन।
5. अभिव्यक्ति कमी, धीमी प्रतिक्रिया, स्वतंत्र लेखन की कमी।
6. बेतुका जवाब, तर्कसंगत सोच का अभाव, विषय से अलग अटपटा जवाब।
7. भावना, सुंदरता, बहादुरी अंक अवधारणा छोटा व बड़ा समझने में कमजोर।
8. सामान्य गति से सस्वर पढ़ने, बातचीत को समझने में कठिनाई, मौखिक निर्देशों के अनुपालन करने की कमी।
9. अध्यापक तथा अन्य आवाजों के बीच अंतर कर पाने की कमी।
10. संचार कौशल संबंधी पहचान चिह्न
11. ऐसे छात्र विभेदीकरण, स्थितिकरण ग्रहण षक्ति भाषा समस्या से प्रभावित।

12. मौखिक अभिव्यक्ति, व्याख्यात्मक उत्तर, उच्चारण में हकलाना, तुतलापन जैसी समस्या से ग्रसित होना।

13. वाक्य संचरण, व्याकरण संबंध, भाषा उपयोग, चित्र दिखाकर, आवाज द्वारा वर्णन करना आदि।

6. सामाजिक कौशल संबंधी पहचान चिह्न

1. ऐसे छात्र आक्रामक, विमुखतापूर्ण, मित्रतापूर्ण संबंध कायम करने में कठिनाई महसूस करते हैं।
2. मौखिक अभिव्यक्ति, खेल में उत्तेजित, दूसरों के अकारण उलझने, बेवजह घूमने, तंग करने के लिए षरारतें करने जैसी क्रियाएं करते हैं।
3. दूरी/स्थान एवं शारीरिक सजगता संबंधी पहचान चिह्न
4. परिचित वातावरण में गुम होना जैसे स्कूल, घर, पास-पड़ोस आदि।
5. दिशा संबंधी समस्या, बाएं से दाएं पढ़ने-लिखने में समस्या।
6. शब्द के बीच स्थान अभाव, गणित में कॉलम सीधे न रखना, वस्तु से टकराना, संभावित दुर्घटना का शिकार होना।
7. ऊपर-नीचे, आस-पास अंदर से, पहला, अंतिम, आगे-पीछे की अवधारणा को न समझ पाना।

8. स्मरण षक्ति संबंधी पहचान चिह्न

3. तुरंत देखा हुआ भूल जाना, तुरंत सुना हुआ भूल जाना मौखिक चार अंकों को क्रमवार याद न रख पाना।

4. गणित की समस्या की षुद्ध नकल न पाना, सामान्य/वारंट वाले/पढ़े जाने वाले षब्दों की वर्तनी याद न रखना।

5. सीमित अभिव्यक्ति, वस्तु के नाम याद न रख पाना, सीमित भाषा गृहण षक्ति।

6. कुछ गलती बार-बार करना, अभ्यास का लाभ न उठा पाना।

7. अनुचित लेखन, पद्धति, विराम चिह्न का प्रयोग न करना आदि।

9. व्यवहारिक घटक अभाव संबंधी पहचान चिह्न

a. अस्थिर बैठना, उठना, खड़ा होना, चंचलता, आवाज करते रहना।

b. परिणाम पर ध्यान दिए बिना कार्य करना, चिड़चिड़ापन, उचित समयाविधि में कार्य समाप्त नहीं करना।

c. एकाग्रचितता का अभाव, पढ़ते समय पूर्ण ध्यान न देना, मानसिक रूप से अनुपस्थित, शारीरिक रूप से उपस्थित रहना।

d. नियम उल्लंघन करना, बहाने बनाना, क्रूरतापूर्ण व्यवहार, आदि।

e. अधिगम क्षतियुक्त निःशक्तता वाले बालकों हेतु शिक्षण तैयारियां

f. शिक्षण कार्य से पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि छात्र दिए गए निर्देश को समझ रहा है।

g. छात्र को उतना आर्कशित करने वाला व्यवहार ही तो उसे ऐसा कार्य दं े जो उसे पसंद हो, और वह स्वस्थ रूप से करता हो।

h. कार्य के दौरान बच्चे को सकारात्मक पुर्नबलन प्रदान करें।

i. कक्षा में उसे षांत रहने के लिए कोने पर बिठाये

j. शैक्षिक उपाय अति चंचल बालकों हेतु

k. सामाजिक कौशल का प्रशिक्षण दिया जाए।

l. विद्यालय स्तर पर वातावरण, व्यवहारिक एवं निर्दं ेशात्मक हस्तक्षेप प्रदान करें।

m. शारीरिक हस्तक्षेप जैसे तैरना, जिमनास्टिक, दौड़, इत्यादि खेल खिलाएं।

n. चिकित्सकीय हस्तक्षेप जैसे- दवाई, इत्यादि का सेवन उचित समय पर करायें।

o. अभिभावकों का शिक्षण जोकि अभिभावकों को उनके बच्चों के व्यवहार परिशोधन का प्रबंधन करने में सहायता देती है। इसके लिए अभिभावकों की कक्षाएं एवं कार्यशाला इत्यादि का आयोजन करना जिसके लिए अभिभावकों के स्वयं समूह भी काफी मददगार साबित हो सकते हैं।

7.10 समावेशन में अनुदेशनात्मक एवं पाठ्यक्रम सम्बंधी अनुकूलन

विद्यालय असमर्थी या दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए स्कूल-वातावरण के ऐसे तत्वों में परिवर्तन करते हैं जो छात्रों की प्रगति में बाधा डालते हैं। अनुकूलन (।बबवउवकंजपवद) शब्द से अभिप्राय दिव्यांग विद्यार्थियों के अनुदेशन में उसकी कमियों को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों का अनुकूलन करना होता है। यह उन उपागमों को अधिक महत्व देता है जिनमें अधिगम को प्रोत्साहित करने के लिए या तो अधिगम वातावरण को या सम्पूर्ण वातावरण के कुछ तत्वों को बदला जाता है। मुख्य ध्यान अधिगम वातावरण या विद्योपार्जन आवश्यकताओं को परिवर्तित करने पर केन्द्रित होना चाहिए ताकि छात्र मौलिक कमजोरियों या कमियों के बावजूद भी सीख सकें।

अनुकूलन में परिवर्तित अनुदेशानात्मक तकनींके, इसके अतिरिक्त और अधिक लचीला प्रशासकीय अभ्यास, परिवर्तित विद्योपार्जन आवश्यकताएं या कोई तुलनात्मक गतिविधियाँ, जो मजबूत, अधिक आर्कशक क्षमताओं के प्रयोग पर बल देती हैं या परिवर्तित या वैकल्पिक शैक्षिक प्रक्रिया या लक्ष्य प्रदान करती हैं, षामिल होती हैं।

7.11 पाठ्यक्रम विकास के मानक

समावेशी उपागम द्वारा बना पाठ्यक्रम यह सुनिश्चित करता है कि जिन मानकों द्वारा पाठ्यक्रम तैयार किया गया है वह इतने विस्तृत हों कि विद्यार्थियों की अधिगम शिक्षण से सम्बन्धित सभी आवश्यकताएं पूरी हो सकें। मापक प्रायः दो प्रकार के होते हैः-

1. विषय-वस्तु मापक और प्रदर्शन मापक विषय-वस्तु मापक उस ज्ञान और कौशल का वर्णन करता है जिन्हें विद्यार्थी प्राप्त कर सके। प्रदर्शन मापक से अभिप्राय इन मापकों का प्रयोग करते हुए उपलब्धि के ऐच्छिक स्तर पर बच्चे को लाना होता है।
2. पाठ्यक्रम काफी विस्तृत हो ताकि विभिन्न प्रकार के विद्यार्थियों की आवश्यकताएं पूरी हो सकें चाहे छात्र महाविद्यालय में पढ़ने जाए या कार्य बल के रूप में अपना काम करनाशुरुकरे।
3. यह विभिन्न प्रकार के छात्रों के लिए उचित होना चाहिए।
4. यह मानकों पर आधारित लक्ष्यों व उदेश्यों के ढांचे को प्रोत्साहित करे।
5. इसमें समावेशी अनुदेशनात्मक उपागम तथा सामग्री षामिल होना चाहिए। जो विभिन्न आवश्यकताओं के छात्रों के प्रयोग के लिए उपलब्ध हो। अन्य षब्दों में, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन में विभिन्नता का कारण दिव्यांगता की किस्म नहीं बल्कि अनुदेशनात्मक आवश्यकताएं होती हैं।
6. अनुदेशनात्मक अनुकूलता मुख्य रूप से सामग्री में या विषय-वस्तु में परिवर्तन से सम्बन्धित है। जिन छात्रों में दिव्यांगता का स्तर कम है उनके लिए अनुकूलनता उनके कौशलों को विकसित करने के लिए कड़ी का काम करती है। अनुदेशन के अलावा कुछ और नहीं हैं जिसका प्रयोग कौशलों और नीतियों में कर सकंे ताकि विद्यार्थी भविश्य में आत्मनिर्भर अधिगमकर्ता बन जाए।

7.11 अनुकूलन के प्रकार

'अनुकूनल' से अभिप्राय एक परिवर्तन तालमेल से है जो यह सम्भव बनाती है कि एक दिव्यांग छात्र सभी के साथ समान अवसर प्राप्त कर सके। तर्कपूर्ण समायोजन कक्षा-कक्ष की सुव्यवस्था, गतिविधियों के प्रकार व समान अवसरवादिता में सुधार की सुविधा के द्वारा किया जा सकता है।

सामान्य समायोजन इस प्राकर हैंः-

i. कक्षा-कक्ष की उचित स्थिति।
ii. दत्तकार्य की पहले ही सूचना देना।

- **iii.** दत्तकार्य को पूरा करने के वैकल्पिक तरीके, जैसे मौखिक प्रदर्शन या लिखित परीक्षा।
- **iv.** सहायक कम्पयूटर अनुदेशन।
- **v.** सहायक श्रवण उपकरण।
- **vi.** विशेष सहायक सामग्री तथा सेवाएँ (जैसे लिखने वाली या पढ़ने वाली)
- **vii.** फिल्म या दृश्य सामग्री के लिए उसमें सम्मिलित कुछ दृश्य।
- **viii.** कोर्स या कार्यक्रम में परिवर्तन।
- **ix.** दस्तोवज परिवर्तन (वैकल्पिक पिं्रट प्रारूप, ब्रेल (ठतंपससम). बड़े छपाई वाले शब्द, टेप, यांत्रिक साधन, उभरे हुए शब्द आदि)।
- **x.** परीक्षाओं में परिवर्तन।
- **xi.** अध्ययन कौशल तथा रणनीति प्रशिक्षण।
- **xii.** समय को बढ़ाना।
- **xiii.** रिकार्ड किए हुए अभिभाशण।

पाठ्यक्रम से सम्बंधित व अनुदेशनात्मक परिवर्तन क्रियात्मक, आयु-वर्ग के अनुसार व प्रतिबिम्ब प्रदान करने वाले होने चाहिए। कक्षा-कक्ष के अध्यापक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कक्षा शिक्षण की विषय-वस्तु जिला/राज्य या प्म्च् की पाठ्यक्रम की अपेक्षाओं के अनुरूप है। जब अध्यापक एक समावेशी कक्षा में अनुदेशन प्रदान कर रहा हो तो वह कुछ परिवर्तन कर सकता हैः-

1. दत्तकार्यों की पहले सूचना का होना व विद्यार्थी के पास कम-से-कम पाठ्य सामग्री का ज्ञान तो होना ही चाहिए जो दत्तकार्य से सम्बन्धित हो। इससे वह दत्तकार्य आसानी से कर सकते हैं।

2. पाठ्यविषय एक संक्षिप्त पाठ्यविषय छात्रों का सहायक हो सकता है, इसमें उदेश्यों, विभिन्न सामग्रियों, गतिविधियों, दत्तकार्यों और परीक्षा-तिथियों का वर्णन होना चाहिए।

3. प्रकरण की रूप-रेखा ; अध्यापक कोर्स की रूप-रेखा को अलग से तैयार करता है। यह सम्बन्धित कोर्स की विषय-वस्तु की एक सामान्य धारा दर्शाती है। इससे पाठ्यक्रम द्वारा निर्धारित धारणाओं, नियमों, सिद्धांतो तथा छात्रों की उपलब्धि को जाना जा सकता है।

4. अध्ययन मार्गदर्शिका ; प्रकरण की रूप-रेखा की अपेक्षा औपचारिक तथा प्रभावशाली प्रक्रिया यह माग करती है कि शिक्षक एक अध्ययन मार्गदर्शिका तैयार करे जो विशिष्ट उदेश्यों, दस्तावेजों तथा मूल्यांकित मापदंड के साथ बनाई गई हो। अध्ययन मार्गदर्शिका में विस्तारपूर्वक लिखित सामग्री हो सकती है जो सम्बन्धित विशिष्ट अध्ययन की धारणाओं को पहचानने में स्पष्टता दिखाए। ऐसे कई उपकरण अब आ चुके हैं जो प्रत्येक छात्र के साथ प्रयोग किए जा सकते हैं जो कक्षा में उपस्थित होते हैं। मार्गदर्शिका में निम्नलिखित बातें शामिल होती हैं-

1. प्राप्त किए जाने वाले विशिष्ट उदेश्य।

2. समयाविधि जिसमें क्रियाएँ पूर्ण करवानी है।
3. अध्ययन के विशिष्ट उत्पाद जैसे रिपोर्टें।
4. विशेष पठन-दत्तकार्य तथा अन्य गतिविधियाँ।
5. मूल्यांकन मापदंड तथा उदाहरण-वस्तु।

5. अध्ययन कौशल तथा रणनीति प्रशिक्षण - प्राथमिक स्कूलों का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थी को लिखित पृष्ठ के अर्थों को पढ़ाना है। चौथी कक्षा से आगे की पढ़ाई में पहली बार कक्षाओं की दोहराई भाषण, विस्तार तथा उसमें नए सम्बन्ध षामिल हैं। विशेष अध्यापकों को छोटे बच्चों को पढ़ाने के लिए लिखित अकंन तथा मौलिक रूप से पढ़ाई जाने वाली सामग्री से पढ़ाने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है।

कुछ छात्रों के अतिरिक्त जो पूर्ण रूप से दोहराई न करने वाले हैं; अन्य छात्र अध्ययन कौशलों पर काम ध्यान देते हैं।अध्ययन कौशल एक पठन किया है जो पाठ्यक्रम से सम्बन्धित क्षेत्रों के अध्ययन के लिए प्रयोग होती है। पाठ्य-पुस्तक का पठन इस बात से बिल्कुल अलग है कि छात्र क्रमबद्धता आधारित तथा अन्य विकासशील सामग्री का अध्ययन कैसे करता है। अधिकतर पुस्तकें आकर्षक, रंगीन तस्वीरों और चित्रों के साथ बनाई जाती है और पाठ्यक्रम से सम्बन्धित भी होती हैं। पठन के बाद विद्यार्थियों को अक्सर क्रमबद्धता तथा कहानी की घटनाओं को याद करके तथा अन्य विवरण से ज्ञान प्राप्त होता है तथा दूसरी ओर ऐसी पुस्तकें भी तकनीकी षब्दों तथा अपरिचित तथ्यों से भरी व नीरस हों। तथ्य यह है कि कठोर और कठिन षब्दों का प्रयोग, जो तथ्यों तथा धारणाओं से सम्बन्धित है और जो अरूचिकर व कठिन है, विद्यार्थी के अध्ययन कौशल के लिए आवश्यक है। यह परम्परागत विशय-वस्तु प्रदर्शन द्वारा अधिगम को प्रभावी बनाता है। अध्ययन कौशल शब्द-कोष तथा अधिगम समाग्री के उपयोग आस-पास की जानकारी तथा तकनीकी के द्वारा सूचना-संगठन से सम्बन्धित है।

6. **शिक्षण-सामग्री** - अध्यापक कक्षा में अपने प्रदर्शन में तकनीकी तथा माध्यमों का प्रयोग कर सकता है। अधिकतर अध्यापकों में से कुछ अध्यापक ही सहायक माध्यमों के किसी न किसी रूप का प्रयोग करते हैं - जैसेः कि किताबों व पत्रिकाओं में लगी हुई तस्वीरें।

कई छात्र जो सूचना के विभिन्न स्त्रोतों पर निर्भर करते हैं जो बाहरी रूप से अधिगम प्रदान करते हैं। परन्तु किसी प्रकार से अनुदेशन अवसरों को माध्यमें द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है। किसी प्रकार की दृश्य सूचना को अध्यापक द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है जो पाठ से सम्बन्धित हो ताकि वह मुख्य बातों को प्रस्तुत कर सके इसका उपयोग अध्यापक कक्षा में छात्रों का ध्यान अपनी ओर खींचने के लिए, विस्तृता की जानकारी के लिए, ज्ञान को अधिक विकसित करने के लिए, बच्चों से उनकी क्षमता को जाने के लिए, विद्यार्थी-अधिगम और दोहराई के लिए कर सकता है। स्कूल को उन्हें विशेष सामग्री प्रदान करनी चाहिए जैसे कि प्रयोगशाला, सहायक अथवा पाठक आदि।

7.13 पाठ्यक्रम सम्बंधी अनुकूलन

समावेश से अभिप्राय केवल यह नहीं है कि असमर्थ बच्चा नियमित कक्षा-कक्ष में दाखिला ले बल्कि उसकी कमियों को नियमित कक्षा-कक्ष के साथ अनुसरित करके उसकी विशेष कमियों की दूर करने में सहायता की जानी चाहिए। इस प्रकार इसे छात्र-केन्द्रित उपागम बनाया जा सकता है। सहयोग को प्रत्येक छात्र की अनुदेशनात्मक आवश्यकताओं के आधार पर निर्धारित करना चाहिए। समावेश के द्वारा शिक्षा को सफल सिद्ध किया जा सकता है परन्तु अनुदेशनात्मक युक्तियों और उनमें सुधार आवश्यकतानुसार तथा समझदारी के साथ किए जाने चाहिए।

पाठ्यक्रम में विकास तथा सुधार; समावेशी शिक्षा को विभिन्न प्रकार की अनुदेशनात्मक युक्तियों की आवश्यकता होती है जो सभी विद्यार्थियों को उनकी बुद्धिमता, अधिगम शैली, क्षमताओं और कमियों की विभिन्नता के साथ अधिगम करने में सहायता करती है।

समावेशी शिक्षा परम्परागत पाठ्यक्रम की सहायता से प्रदान नहीं की जा सकती है क्योंकि यह विशिष्ट बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करती। इसलिए यह आवश्यक है पाठ्यक्रम में सुधार किया जाए। पाठ्यक्रम में विकास और सुधार निम्नलिखित तरीकों से किया जा सकता हैः

1. **बहु-स्तरीय तथा लचीला पाठ्यक्रम ;** स्कूलों में समोवशी शिक्षा प्रदान करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य हैं। विभिन्न योग्यताओं के विद्यार्थियों को एक ही कक्षा में पढ़ाया जाता है, इसलिए यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम लचीला हो जो विद्यार्थियों की विभिन्न क्षमताओं और आवश्यकताओं को पूरा कर सके।
2. **सहकारी पाठ्यक्रम ;**ब्व.व्चमतंजपअम ब्नततपबनसनउद्धरूपाठ्यक्रम इस प्रकार निर्मित होना चाहिए कि वह सहकारी गतिविधियों को अधिक बढ़ावा दे। यदि छात्र किसी काम को मिलकर करेंगे तो वह उसे आसानी से सीख सकेंगे। इसके अतिरिक्त उनमें सामाजिक वार्तालाप, सहयोग तथा टीम प्रयास की भावना भी उत्पन्न होगी।
3. **पर्याप्त सुविधाएँ ;**पाठ्यक्रम में पर्याप्त सुविधाएं प्रदान करने और इन सुविधाओं का प्रयोग करने को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
4. **पठन-सामग्री प्रदान करना-** विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और रूचियों के अनुसार पठन-सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए; उदाहरण के लिए नेत्रहीन विद्यार्थियों के लिए पठन-सामग्री के रूप में ब्रेल ;ठतंपससमद्ध लिपि प्रदान की जानी चाहिए।
5. **साधारण पाठ्यक्रम** - मानसिक रूप से दिव्यांग बच्चों के लिए साधारण पाठ्यक्रम होना चाहिए। ऐसे विद्यार्थियों को पाठ याद करने की अपेक्षा व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए। उन्हें हस्त-कौशल सिखाए जाने चाहिए ताकि वह जीवन में आत्म-निर्भर बन सकें।
6. **खेलों में भाग लेना ;** बच्चों की शारीरिक तथा मानसिक योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें खेलों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

7. **सहगामी क्रियाओं में भाग लेना** -छात्रों को सहगामी क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उन्हें यात्राओं व भ्रमणों पर भी ले जाया जाना चाहिए।
8. **शिक्षण-सामग्री ;**ज्मंबीपदह ।पकेद्धरू पाठ्यक्रम शिक्षण-सामग्री के अधिगम प्रयोग पर आधारित होना चाहिए। शिक्षण-सामग्री की सहायता से पाठ को प्रभावी व रूचिकर बनाया जा सकता है।

जॉनसन **(1993)** ने पाठ्यक्रम में परिवर्तन के लिए कुछ सुझाव दिए हैं। उनका विचार है कि मौखिक शिक्षण की अपेक्षा कंप्यूटर का प्रयोग शिक्षण में अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकता है। पाठ्यक्रम सरल होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तकें व पठन सामग्री ब्रेल लिपि में तैयार की जानी चाहिए तथा विद्यार्थियों को आत्म-निर्भर बनाने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।

इकाई 8 : सह - शिक्षण पद्धतियां (Co-Teaching Methods)

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 सह - शिक्षण

8.4 सह – शिक्षण की पद्धतियां

8.4.1 एक शिक्षण एक सहायक

8.4.2 स्टेशन – शिक्षण

8.4.3 समानांतर शिक्षण

8.4.4 वैकल्पिक शिक्षण

8.4.5 समूह शिक्षण

8.5 विभेदित अनुदेश

8.6 सह कर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश

8.6.1 सहकर्मी – मध्यस्थिकृत रणनीतियों के लाभ

8.6.2 सहकर्मी – मध्यस्थीकृत हस्तक्षेप के प्रकार

8.6.3 सहकर्मी – मध्यस्थीकृत समर्थन के दृष्टिकोण

8.7 अनुदेशों के लिए आई सी टी

8.8 सारांश

8.9 शब्दावली

8.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.11 संदर्भ सूची

8.12 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

इतिहास हमें बताता है कि दिव्यांग बच्चों की शिक्षा segregation से integration और फिर समावेशीकरण की ओर बढ़ी है। समावेशी शिक्षा वर्तमान की आवश्यकता है, जिसमें सभी वर्गों के बच्चों को एक साथ एक ही छत के नीचे शिक्षा दी जाती है। शिक्षक के लिए दिव्यांग बच्चों के साथ सामान्य बच्चों को शिक्षा देना बहुत बड़ी चुनौती है। अब जब सभी बच्चों को साथ लेकर चलना है तो ऐसे बच्चों के लिए शिक्षण कार्य कैसे किया जाय? कौन सी विधियाँ प्रयोग की जाय? एक कक्षा में विभिन्न मानसिक बुद्धि वाले छात्र भी होते हैं। शिक्षक को इन छात्रों की शैक्षिक आवश्यकताओं की जानकारी तथा समावेशी शिक्षा के आधारभूत तथ्य तथा मूल्यों का ज्ञान होना आवश्यक है । प्रत्येक शिक्षक का यह दायित्व है कि छात्र के अधिगम के लिए नवाचारी विधियों का प्रयोग करे। प्रत्येक छात्र सीखने की क्षमता रखता है। अधिगम को अधिक मनोरंजक बनाने के लिए शिक्षक को अधिगम की स्थितियां उत्पन्न करनी पड़ती हैं।शिक्षक जब 50-60 बच्चों वाली कक्षा में शिक्षण कार्य करते हैं तो सभी बच्चों पर व्यक्तिगत ध्यान नहीं दे पाते हैं। इसके लिए उन्हें एक सहायक की आवश्यकता होती है, जो बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को व्यक्तिगत रूप से देखता है और अधिगम में आ रही कठिनाइयों को दूर करने का प्रयत्न करता है। इसलिए आज समावेशी शिक्षा में सह- शिक्षण को एक नवाचार के रूप में प्रयोग किया जा रहा है । इस इकाई में आप सह-शिक्षण की विभिन्न विधियाँ, विभेदित अनुदेशन, समूह शिक्षण तथा अनुदेशन में ICT का विस्तृत अध्ययन करेंगे ।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- सह-शिक्षण की संकल्पना को समझ सकेंगे।
- सह-शिक्षण की पद्धतियों का वर्णन कर सकेंगे।
- विभेदित अनुदेशन को समझ सकेंगे ।
- समूह शिक्षण को समझ सकेंगे ।
- अनुदेश में ICT के महत्त्व को समझ सकेंगे ।

8.3 सह-शिक्षण

सह-शिक्षण की सामान्य परिभाषा यह है कि जब दो एक सामान योग्यता वाले व्यक्ति जो एक ही क्षेत्र के विशेषज्ञ हो भी सकते हैं और नहीं भी हो सकते हैं, मिलकर विद्यार्थियों के एक बड़े समूह को अनुदेश देते हैं, सह-शिक्षण कहते हैं। सह शिक्षण में एक वरिष्ठ शिक्षक और एक सहायक शिक्षक, एक सामान्य शिक्षक और एक विशिष्ट शिक्षक की जोड़ी हो सकती है। वर्तमान में सह- शिक्षण का

सबसे बड़ा उदहारण समावेशी कक्षाओं में देखने को मिलता है ।जहाँ एक सामान्य और एक विशिष्ट शिक्षक एक कक्षा के प्रबंधन और अनुदेशन का उत्तरदायित्व सभालते हैं। इसमें दोनों ही शिक्षक कक्षा के अनुदेशन को सरल बना देते हैं। सह शिक्षण में एक शिक्षक अभ्यर्थी (Teacher Candidate)और दूसरा सहयोगी शिक्षक (Cooperating Teacher) होता है । ये दोनों ही शिक्षक पाठ की प्रभावशीलता को बढ़ा देते हैं। इससे छात्रों को सीखने में आसानी होती है। **फ्रेंड एंड कुक,2004- "दो या दो से अधिक शिक्षकों द्वारा, एक ही समय में विभिन्न विद्यार्थियों के समूह को अनुदेश देना सह-शिक्षण कहलाता है" । (Two or more teachres delivering instruction at the same time in the same physical space to a heterogeneous group of students. Friend&Cook,2004)**

हम जानते हैं कि विशिष्ट बच्चों को भी सभी के साथ बैठकर शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। दिव्यांग एक्ट (IDEA 2004) में स्पष्ट किया गया है कि दिव्यांग बच्चों को भी सामान्य कक्षा में शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। अतःइन छात्रों के लिए हमें सह-शिक्षण की आवश्यकता है क्योंकि कई शोधों से प्रमाणित हो चुका है कि विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के लिए सह-शिक्षण बहुत प्रभावशाली है। खासकर उन छात्रों के लिए जो अधिगम असमर्थ (learning disable) हैं।

सह-शिक्षण के लाभ

- विशिष्ट आवश्यकता वाले छात्रों को सामान्य छात्रों के साथ सामान्य शिक्षा दी जाती है।
- छात्रों को वैयक्तिक रूप से पढ़ाने का अवसर मिलता है।

- सह-शिक्षण से पूरी कक्षा को दिए गए अनुदेशन की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले छात्र भी अपने को सामान्य बच्चों के साथ अधिक जुड़ा हुआ महसूस करते हैं।
- शिक्षक भी एक दूसरे की निपुणता से सीखते हैं।

8.4 सह-शिक्षण के विभिन्न मॉडल :

सह-शिक्षण के कई मॉडल हैं। फ्रेन्ड एण्ड कुक (1996) ने सह शिक्षण के पांच मॉडलों की पहचान की है। इनका वर्णन निम्नांकित रूप से किया जा रहा है :

8.4.1 एक शिक्षक एक सहायक (One Teach One Assist)

यह सह शिक्षण की एक विधि है, जिसमें एक शिक्षक पढ़ाने की जिम्मेदारी लेता है और दूसरा छात्रों की आवश्यकतानुसार व्यक्तिगत रूप से उनकी सहायता करता है या उन्हें सामग्री वितरित करता है। इससे छात्र समय से जल्दी सीखते हैं और सामग्री वितरित होने से समय की भी बचत होती है। सहायक शिक्षक छात्रों के सभी व्यवहारों का अवलोकन बारीकी से करता है।

8.4.2 स्टेशन शिक्षण(Station Teaching)

इस मॉडल के अनुसार, दोनों शिक्षक पढाए जाने वाले पाठ और छात्रों को आपस में बाँट लेते हैं। दोनों ही शिक्षक अपने-अपने समूह के छात्रों को पढकर दूसरे समूह के छात्रों को भी पढते हैं। इस शिक्षण में कक्षा को कई शिक्षण केन्द्रों में बाँट लेते हैं। शिक्षा और विद्यार्थी शिक्षक मुख्य स्टेशन के रूप में कार्य करते हैं। जैसे- विज्ञान की कक्षा में तीन या अधिक स्टेशन बनाए जाते हैं और सभी में अलग-अलग प्रयोग कराए जाते हैं। प्रत्येक शिक्षक उनका मार्गदर्शन करता है। इससे छात्रों को छोटे-छोटे समूह में कार्य करके लाभ होता है। शिक्षक कम समय में ज्यादा सामग्री वितरित कर लेता है। अनुशासनहीनता की समस्या नहीं रहती क्योंकि प्रत्येक छात्र सक्रिय रहता है। इस मॉडल के अनुसार स्टेशन शिक्षक के रूप में अतिरिक्त व्यक्तियों का भी सहयोग लिया जा सकता है। जैसे अभिभावकों या समाज के किसी भी सदस्य का।

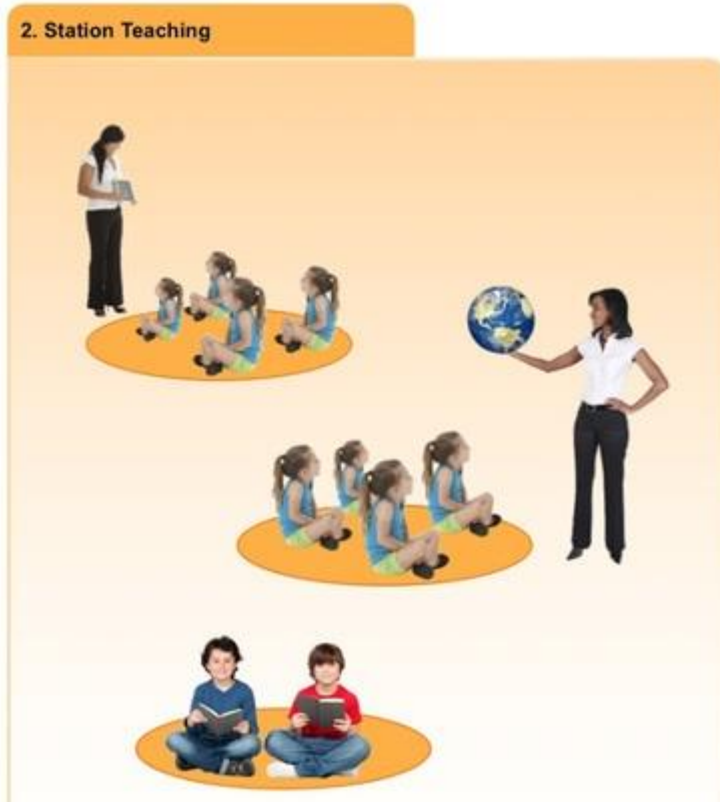

8.4.3 समानांतर शिक्षण (Parellel Teaching)

इसमें दोनों शिक्षक कक्षा को दो भागों में बाँट लेते है और एक ही विषयवस्तु को अपने-अपने तरीके से सिखाते हैं। जैसे:दोनों शिक्षक कक्षा को दो भिन्न भागों में बाँटकर एक ही गणित के प्रश्नों का समाधान बता सकते हैं।

8.4.4 वैकल्पिक शिक्षण (Alternate Teaching)

इसमें एक शिक्षक कक्षा के उन अधिकतम छात्रों को सभालता है, जिन्हें विशिष्ट ध्यान की आवश्यकता होती है। जबकि दूसरा शिक्षक कक्षा के अंदर या बाहर लघु समूहों के साथ कार्य करता है।

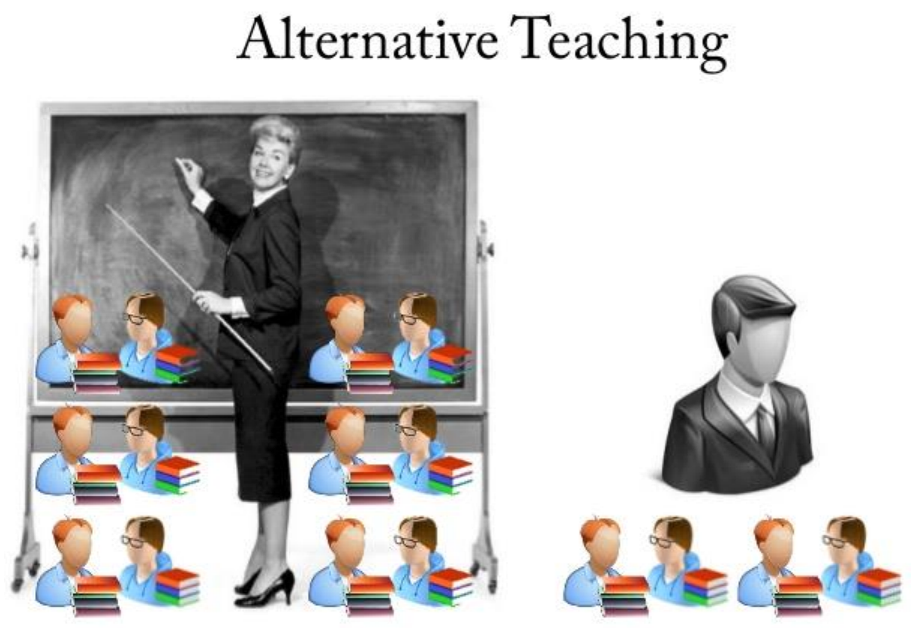

8.3.5 टीम शिक्षण (Team Teaching)

इसमें दोनों ही शिक्षक एक ही समय में एक ही विषयवस्तु को समझाते हैं। अमेरिका के हावर्ड विश्वविद्यालय ने सर्वप्रथम एक योजना जिसे Internship Plan का नाम दिया गया 1955 में लागू की गई। इसमें पांच छात्र अध्यापकों को एक टीम के रूप में मिलकर एक अनुभवी एवं प्रशिक्षित अध्यापक के नेतृत्व में किसी कक्षा में पढ़ाना होता था। टीम के क्षेत्र में ही एक और प्रसिद्ध नाम जे.लियाड ट्रम्प(J. Leyod Trump) का है जो माध्यमिक विद्यालय के स्टाफ का उपयोग अच्छी तरह कैसे हो, इससे सम्बंधित अनुसंधान आयोग के डायरेक्टर थे। अपने अनुसंधान प्रयत्नों के द्वारा इन्होंने टीम शिक्षण के विकास और क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। टीम शिक्षण एक टीम के द्वारा किया जाता है। इस टीम के सदस्य दो या दो से अधिक अध्यापक या कोई अन्य जैसे प्रयोगशाला सहायक, लिपिक, विषय-विशेषज्ञ, अनुसंधानकर्ता आदि भी हो सकते हैं।

Take the Pledge....
Make a Commitment
PEPSI

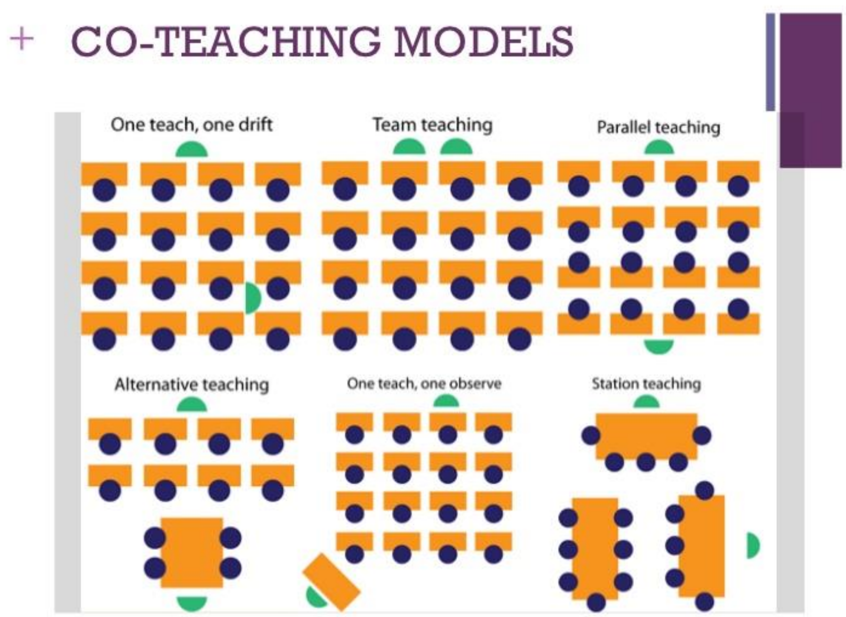
CO-TEACHING MODELS
One teach, one drift
Team teaching
Parallel teaching
Alternative teaching
One teach, one observe
Station teaching

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 1

1. सह शिक्षण की परिभाषा लिखिए।
2. सह शिक्षण के कोई दो लाभ लिखिए।
3. सह शिक्षण के कितने मॉडल हैं?
4. .... मॉडल में एक शिक्षक पढ़ाने की जिम्मेदारी लेता है और दूसरा छात्रों की आवश्यकतानुसार व्यक्तिगत रूप से उनकी सहायता करता है।

8.5 विभेदित अनुदेश (Differentiated Instruction)

कक्षा में प्रत्येक छात्र के सीखने का ढंग अलग-अलग होता है। गार्डनर ने अपने बहु बुद्धि सिद्धांत में आठ तरह की बुद्धि की पहचान की है। भाषागत, तार्किक, गणितीय, संगीतात्मक,देशिक, शारीरिक गतिसंवेदी, अंतरवैयक्तिक. अन्तःव्यक्ति और प्रकृतिवादी। इससे यह पता चलता है कि प्रत्येक छात्र का मस्तिष्क अलग-अलग तरीके से सोचता और सीखता है। गार्डनर का यह मानना ही कि छात्र अच्छा प्रदर्शन कर सकता है जब शिक्षक स्धिगम के विभिन्न तरीके अपनाता हो। छात्र की इन्हीं विभिन्नताओं को देखते हुए विभेदित अनुदेशन का प्रत्यय सामने आया है। एल्बर्ट आइंस्टीन के अनुसार- प्रत्येक व्यक्ति बुद्धिमान है, लेकिन यदि "आप एक मछली के लिए यह सोचो कि वह सीढ़ी पर चढ़ेगी तो यह मूर्खता होगी"। विभेदित अनुदेशन शिक्षण का एक तरीका है, जिससे शिक्षक छात्र की आवश्यकतानुसार प्रतिक्रिया करता है। छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षक विषयवस्तु (क्या पढ़ाना है?), प्रक्रिया (कैसे पढ़ाना है?) उत्पाद (छात्र सीखे हुए ज्ञान का प्रदर्शन कैसे करे?)। विभेदित अनुदेशन का तात्पर्य है कि आप छात्र की विभिन्नताओं का अवलोकन करके समझें और उसी के अनुसार योजनाएं बनाएं।

विभेदित अनुदेशन का एक उदहारण

श्रीमती वर्मा अपने विज्ञान के शिक्षण में अंतरिक्ष के बारे में पढ़ा रही है। परंपरागत शिक्षण में वह बच्चों को अंतरिक्ष पर एक छोटा सा निबंध लिखने को कहेगी। लेकिन विभेदित अनुदेशन में वह बच्चों से अंतरिक्ष से सम्बंधित किसी भी टॉपिक पर लिखने को कहती है जो छात्र की रूचि का हो। जैसे- चन्द्रमा, सूर्य, सौरमंडल,तारे आदि जो भी अंतरिक्ष से सम्बंधित हो। इसमें छात्र अपनी रूचि के टॉपिक पर लिखने के लिए अधिक क्रियाशील रहेगा और वह उस टॉपिक से सम्बंधित ज्यादा खोज करेगा।

एक सामान्य कक्षा में विभिन्न ढंग से सीखने वाले छात्र होते हैं। कोई छात्र पढ़कर व लिखकर जल्दी समझ जाते हैं, दूसरे छात्र वीडियो व ऑडियो द्वारा तथा अन्य छात्र विभिन्न गतिविधियों द्वारा सीखते हैं। **कैरोल. एन. तोमलिन्सन (Carol AnnTomlinson),** जिन्हें विभेदित अनुदेशन के

लिए ही जाना जाता है और जो इस क्षेत्र में कई कार्य व नवाचार कर चुकी हैं, वे कहती हैं कि शिक्षक निम्न चार क्षेत्रों में विभेदन कर सकता है :

विषयवस्तु (Content): छात्रों के लिए जो पाठ्यचर्या बनाई जाती है, वह राज्य के शैक्षिक मानकों के अनुसार बनाई जाती है। इस पाठ्यचर्या को कुछ बच्चे तो आसानी से समझ जाते हैं और अन्य बच्चे कम समझ पाते हैं। विषयवस्तु को छात्रों को आसानी से समझाने के लिए शिक्षक ब्लूम की टेक्सोनोमी के अनुसार विषयवस्तु का विभाजन कर देता है। ब्लूम की टेक्सोनोमी के छः स्तर हैं: ज्ञानात्मक, अवबोधन, अनुप्रयोग, विश्लेषण, मूल्यांकन तथा सृजनात्मक। जो छात्र विषयवस्तु समझ नहीं पाते हैं वे निम्न स्तर से अपना कार्य कर सके है। (ज्ञानात्मक तथा अवबोध से) जो बीच के स्तर के बच्चे हैं वे अनुप्रयोग तथा विश्लेषण के स्तर पर अपना कार्य पूरा कर सकते हैं और उच्च स्तर के छात्र मूल्यांकन व सृजनात्मक स्तर पर अपना कार्य कर सकते हैं। जैसे:

- शब्दावली से शब्दों का मिलान करना।
- गद्यांश को पढ़कर प्रश्नों का उत्तर देना।
- उस स्थिति पर चिंतन करना जो कहानी में एक किरदार के साथ घटी हो तथा उसके भिन्न परिणाम।
- कहानी के आधार पर लेखक की स्थिति की पहचान करना और उसे अपने शब्दों में लिखना।
- पाठ का सारांश प्रस्तुत करने के लिए पावर पॉइंट (power point) का सृजन करना।

प्रक्रिया(Process): विषय वस्तु में विभेदन के पश्चात शिक्षक यह देखता है कि किस प्रकार विषयवस्तु छात्रों तक पहुँचाई जाए। इसके लिए वह छात्रों के मध्य विभिन्न सामग्री उपलब्ध कराते हैं। जैसे- पाठ्यसामग्री, ऑडियो-वीडियो तथा अन्य सामग्री जो भी उस पाठ से सम्बंधित हो।इसके अतिरिक्त अधिक क्रियाशील छात्रों को ऑनलाइन कार्य करने के अवसर दिए जाते हैं।

उत्पाद (Product): पाठ के अंत में छात्र को यह प्रदर्शित करना पड़ता है कि उसने कितना सीखा?वह अपने सीखे हुए ज्ञान को परीक्षा, प्रोजेक्ट, रिपोर्ट या अन्य गतिविधियों द्वारा प्रदर्शित कर सकता है। शिक्षक छात्रों को पाठ से सम्बंधित सत्रीय कार्य दे सकता है।

अधिगम वातावरण (Learning Environment): अधिगम वातावरण को भौतिक और मनोवैज्ञानिक दोनों ही तत्व प्रभावित करते हैं। भौतिक चीजों में कक्षा में सभी चीजों की व्यवस्था। जैसे- सभी तरह का अच्छा फर्नीचर, कम्प्यूटर, स्मार्ट बोर्ड आदि। मनोवैज्ञानिक रूप से शिक्षक का व्यवहार।

- पठन समूह से कुछ छात्रों को चर्चा के लिए भेजना।
- कुछ बच्चों को व्यक्तिगत रूप से पढ़ने की स्वीकृति देना।

- शोधों द्वारा प्रमाणित हो चुका है कि विभेदित अनुदेशन उच्च योग्यता वाले छात्रों के साथ-साथ निम्न योग्यता वाले छात्रों के लिए भी प्रभावशाली है।
- जब छात्रों को सीखने के लिए अधिक विकल्प दिए जाएं तो वे और अधिक जिम्मेदारी के साथ सीखता है।
- छात्र सीखने में अधिक व्यस्त रहते हैं और कक्षा में अनुशासनहीनता की समस्या नहीं आती है।
- विभेदित अनुदेशन पाठ योजना बनाने के लिए महत्वपूर्ण है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न : भाग 2

1. विभेदित अनुदेशन के लिए .... को जाना जाता है।
2. गार्डनर ने अपने ....सिद्धांत में आठ तरह की बुद्धि की पहचान की है।
3. शिक्षक किन चार क्षेत्रों में विभेदन कर सकता है?
4. ब्लूम की टेक्सोनोमी के कितने स्तर हैं? नाम लिखिए।

8.6 सहकर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश (Peer Mediated Instruction)

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि साथियों की सहायता से अनुदेशन देना। सामान्य कक्षा- कक्ष में सभी प्रकार के छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं, उन छात्रों में जो विशेष आवश्यकता वाले होते हैं उन्हें शिक्षक द्वारा पढ़ायी गई विषयवस्तु ठीक प्रकार समझ में नहीं आती। ऐसे छात्रों को उन्हीं के साथियों द्वारा अनुदेश दिया जाता है, जिसे सहकर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश (Peer Mediated Instrution) कहते हैं। PMI समावेशी शिक्षा का एक दृष्टिकोण है, जिसमें विशिष्ट छात्रों को उनके ही साथी छात्रों द्वारा शैक्षिक, व्यावहारिक और सामाजिक अनुदेश दिया जाता है। अनुदेश की इस विधि में विशिष्ट छात्र विद्यालय की समस्त गतिविधियों में लाभान्वित होते हैं और इन गतिविधियों में उनकी भागीदारी बढ़ती है। अपने ही साथियों से सीखने में वे सुविधा महसूस करते हैं। PMI को प्राथमिक व माध्यमिक कक्षाओं में किसी भी अनुदेशन में प्रयुक्त किया जा सकता है।

PMI निम्नलिखित तीन प्रकार की होती है –

कक्षा विस्तृत सहकर्मी अनुशिक्षण (Classwide Peer Tutoring) – इसमें कक्षा को छोटे-छोटे विषमजातीय अधिगम समूहों में बाँटा जाता है। प्रत्येक समूह में एक से कम एक उच्च उपलब्धि वाला छात्र, एक मध्य उपलब्धि वाला छात्र तथा एक निम्न उपलब्धि वाला छात्र शामिल किया जाता है। समूह के प्रत्येक सदस्य को एक साथ कार्य करते हुए समस्या समाधान करने के अनेक अवसर दिए जाते हैं। इस प्रकार समूह का प्रत्येक सदस्य एक 'tutor' की तरह कार्य करता है। इस रणनीति का सबसे बड़ा लाभ यह है कि उच्च उपलब्धि वाला छात्र, निम्न उपलब्धि वाले छात्र को निरंतर सहायता करता है, जिससे निम्न उपलब्धि वाला छात्र भी उच्च स्तर तक पहुँचने की कोशिश करता है।

सहकर्मी सहायक अधिगम (Peer Assisted Learning) - साथियों द्वारा एक दूसरे की सहायता करना। वाइगोत्सकी(vygotsky), जो एक प्रसिद्ध रूसी मनोवैज्ञानिक थे, वे भी assistance learning पर विश्वास रखते थे। शोधों द्वारा सिद्ध हो गया है कि छात्र जब अन्य छात्रों की मदद लेता है तो वह अधिक अच्छी तरह से सीखता है। समावेशी कक्षा में तो यह अधिगम अधिक प्रभावशाली होता है। इससे छात्रों में सहयोग की भावना, स्वप्रबंधन तथा दूसरे छात्रों से अंतःक्रिया करने की क्षमता का विकास होता है। बड़ी कक्षा के बच्चे भी छोटी कक्षा के बच्चों को अनुदेश दे सकते हैं, जिससे नए बच्चो को विद्यालय में समायोजन करने में आसानी होती है।

दोपहर के भोजन का समूह (Lunch Bunches) - सभी छात्र दोपहर में भोजन के समय एक साथ ही भोजन करते हैं जिसे Lunch Bunches रणनीति कहा जाता है। भोजन के समय सभी प्रकारके बच्चों के मध्य एक विशेष अंतःक्रिया होती है, जिससे वे एक दूसरे की भावनाओं को समझते हैं।

8.7 अनुदेशों के लिए आइ सी टी (ICT For Instructions)

ICT का प्रयोग वर्तमान में सभी जगह पर किया जाने लगा है। तकनीकी क्रांति के इस युग में शैक्षिक तंत्र भी ICT से अछूता नहीं है। आज जब हम शिक्षा में ICT के प्रयोग की बात करते हैं तो हम अपने आपको तकनीके से अलग नहीं पाते हैं। क्योंकि तकनीकी शिक्षा आज की आवश्यकता बन चुकी है। सेलेमंका सम्मलेन हो या कोई भी शिक्षा नीति सभी में समान शिक्षा देने की बात कही गई है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम में भी समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने की बात कही गई है। जब समान शिक्षा की बात कही जा रही है तो सभी वर्गों के बच्चों को समान शिक्षा मिलनी चाहिए। सभी वर्गों को एक कक्षा में समान शिक्षा देना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है। समावेशी कक्षा में ICT के प्रयोग के लिए अधिक रणनीतियाँ बनाने की आवश्यकता है । क्योंकि अब ICT का प्रयोग सामान्य छात्रों के साथ-साथ विशिष्ट छात्र भी करेंगे। पूर्व में हम इस बात को स्पष्ट कर चुके हैं कि छात्र को अधिगम के लिए जितने अधिक अवसर उपलब्ध कराए जाएंगे वे उतना अच्छा सीखेंगे। अतः ICT का प्रयोग सामान्य छात्रों के साथ-साथ उन छात्रों के लिए भी लाभदायक है जो किसी विषय में कमजोर है, दिव्यांग है तथा किसी कारन से शिक्षा से वंचित है। नीचे दिए गए रेखाचित्र से स्पष्ट हो रहा है कि विभिन्न गतिविधियों के लिए समावेशी कक्षाओं में ICT के प्रयोग का कितना महत्त्व है :

विद्यालय में छात्रों द्वारा ICT का प्रयोग	
ICT एक कंप्यूटर आधारित तकनीकी है।	

शैक्षिक उपकरण के रूप में-जिसमें इन्टरनेट के द्वारा कई सूचनाएं खोजी जा सकती हैं |PPT बनाई जा सकती है| आदि-आदि

अधिगम के वैकल्पिक उपकरण के रूप में-विज्ञान और गणित जैसे कठिन विषयों का अभ्यास किया जा सकता है |

प्रतिपूरक उपकरण के रूप में-लिखने संबंधी गतिविधियां, किताबें ढूँढने, वर्तनी जाँचने, चित्र बनाने के लिए तथा अन्य महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए |

ICT के प्रयोग ने शिक्षा के सभी चरों पर महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है, जिसे निम्न सारणी से स्पष्ट किया जा सकता है।

परिवर्तन भूमिका	पारंपरिक मॉडल	उभरता मॉडल
शिक्षक की भूमिका	• विशेषज्ञ • तथ्यों को दोहराना • सीखी हुई	• सहयोगी • मार्गदर्शक • स्रोत व्यक्ति

सीखना	शिक्षक पर केंद्रित	विद्यार्थी पर केंद्रित
सफलता का मानदंड	पूर्ण क्षमता का प्रदर्शन करना	प्रभावी और व्यक्तिगत क्षमताओं का प्रदर्शन करना
ज्ञान का प्रकार	पहले से विद्यमान ज्ञान को रटना	ज्ञान का सृजन करना
निर्धारण	परीक्षा पर आधारित	छात्र को सौंपे गए कार्यों के निष्पादन पर आधारित
समूहन करना	सजातीय	विजातीय
छात्र की गतिविधि	व्यक्तिगत कार्य	सामूहिक कार्य

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न: भाग 3

1. सहकर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश किसे कहते हैं?
2. सहकर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश कितने प्रकार का होता है?

8.8 सारांश

समावेशी शिक्षा में सह शिक्षण एक महत्वपूर्ण विधि है। सह-शिक्षण टीम में साधारणत: एक सामान्य और एक विशेष शिक्षक होता है जो सभी विद्यार्थियों को सामान्य शिक्षा पाठ्यक्रम पढ़ाते हैं और साथ ही साथ विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को आई ई पी कार्यान्वित करना सिखाते हैं। सह-शिक्षण की पांच पद्धतियां होती हैं, जो कि इसमें एक शिक्षक – एक सहायक, स्टेशन शिक्षण, समानांतर शिक्षण, वैकल्पिक शिक्षण तथा टीम शिक्षण शामिल हैं, जो कक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु एकल या संयुक्त रूप से प्रयुक्त किया जा सकता है।

विभेदित अनुदेशन शिक्षण का एक तरीका है, जिससे शिक्षक छात्र की आवश्यकतानुसार प्रतिक्रिया करता है। छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षक विषयवस्तु (क्या पढ़ाना है?), प्रक्रिया (कैसे पढ़ाना है?) उत्पाद (छात्र सीखे हुए ज्ञान का प्रदर्शन कैसे करे?)। विभेदित अनुदेशन का तात्पर्य है कि आप छात्र की विभिन्नताओं का अवलोकन करके समझें और उसी के अनुसार योजनाएं बनाएं। सामान्य कक्षा- कक्ष में सभी प्रकार के छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं, उन छात्रों में जो विशेष आवश्यकता वाले होते हैं उन्हें शिक्षक द्वारा पढ़ायी गई विषयवस्तु ठीक प्रकार समझ में नहीं आती। ऐसे छात्रों को उन्हीं के साथियों द्वारा अनुदेश दिया जाता है, जिसे सहकर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश (Peer Mediated Instrution) कहते हैं। PMI समावेशी शिक्षा का एक दृष्टिकोण है, जिसमें विशिष्ट छात्रों

को उनके ही साथी छात्रों द्वारा शैक्षिक, व्यावहारिक और सामाजिक अनुदेश दिया जाता है। अनुदेश की इस विधि में विशिष्ट छात्र विद्यालय की समस्त गतिविधियों में लाभान्वित होते हैं और इन गतिविधियों में उनकी भागीदारी बढ़ती है। अपने ही साथियों से सीखने में वे सुविधा महसूस करते हैं। PMI को प्राथमिक व माध्यमिक कक्षाओं में किसी भी अनुदेशन में प्रयुक्त किया जा सकता है।

8.9 शब्दावली

सह-शिक्षण: जब दो एक सामान योग्यता वाले व्यक्ति जो एक ही क्षेत्र के विशेषज्ञ हो भी सकते हैं और नहीं भी हो सकते हैं, मिलकर विद्यार्थियों के एक बड़े समूह को अनुदेश देते हैं, सह-शिक्षण कहते हैं।

कैरोल. एन. तोमलिन्सन: जिन्हें विभेदित अनुदेशन के लिए ही जाना जाता है और जो इस क्षेत्र में कई कार्य व नवाचार कर चुकी हैं।

PMI: समावेशी शिक्षा का एक दृष्टिकोण है, जिसमें विशिष्ट छात्रों को उनके ही साथी छात्रों द्वारा शैक्षिक, व्यावहारिक और सामाजिक अनुदेश दिया जाता है।

8.10 स्वमूल्यंकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 1:

1. फ्रेंड एंड कुक,2004- "दो या दो से अधिक शिक्षकों द्वारा, एक ही समय में विभिन्न विद्यार्थियों के समूह को अनुदेश देना सह-शिक्षण कहलाता है"।
2. सह शिक्षण के दो लाभ :
    - विशिष्ट आवश्यकता वाले छात्रों को सामान्य छात्रों के साथ सामान्य शिक्षा दी जाती है।
    - छात्रों को वैयक्तिक रूप से पढ़ाने का अवसर मिलता है।
3. पांच
4. एक शिक्षक एक सहायक

भाग 2:

1. कैरोल. एन. तोमलिन्सन (Carol AnnTomlinson
2. बहु बुद्धि
3. शिक्षक निम्न चार क्षेत्रों में विभेदन कर सकता है:
   विषयवस्तु (Content), प्रक्रिया(Process) ,उत्पाद (Product), अधिगम वातावरण
4. ब्लूम की टेक्सोनोमी के छः स्तर हैं: ज्ञानात्मक, अवबोधन, अनुप्रयोग, विश्लेषण, मूल्यांकन तथा सृजनात्मक।

भाग 3:

1. सामान्य कक्षा- कक्ष में सभी प्रकार के छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं, उन छात्रों में जो विशेष आवश्यकता वाले होते हैं उन्हें शिक्षक द्वारा पढ़ायी गई विषयवस्तु ठीक प्रकार समझ में नहीं आती। ऐसे छात्रों को उन्हीं के साथियों द्वारा अनुदेश दिया जाता है, जिसे सहकर्मी मध्यस्थीकृत अनुदेश (Peer Mediated Instrution) कहते हैं।
5. तीन प्रकार का।

8.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- हार्टनेट, जॉनी; वीड, रहिला; मेकक्कॉय, एन; थैस, डेब; निकेन्स, निकोल (2013)."सह-शिक्षण: विद्यार्थी शिक्षण के दौरान एक नयी साझेदारी (पीडीएफ). एस आर ए टी ई पत्रिका. 23(1) : 1-12.

- चेरियन, फिन्नी (1 जनवरी 2007). " शिक्षण के लिए सीखना – शिक्षक अभ्यार्थि उत्तरदायी मेंटारशिप के संबंधीय, वैचारिक, प्रासंगिक प्रभावों को प्रतिनिधित्व करते हैं" केनडियन पत्रिका ऑफ एज्युकेशन/रेवेन्यू केनेडियनी डी एल एज्युकेशन. 30(1) :25-46,डीओईई : 10.2307/20466624.

- फ्रेंड, एम.; कुक, एल.; हर्ली-चेम्बरलीयन, डी.;शामबर्जर, सी.(2010). "सह-शिक्षण: विशिष्ठ शिक्षा में सहयोग की जटिलता का एक उदाहरण" शैक्षिक एवं मानसिक परामर्श की पत्रिका. 20(1):9-27.

- डॉ.रिचर्ड विल्ला, प्रभावी सह शिक्षण की रणनीतियां(2013)

- फ्रेंड, एम. एवं कुक, एल. (1996 ए). विचार विमर्श – पाठशाला पेशेवरों के लिए सहयोगी कौशलताएं. व्हाइट प्लेइनस : लॉन्गमान.

- फ्रेंड, एम. एवं कुक, एल. (1996 बी). का प्रभाव 2:– सह शिक्षण के माध्यम से अंतर का निर्माण करना [वीडियोटेप]. (फोरम ऑफ एज्युकेशन से प्राप्त, स्मित रिसर्च सेंटर, सूट 103, इंडियाना यूनिवर्सिटी/ऑन साइट, ब्लूमिंगटन, इन 47405-1006)

- वाल्श, जे.जे. एवं स्नाइडर, डी. (1993, अप्रैल). सहयोगी शिक्षण : सभी विद्यार्थियों के लिए एक प्रभावी मॉडल ई डी 361 930.– असाधारण बच्चों के परिषद के वार्षिक सम्मेलन में प्रस्तुत लेख, सान एनटोनियो, टी एक्स. (ई आर आई सी डॉक्यूमेंट रीप्रोडक्शन सर्विस संख्या 361 930)

- टॉमलिन्सन, सी.ए. (अगस्त, 2000), प्राथमिक एवं पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर शोधन गृह. ई आर आई सी डायजेस्ट. ई आर आई सी क्लियरिंग हॉउस ऑन एलिमेंट्री एवं अर्ली चाइल्डहुड एज्युकेशन.

8.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सह शिक्षण क्या है? इसके विभिन्न मॉडलों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. विभेदित अनुदेशन को उदहारण सहित विस्तार से समझाइये।
3.

इकाई 9- समावेशी शिक्षा के हितधारक एवं समावेशन में समुदाय की भूमिका (Stakeholders of Inclusive Education and Community involvement in inclusion)

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 बच्चों पर परिवार का प्रभाव
9.4 पैतृक मनोवृत्तियां
9.5 माता पिता तथा समुदाय की भागीदारी की आवश्यकता
9.6 सुरक्षा, सकारात्मक मनोवृत्ति तथा रूचि की आवश्यकता
9.7 समुदाय एवं परिवार की भूमिका
9.8 गैर सरकारी एजेंसियों की भूमिका
9.9 राष्ट्रीय एजेंसियों की भूमिका
9.10 प्रभावी समावेश के लिए आधारभूत घटक
9.11 सारांश
9.12 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

भारत जब ब्रिटिश साम्राज्य का अंग बना था। शिक्षा के आयातित स्वरूप के कारण आज भी हमारे देश में उपांत समूह के सामाजिक एकीकरण के बारे में प्रश्न उठाए जाते हैं यथा समाज के निम्न सामाजिक आर्थिक स्तरों से आने वाले नि:शक्त व्यक्ति। स्वतंत्रता पूर्व काल के बारे में प्रकाशित सामग्री के अनुसार, भातर के स्वतंत्र होने तक सरकार द्वारा नि:शक्तों के लिए सेवाओं से संबंधित कोई कार्रवाई 'नहीं' की गई थी। उससे पहले जो भी सेवा थी वह स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा उपलब्ध कराई जाती थी। अनुसूचित वर्गों , अन्य पिछडे वर्गों, मादक द्रव्यों के व्यसनियों,कैन्सर के रोगियों, कोढ ग्रस्त लोगों, महिला तथा शिशु कल्याण और नि:शक्तों के कल्याण के लिए सेवाएं उपलब्ध कराने का उत्तरदायित्व कल्याण मंत्रालय को सौंपा गया था।

संविधान की प्रस्तावना के अनुसार यह कहा गया है कि लोगों की शिक्षा में सुधार करना ताकि वे हमारे संविधान में समाविष्ट सिद्धान्तों तथा आदर्शों को समझ सकें, और उन्हें वास्तविक जीवन में उनका प्रयोग करने का प्रशिक्षण देना। इस देश के नागरिकों को शिक्षा की सुविधाएं देना और जनता के सभी वर्गों को सामाजिक उत्थान के समान अवसर उपलब्ध करना। 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए अनिवार्य तथा नि:शुल्क शिक्षा एक निर्देशक सिद्धांत बनाया गया है। संविधान का अनुच्छेद 41 निर्देश देता है कि राज्य संविधान के लागू होनेसे 10 वर्ष की अवधि के भीतर अर्थात् 1960 तक सभी बच्चों को नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का प्रयास करेंगा, जब तक वे 14 वर्ष की आयु के न हो जाए।

माता-पिता बच्चे के सामाजिक संजाल का सबसे महत्वपूर्ण अंग होते हैं। माता पिता बच्चे के पहले परिवेश-घर-के सदस्य होते हैं,और आरंभिक विकासात्मक वर्षों के दौरान अत्यंत महत्वपूर्ण व्यक्ति होते हैं। पैतृक मनोवृत्ति इस बात को प्रभावित करती है कि माता पिता अपने बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं और फिर बच्चों के साथ उनका व्यवहार उनके प्रति बच्चों की मनोवृत्ति को और बच्चों के व्यवहार को प्रभावित करता है। जब परिवार में कोई विशेष बच्चा पैदा होता है तो माता पिता को आघात लगता है। उनकी स्थिति को नियति समझना, अपने बच्चे की देखभाल के लिए माता पिता को जो व्यवस्थाएँ करनी पडती हैं उनसे पैदा होने वाली कुंठाएं, और स्थिति से निपटने में अकुशलता की भावना इन सब का बच्चे के सामाजिक समायोजन पर प्रभाव पडता है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद आप :

- नि:शक्तता वाले बच्चे को बढिया जीवन जीने में मदद कर सकेंगे।

- यह दर्शा कर कि बच्चा पहले है और नि:शक्तता बाद में, नि:शक्तता बाद में, नि:शक्त बच्चों के प्रति घिसी-पिटी सार्वजनिक प्रतिक्रियाओं से छुटकारा पा सक्रेंगें।

- नि:शक्तता वाले लोगों के पुनर्वास में और उन्हें मुख्यधारा में शामिल करने में परिवार तथा समुदाय के महत्व को समझ सकेगे।

9.3 बच्चों पर परिवार का प्रभाव

विशेष बच्चों पर और उनके विकास पर परिवार का प्रभाव कितना व्यापक होता है, इसका सही अंदाजा तब तक नहीं लगाया जा सकता जब तक यह न समझ लिया जाए कि परिवार के सदस्य बच्चे को क्या देते हैं।

सारणी । - विशेष बच्चों के विकास में परिवार का योगदान

एक स्थिर समूह का सदस्य होने से सुरक्षा की भावना ।
जिन लोगों पर बच्चे अपनी आवश्यकताओं के लिए निर्भर कर सकते हैं – भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक
कुशलताऍं सीखने में पथप्रदर्शन तथा सहायता चलने की, बोलने की तथा सामाजिक।
विद्यालय में तथा सामाजिक जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए उनकी योग्यताओं को प्रेरित करना।
उनकी रूचि तथा मनोवृत्ति के अनुरूप आकांक्षाएूं निर्धारित करने में उनकीमदद करना।
जब तक अच्चा घर से बाहर साथी ढूँढने के योग्य न हो जाए तब तक या जब बाहर के साथी उपलब्ध न हों उस समय संगति देना।

9.4 पैतृक मनोवृत्तियां

पैतृक मनोवृत्तियां इस बात को प्रभावित करती हैं कि माता पिता अपने बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं और फिर बच्चों के साथ उनका उनके प्रति बच्चों की मनोवृत्ति को और बच्चों के व्यवहार को प्रभावित करता है| कुछ विशिष्ट पैतृक मनोवृत्तियां निम्नलिखित हैं-

अतिरक्षण :- पैतृक अतिरक्षण में माता पिता द्वारा बच्चे की अधिक देखभाल तथा अधिक नियंत्रण शामिल है। इससे बच्चों में अति निर्भरता, केवल माता पिता पर ही नहीं बल्कि सभी लोगों पर निर्भरता, आत्म विश्वास की कमी और कुंठाओं का विकास होता है।

इच्छापालन :- माता पिता का बच्चों को अपनी इच्छानुसार चाहे जो करने देना और कोई रोक-टोक न करना। इससे बच्चा स्वार्थी और बहुत मांग करने वाला बन जाता है। वह दूसरों से सतत् ध्यान और सेवा की कामना करता है। ऐसे व्यवहार के फलस्वरूप घर में तथा बाहर उचित सामाजिक समायोजन नहीं हो पाते।

अस्वीकृति :- अस्वीकृति को बच्चे के कल्याण की परवाह न करके या बच्चे से बहुत अधिक मांग करके व्यक्त किया जा सकता है। इससे रोष, असहायता की भावना, कुंठा, घबराहट वाला व्यवहार

और दूसरों के प्रति, विशेषत: अपने से छोटे तथा कमजोर बच्चों के प्रति, शत्रुता का भाव पैदा होता है।

स्वीकृति :- पैतृक स्वीकृति के अभिलक्षण हैं बच्चे में गहरी रूचि और उसके लिए घना प्यार। स्वीकारी माता पिता बच्चे की योग्यताओं के विकास के लिए व्यवस्था करता है और बच्चे की रूचियों का ध्यान रखता है। स्वीकृत बच्चा भावनात्मक रूप से स्थिर, आश्वस्त तथा प्रसन्न होता है।

पक्षपात :- अनेक माता पिता में अपने सामान्य बच्चों की अपेक्षा विशेष बच्चों पर अधिक कृपा करने की प्रवृत्ति होती है। ऐसे कृपापात्र बच्चे अपने माता पिता का लाभ उठाते हैं, उन पर तथा घर पर हावी रहते हैं और कोई लिहाज तथा सम्मान नहीं दर्शाते। वे हर अधिकार की अवज्ञा करना सीख जाते हैं और आक्रमक बन जाते हैं ।

पैतृक आकांक्षएँ :- पैतृक आकांक्षाएँ, उनकी अपनी निष्फल आकांक्षाओं के प्रभाव के कारण ,बहुत ऊँची होती है। जब बच्चे माता पिता की आकांक्षाओं को पूरा नहीं कर पाते तो उनमें असंतोष की भावना पैदा हो जाती है। उनमें कुढन आ जाती है और एक प्रकार की बैबसी की भावना बन जाती है।

9.5 माता पिता तथा समुदाय की भागीदारी की आवश्यकता

किसी विशेष बच्चे का वास और या पुनर्वास उसके परिवार से शुरू होना चाहिए। माता पिता को इस योग्य होना चाहिए कि बच्चे को उसके पूर्ण वास और या पुनर्वास के लिए तैयार करने में अपनी सहायता की भूमिका को समझें कुछ विशेष बच्चों को, अपनी स्थिति की गंभीरता के कारण, विद्यालय या महाविद्यालय में हर समय विशेष मदद की जरूरत होती है किंतु कुछ विशेष बच्चें को विशेष सहायता केवल थोडे समय के लिए चाहिए। अत: यह अनिवार्य है कि विशेष बच्चे का हर माता पिता शुरू से ही स्वयं को बच्चे की शिक्षा के साथ जोडे। बच्चे को समुदाय का एक अभिन्न अंग बनना है। जब तक समाज बच्चे को उसके गुणों तथा कमजोरियों के साथ स्वीकार नहीं करेगा, तब तक पूर्ण पुनर्वास संभव नहीं होगा। विशेष बच्चों की शिक्षा का अंतिम उद्देश्य यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि बच्चा समाज का एक उत्तरदायी, स्वतंत्र सदस्य बन सके।

9.6 सुरक्षा, सकारात्मक मनोवृत्ति तथा रूचि की आवश्यकता

विशेष बच्चों की पुनर्वास प्रक्रिया में परिवारसबसे पहली अनौपचारिक एजेंसी होता है। माता पिता को चाहिए के बच्चे को सुरक्षा की एक सकारात्मक भावना दें। बच्चे को यह महसूस कराया जाय कि उसका परिवार उसे प्यार करता है और चाहता है। बच्चे को अपनी नि:शक्तता के बारे में भय तथा उद्दंडता से मुक्त होना चाहिए। बाधा व बारे में गोपनीयता या अनिच्छा की कोई भावना नहीं होनी चाहिए।

माता पिता को बच्चे के विकास के प्रति आशावादी दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया जाय। विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चे के प्रति सकारात्मक मनावृत्ति होनी चाहिए ।माता पिता को न तो अति अनुग्रही होना चाहिए और न ही कठोर अनुशासनवादी। उदाहरणत: माता पिता अपने विषेश बच्चे पर अतिरिक्त कृपा कर सकते हैं, उसके कर्तव्यों से उसे छूट दे सकते हैं। यह कुप्रशिक्षण है और उसके साथियों से उसकी असमानताओं को उजागर करेगा। विशेष अच्चे को अधिक लाड और दुलार न करना कठिन होता है। किन्तु बच्चे और उसके परिवार के लिए जीवन अधिक सुखद होगा यदि माता पिता उसके साथ उतने सामान्य बच्चे की तरह व्यवहार करें जितना वस्तुत: वह हो सकता है। उसे समझने दें कि उसकी भी जिम्मेदारियां हैं, उसे अपनी वस्तुओं की, अपनी पुस्तकों तथा कपडों आदि की देखभाल करनी है। बच्चा अपनी रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करना जितनी जल्दी सीख लेगा, अपने बाद के जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वह उतना ही अधिक सक्षम हो जायेगा।

9.7 समुदाय एवं परिवार की भूमिका

शैक्षिक कार्यक्रम में माता पिता के उत्तरदायित्व

1. व्यक्ति सापेक्ष शिक्षा बैठक कार्यक्रमों (आईईपी) के सदस्यों के रूप में भाग लें।

2.बच्चे के लिए आईपी लक्ष्य तथा उद्देश्य निर्धारित करने के लिए विद्यालय तथा अन्य व्यावसायियों के साथ सहयोग करें।

3. आईईपी लच्यों तथा उद्देश्यों के कार्यान्वयन में सहायता के लिए उत्तरदायित्व स्वीकार करें।

4. उपलब्ध कराई जा रही सेवाओं तथा अनुदेशों के बारे में प्रतिसूचना तथा सुझाव उपलब्ध कराएँ।

5. बच्चे को अपनी शैक्षिक आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए घरेलू परिवेश में प्रशिक्षित करें।

6. पैतृक शिक्षा कार्यक्रमों के लिए सुझाव दें जो विशेष बच्चों की आवश्यकताएँ पूरी करने में माता पिता की सहायता के लिए बनाए जाते हैं।

अभिभावक – अध्यापक बैठकें

चर्चा किए जाने वाले मुद्दे हैं :

माता-पिता की आवश्यकताओं को जानना।

बच्चे से तथा विद्यालय से माता पिता की प्रत्याशाओं को जानना।

मात पिता को बच्चे की दशा की जानकारी देना-कारण तथा पूर्वानुमान और उसके प्रभाव।

माता पिता को उनके बच्चे के विकास अभी- लक्षणों की जानकारी देना।

उन्हें यथार्थ आशाएँ लगाने में मदद करना।

उन्हें बच्चे के प्रति अपनी भूमिका तथा जिम्मेदारी की जानकारी देना।

उन्हें विद्यालय के कार्यक्रमों में शामिल करना।

अभिभावक :- अध्यापक संस्था को एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था बनना है। नि:शक्त तथा गैर-नि:शक्त दोनों बच्चों के माता पिता विशेष बच्चों के प्रति जनता की मनोवृत्ति को बदलने के लिए एजेंट बन सकते हैं।

समुदाय का योगदान :- बाल कार्यक्रमों में भागीदारी, अभिभावक संगठनों, मत तथा सार्वजनिक नीतियों के माध्यम से, परिवार के समर्थन द्वारा , व्यावसायिक सेवाओं का उपयोग करके, माता पिता को वित्तीय सहायता देकर समुदाय की भागीदारी को बढाया जा सकता है। समुदाय से सामाजिक समर्थन बच्चे तथा उसके माता पिता को भावनात्मक समर्थन देता है और उनमें सामान्यता की भावना को प्रोत्साहित करता है। समुदाय विभिन्न रूपों में योगदान करता है यथा मन की बात कहनेके लिए एक मित्र, राहत के लिए मदद देने वाला एक पडोसी और एक औपचारिक संस्थागत समर्थन। स्वैच्छिक संगठन यथा रोटरी क्लब, लायंस क्लब, रेड क्रास, निजी क्षेत्रों से शुभचिंतक, सरकारी उपक्रम विशेष आवश्यकताओं वाले व्यक्तियों को कल्याण के लिए कार्यक्रमों को समर्थन देते हैं।

समुदाय की भूमिका

विशेष विद्यालयों की स्थापना।

विशेष बच्चे की शिक्षा को समर्थन।

निर्धन परिवारों के विशेष बच्चों को कपडों तथा भोजन का वितरण।

इन बच्चों के लिए मनोरंजन की गतिविधियों का आयोजन।

नि:शक्तता वाले सुयोग्य छात्रों को छात्रवृत्तियां देना।

छटाई तथा पहचान शिविरों के आयोजन में मदद करना।

जनता को जानकारी देने के कार्यक्रम आयोजित करना।

विशेष विद्यालयों में स्वयंसेवकों के रूप में काम करना।

व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू करना और अशसक्ता वाले व्यक्तियों को रोजमर्रा के अवसर उपलब्ध कराना।

माता पिता तथा समुदाय की सही मनोवृति और विशेष बच्चे के जीवन में भागीदारी के साथ बच्चे का सामाजिक भावनात्मक परिवेश उसके प्रशिक्षण तथा अन्य हस्तक्षेपों के लिए सहायक होगा और उसका इष्टतम विकास हो सकेगा।

9.8 गैर सरकारी एजेंसियों की भूमिका

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 1991 के अनुसार, भारत में नि:शक्तों की संख्या 206 लाख है। जिनमें से अधिकांश 80 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र रहते हैं – दृष्टि नि:शक्त 40 लाख, श्रवण विकलांगता 32 लाख, संप्रेषण सम्बन्धी विकलांगता 45 लाख और चालन नि:शक्त 89 लाख। गैर सरकारी संगठन समर्पित लोगों का एक दल होता है जो अपने काम करने के ढंग में लचीले होते हैं और नई विधियों की खोज करने तथा अभिनव बातें पैदा करने के लिए अत्यंत उपयुक्त होते हैं। वे एक या अधिक नि:शक्तताओं के बारे में विविध संवाएं उपलब्ध कराते हैं, जो लिंग और या आयु पर आधारित हो सकती है। अनुमान है कि इस समय नि:शक्तता के क्षेत्र में 8000 गैर सरकारी संगठन काम कर रहे हैं।उनमें से 6000 से अधिक गैर सरकारी संगठन भारत के केवल9 राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में हैं। गत वर्षों में उनकी जटिलता तथा सेवाओं के स्वरूप में काफी वृद्धि हुई है।

गैर सरकारी संगठन मोटे तौर पर तीन प्रकार के होते हैं। सामाजिक काय्रकताओं,नि:शक्त लोगों या उनके माता पिता/संबंधियों द्वारा स्थापित सेवा संगठन तथा संस्थाएँ। ये अधिकतर ग्राहक केंद्रित क्रिया कलाप तथा कार्यक्रम चलाते हैं। दूसरे प्रकार के संगठन प्रभावक समूह के रूप में काम करने वाली समर्थक एजेंसियॉ हैं। नि:शक्त व्यक्ति इन एजेंसियों में आगे रहते हैं क्योंकि वे अपनी समस्याओं को सब से अच्छी तरह समझते हैं। वे सामाजिक कार्यकर्ताओं तथा मीडिया के लोगों के साथ मिलकर काम करते हैं। तीसरे प्रकार के गैर सरकारी संगठन अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियां हैं। ये एजेंसियां भारतीय भागीदारों को निधि तथा निपुण पथप्रदर्शन उपलब्ध करा के उनकी मदद से अपने विशिष्ट मिशन पूरे करती हैं।

स्वैच्छिक क्षेत्र में गैर सरकारी संगठन शिक्षा, प्रशिक्षण, पुनर्वास तथा मुख्य धारा में शामिल करने के लिए नई तथा अभिनव रणनीतियों का विकास करने में, सेवा वितरण कार्यक्रम चलानेमें, क्षमताओं का निर्माण करने में,नि:शक्त समूहों के सशक्तीकरण में और निर्दलीय राजनीतिक सक्रियतावाद में लगे हुए हैं।

किसी कल्याणकारी राज्य में सरकार तथा गैर सरकारी संगठन एक दूसरे के साथ अटूट रूप से जुडे होते हैं। नि:शक्तता क्षेत्र की यथेष्ट वृद्धि तथा विकास के लिए, एक मजबूत नींव रखने हेतु,सरकार

तथा गैर सरकारी संगठनों के बीच संबंध बहुत महत्व रखता है। गैर सरकारी संगठनों के साथ सहयोग के लाभ स्पष्ट हैं अर्थात राज्य द्वारा संचालित सेवाओं के लिए वितरण की बेहतर सुविधाएँ, निम्नतम आधार तक पहुँच और कार्यक्रम के लाभ ग्राहियों तथा ग्राहकों के साथ सीधा संपर्क भी। सहयोगात्मक परियोजनाओं में लागत लाभ अनुपात प्राय: बहुत अनुकूल होता है। गैर सरकारी संगठनों द्वारा जो नई अवधारणाएं तथा सिद्धांत प्रस्तुत किए जाए जिनका अभी तक परीक्षण न हुआ हो, उनकी जांच सरकार में नीति आयोजकों द्वारा सुनियोजित क्षेत्रीय अध्ययनों तथा प्रयोगों द्वारा की जा सकती है। समुदाय आधारित पुनर्वास और समेकित शिक्षाऐ से नए दृष्टिकोणों के उदाहरण है जो किसी समय गैर सरकारी संगठनों ने प्रस्तावित किए थे, और अब, सरकार द्वारा अधिकृत रूप से अपना लिए गए हैं। स्वैच्छिक संगठनों को नि:शक्त व्यक्तियों तथा उनके परिवारों के साथ काम करने का प्रचुर पत्यक्ष अनुभव होताहै। संयुक्त परियोजनाओं में पारस्परिक हित के लिए इस विशेषज्ञता का बहुत लाभ उठाया जा सकता है।

गैर सरकारी संगठन सरकारी सहायता वाली सहयोगात्मक परियोजनाओं को नीति आयोजना/नीति निर्माण तक और शोध सुविधाओं, विशेषज्ञता तथा नई प्रौद्योगिकीयों तक भी बढिया पहुँच के लिए एक सुखद अवसर के रूप में देखते हैं। गैर सरकारी संगठन क्षेत्र में अनेक अग्रणी व्यवसायी, पुनर्वास विशेषज्ञ तथा शिक्षक सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण मंत्रालय, नि:शक्तों के लिए राष्ट्रीय संस्थानों, भारतीय पुनर्वास परिषद् और योजना आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञ पैनलों, समितियों तथ विशेष समूहों में काम कर के नियमित रूप से सरकार की सहायता करते हैं। इन समितियों के सदस्यों की हैसियत से वे सरकार की नीतियों तथा निर्णयों पर सकारात्मक प्रभाव डालने की स्थिति में होते हैं। जब वे सरकार के साथ काम करते हैं तब वे सरकारी सेवाओं मे भीतर से सुधार करने में मदद करते हैं। प्रोद्रयोगिकियों तथा मॉडलों को प्रति कृतियन या आगे बढाने के लिए भेजने का दुर्लभ अवसर होता है।

गैर सरकारी संगठनों को आशंका होती है, कि सहयोगात्मक परियोजना में सरकारी नियंत्रण अधिक रहेगा। इससे उनका स्वरूप भी अधिक दफतरशाही बन सकता है जिससेलाभग्राहियों को हानी होगी।

गैर सरकारी संगठनों में यह भावना बन जातीहै कि उनमें स्वायत्तता का अभाव है। सहयोगात्मक परियोजनाओं में कई बार उनका काम केवल सेवा वितरण का रह जाता है और वह व्यापक भूमिका नहीं निभा पाते, जिसके लिए वे सक्षम है। साधन जुटाने या उप संविदा के इस दृष्टिकोण में यह खतरा रहता है कि गैर सरकारी संगठन अपनी सारी रूचि तथा प्रेरण शक्ति खो देंगे और इस बात की भी शंका रहती है कि उनकी उपलब्धियों का श्रेय सरकार ले लेगी।

कई बार गैर सरकारी संगठनों में यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि वे एक दूसरे से आगे बढने के लिए अनुचित प्रतिस्पर्धा करते हें1 एक दूसरे से सीखने का प्रयास नहीं करते। अंत:संगठनात्मक संचार प्राय: बहुत कम होता है। दुर्भाग्यवश, गैर सरकारी संगठन अपने काम के निधि जुटाने के पहलू में अधिक व्यस्त रहते हैं।

९.९ राष्ट्रीय एजेंसियों की भूमिका

राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा की व्यवस्था शिक्षा विभाग तथा उसकी एजेंसियों के माध्यम से की जाती है जो मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंग के रूप में काम करती है। मंत्रालय का अध्यक्ष केंद्रीय सरकार के मंत्रिमंडल का एक सदस्य होता है और शिक्षा विभाग का प्रभार एक राज्य मंत्री को दिया जाता है। मंत्रालय के भीतर, शिक्षा विभाग में अनेक प्रभाग हैं जो शैक्षिक विकास तथा नीति निर्माण के विभिन्न पहलुओं का काम देखते हैं। शिक्षा विभाग पर कुछ राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक संस्थाओं के प्रशासन और वित्त व्यवस्था का उत्तरदायित्व है जो केंद्रीय सरकार द्वारा स्थापित की गई है। वह विभिन्न स्तरों पर शिक्षा से संबधित कुछ कार्यक्रम भी बनाता और चलाता है। वे सांख्यिकीय तथा अन्य जानकारी के बारे में आवधिक प्रकाशन निकालते रहते है।

चार विभिन्न प्रकार की नि:शक्तताओं की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मुख्यत: चार राष्ट्रीय संस्थान हैं:

दृष्टि नि:शक्तता के लिए राष्ट्रीय संस्थान (एनआईवीएच, देहरादून)– इसकी स्थापना 1979 में की गई थी। इसमें निम्नलिखित गतिविधियॉं चलाई जाती हैं : (क) शिक्षा (ख) व्यावसायिक प्रशिक्षण (ग) जनशक्ति का विकास (घ) अनुसंधान तथा विकास (ड) संकट काप्रबंध, चिकित्सीय सहायता सहित (च) नियुक्ति तथा रोजगार (छ) पाठ्य सामग्री का उत्पादन और (ज) सहायक साधनों तथा उपकरणों का निर्माण ।

श्रवण नि:शक्तों के लिए अली यावर जंग संस्थान (एनआईएचएच, मुम्बई)– इसकी स्थापना 1983 में की गई थी। यह कल्याण मंत्रालय ,भारत सरकार द्वारा स्थापित 14 राष्ट्रीय संस्थानों में से एक है। इसके उद्देश्य हैं: जनशक्ति का विकास, अनुसंधान सेवाएॅं, सामग्री विकास, सूचना का प्रलेखन तथा सूचना का प्रसारण, प्रसार और विस्तार सेवाएूं। संस्थान दो स्नातक प्रशिक्षण कार्यक्रम, दो डिप्लोमा कार्यक्रम चलाता है। संस्थान ने नई दिल्ली, हैदराबाद तथा कलकत्ता में तीन क्षेत्रीय केंद्र भी शुरू किए हैं।

राष्ट्रीय विकलांग संस्थन(एनआईओएच, कलकत्ता) – यह चालन सम्बन्धी नि:शक्तता वालों के कल्याण के लिए है और 1976 में स्थापित किया गया था। यह जनशक्ति के विकास, अनुसंधान विशिष्ट सेवाओं, सहायक साधनों तथा उपकरणों के मानकीकरण, सूचना के प्रलेखन, राज्य सरकारों तथा गैर सरकारी संगठनों को परामर्श के लिए प्रमुख संस्थान है1 यहॉं भौतिक चिकित्सा तथा व्यावसायिक चिकित्सा में स्नातक स्तर के कार्यक्रम चलाए जाते हैं।

मानसिक मन्दता वालों के लिए राष्ट्रीय संस्थान (एनआईएमएच, सिकंदराबाद)- इसकी स्थापना 1984 में की गई थी। मानसिक मन्दता के क्षेत्र में यह शीघ्र निकाय है। इसके मुख्य उद्देश्य हैं : (क) देखभाल तथा पुनर्वासके लिए उपयुक्त मॉडलों का विकास करना (ख) जनशक्ति का विकास करना (ग) अनुसंधान, पाठ्यक्रम, आकलन तथा परामर्श।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्(एनसीईआरटी, नई दिल्ली) – एक स्वायत्त संगठन के रूप में इसकी स्थापना 1 सितंबर 1961 को की गई थी। यह विद्यालय शिक्षा से संबंधित सभी मामलों पर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय को परामर्श देती है।इसके लिए वित्त व्यवस्था शिक्षा विभाग द्रवारा की जाती है।

एन0सी0ई0आर0टी0 की घटक इकाई है:-

1. राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान (एनआईई) नई दिल्ली)

2. केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान(सीआईईटी),नई दिल्ली।

3. क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय (आरसीई)अजमेर,भोपाल, भुवनेश्वर और मैसूर।

9.10 प्रभावी समावेश के लिए आधारभूत घटक

बच्चे के घटक

अनुकूलन व्यवहार का तथा सामाजिक क्षमता का स्तर।

ज्ञानपरक योग्यता का सामान्य स्तर।

शैक्षिक कुशलताएँ।

समन्वयन के कार्यक्रम में शामिल होने की इच्छा ।

साथियों के घटक :

नियमित कक्षा के साथियों की मनोवृति।

नियमित कक्षा के छात्रों की विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के अनुकूल बनने की इच्छा।

अध्यापक तथा शिक्षात्मक घटक :

नियमित कक्षा के कार्यक्रमकी गुणवत्ता।

नियमित कक्षा के अध्यापक की नियमित कक्षा के कार्यक्रम के पहलुओं को नि:शक्तताओं वाले बच्चे की आवश्यकताओं के अनुकूल बनाने की इच्छा।

समन्वित कक्षा में शामिल नि:शक्तताओं वाले बच्चों की संख्या।

नियमित शिक्षा के अध्यापकों के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण की गुणता।

प्रशासनिक घटक :-

सफल समन्वयन के लिए कसौटियों का निर्धारण।

अध्यापकोंको दिए गए संसाधनों की गुणवत्ता।

पर्याप्त समर्थन सेवाओं और विशेषज्ञ व्यक्तियों की व्यवस्था।

कक्ष के अध्यापकों को दिए गए समर्थन का स्तर।

माता – पिता तथा समुदाय की मनोवृतियॉं :

नि:शक्तता वाले बच्चे के माता पिता की समन्वयन कार्यक्रम के प्रति मनोवृति।

नियमित कक्षा के छात्रों के माता पिताकी समन्वयन कार्यक्रमके प्रति मनोवृति।

समावेशी शिक्षा तर्कसंगत, उपयोगी, व्यावहारिक, शैक्षिक दृष्टि से सही है और इसे न्यूनतम लागत से निष्पादित किया जा सकता है। यह विलास की अपेक्षा आवश्यकता अधिक है।

9.11 सारांश

शैक्षिक प्रेरणा वाले घर का परिवेश बच्चे की अनुकूलन क्षमता के साथ जुडा होता है। शैक्षिक प्रेरणा वाले घर का परिवेश मूलत: इन बातों पर निर्भर करता है माता पिता के व्यवहार की गुणवत्ता तथा बच्चे को पालने के रीति रिवाज और सांस्कृतिक प्रेरणा वाला वातावरण तथ शैक्षिक प्रत्याशाऍं। माता पिता की भागीदारी से बच्चे को, माता पिता को, परिवार को और सारे समाज को लाभ होने की आशा है। हो सकता है कि माता पिता शैक्षिक निवेश उपलब्ध न करा पाऍं, फिर भी वें प्राग्विद्यालय दिनों के दौरान विद्यालय के लिए आधार तैयार कर सकते हैं। विशेष बच्चे को अपनी परिस्थितियों के साथ

प्रभावी ढंग से और आत्मविश्वास के साथ निपटने में मदद करने के लिए माता पिता को अपनी भूमिका निभानी चाहिए और कुशलताएँ विकसित करनी चाहिए।

नि:शक्त लोगों को समाज में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष भेदभाव का सामना करना पडता है।वे स्वस्थ लोगों जैसे ही इन्सान हैं और उन्हें सम्पूर्ण मानवाधिकार मिलने चाहिए। अपनी नि:शक्तता के कारण उन्हें भावनात्मक तथा मनोवैज्ञानिक परेशानी होती है। सहानुभूति और रचनात्मक सहायता के लिए समाज पर उनका एक विशेष आधिकार है। नि:शक्तों के मूलभूत अधिकारों की मान्यता मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा के अनुच्छेद 25 में निहित है जिसमें कहा गया है कि नि:शक्तता की स्थिति में हर किसी को सुरक्षा का अधिकार है।

9.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. पैतृक मनोवृत्तियां से आप क्या समझते हैं?

2. समावेशी शिक्षा में गैर सरकारी संगठन की भूमिका स्पष्ट कीजिये?

3. समावेशी शिक्षा में राष्ट्रीय एजेंसियों की भूमिका स्पष्ट कीजिये?